Government of Karnataka

साहित्य वैभव

प्रथम पी.यू.सी. हिन्दी पाठ्यपुस्तक

SAHITYA VAIBHAV

(I PUC Hindi: Detailed and Non-detailed Text)

Department of Pre University Education
Malleshwaram, Bengaluru - 12
www.pue.kar.nic.in

SAHITYA VAIBHAV

An anthology of Hindi Prose, Poetry and Stories compiled by the Text Book Committee constituted by the Directorate of PUE, Bangalore and prescribed as Detailed and Non-detailed text for the First Year Pre-University Course.

Revised Edition
May - 2014

© Directorate of Pre-University Education 2013.

All Rights Are Reserved

No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted, in any form or by any means, electronic, mechanical, photo copying, recording or otherwise without the prior permission of the publisher.

This book is sold subject to the condition that it shall not, by way of trade, be lent, resold, hired out or otherwise disposed of without the publisher's consent, in any form of binding or cover other than that in which it is published.

The correct price of this publication is the price printed on this page/cover page. Any revised price indicated by a rubber stamp or by a sticker or by any other means is incorrect and should be unacceptable.

Printed on 80 GSM Maplitho paper

The Karnataka Text Book Society ®
100 feet Ring Road, Banashankari
III Stage, BANGALORE - 560 085.

Publisher :
SRI VENKATESHWARA ENTERPRISES
#56/A, 9th Main, 1st Cross, Kaverinagar,
BSK II Stage, Banashanakari Industrial Area
Bangalore - 560 070.
Mobile : 98455 82152 / 94480 58802
Email : vinayaka1000@yahoo.com

EDITORIAL BOARD

CHAIRMAN

Dr. SANGAPPA N. SHIVAREDDI
Lecturer in Hindi,
S.M. Bhoomaraddi P.U. College,
Gajendragad - 582 114
Dist. : GADAG

CO-ORDINATOR

Dr. SANTOSH KUMAR MISRA
Lecturer in Hindi,
Govt. Pre-University College for Boys',
18th Cross, Malleshwaram, Bangalore - 560 012

MEMBERS

1. **MAHER AFZAL M. JAHAGIRDAR**
Lecturer in Hindi,
SECAB P.U. College for Boys',
Behind Taj Bowdi,
Bijapur - 586 101

2. **Dr. SURESH MARUTIRAO MULEY**
Lecturer in Hindi,
Vidyaranya P.U. College,
Dharwad - 580 001

3. **SATYANARAYANA N.**
Lecturer in Hindi,
Sri. Kongadiyappa P.U. College,
Doddaballapur - 561 203
Bangalore Rural District

MEMBERS

4. **Dr. NAYAK RUPASINGH G.**
Lecturer in Hindi,
Besant P.U. College,
Kodial Bail, Mangalore - 3

5. **G.M. GONDA**
Lecturer in Hindi,
Bhandarkar's P.U. College,
Kundapur,
Udupi District

6. **EKANATH N. MORE**
Lecturer in Hindi,
J.A. Composite P.U. College,
Athani - 591 304,
Dist. Belgaum

7. **PRAKASH GAIDHANKAR**
Lecturer in Hindi,
Hamdard P.U. College,
Raichur

8. **M.R. RATHOD**
Lecturer in Hindi,
Govt. P.U. College,
Basavakalyan,
Dist. Bidar

9. **R.B. JAGADALE**
Lecturer in Hindi,
Govt. P.U. College,
Kamalapur,
Tq. & Dist. Gulbarga

REVIEW COMMITTEE

1. **Dr. MITHALI BHATTACHARJEE**
Professor, Department of Hindi,
Bangalore University,
Bangalore - 560 056

2. **Dr. MYTHILI P. RAO**
Dean - Languages,
Jain University,
No. 34, 1st Cross, J.C. Road,
Bangalore - 560 027

प्राक्कथन

परिवर्तन ही जीवन का नियम है। शिक्षा के स्तर पर भी उत्तरोत्तर नए-नए बदलाव देखने को मिल रहे हैं। आज पठन-पाठन कक्षा की चारदीवारी तक ही सीमित नहीं है। ज्ञान प्राप्त करने के अनेक साधन उपलब्ध हैं। हाईस्कूल की शिक्षा पूरी करके विद्यार्थी पी.यू.सी. में कदम रखते हैं। स्कूल में वे प्रथम, द्वितीय अथवा तृतीय भाषा के रूप में हिन्दी का अध्ययन करते हैं। वहीं दूसरी ओर कुछ विद्यार्थी सी.बी.एस.ई. अथवा आई.सी.एस.ई. बोर्ड से हिन्दी का अध्ययन करके पी.यू.सी. में आते हैं। इन सबको ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत पाठ्यक्रम और उस पर आधारित पाठ्यपुस्तक की रचना का दायित्व समिति को सौंपा गया है।

भाषा और साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। समिति ने भाषा और साहित्य को समान रूप से महत्व दिया है ताकि विद्यार्थी दोनों पर समान रूप से अधिकार प्राप्त करते हुए साहित्य का रसास्वादन कर सकें।

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक के तीन भाग हैं – **गद्य भाग, पद्य भाग** (मध्ययुगीन काव्य तथा आधुनिक कविता) एवं **अपठित भाग** के अंतर्गत कहानियाँ।

इस पाठ्यपुस्तक की विशेषताएँ निम्नांकित हैं :

१) गद्य भाग के अंतर्गत सभी विधाओं – कहानी, जीवनी, निबंध, रेखाचित्र, एकांकी आदि की जानकारी विद्यार्थियों को देने हेतु सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक एवं बौद्धिक स्तर को बढ़ाने वाले पाठों को संग्रहीत किया गया है। पद्य भाग में मध्ययुगीन काव्य – कबीरदास, तुलसीदास, मीराबाई, रसखान की रचनाओं के साथ पहली बार बारहवीं शताब्दी के अल्लमप्रभु, बसवेश्वर तथा अक्कमहादेवी के वचनों को प्रथम वर्ष पी.यू.सी. (हिन्दी) पाठ्यपुस्तक में सम्मिलित किया गया है। आधुनिक कविता वैविध्यपूर्ण है। इसमें अहिन्दी भाषी रचनाकारों की रचनाओं को भी संग्रहीत किया गया है।

२) कहानी, लेख, निबंध, यात्रा-वृत्तांत, एकांकी आदि तथा कविताओं के चयन में विशेष रूप से ध्यान रखा गया है कि पाठ और कविताएँ सरल, सरस और ज्ञानवर्धक हों तथा विद्यार्थियों को समग्र जानकारी मिल सके। विषय की विविधता के साथ ही छात्र-छात्राओं के व्यक्तित्व विकास पर भी बल दिया गया है।

३) वर्तमान साहित्यिक परिदृश्य में कहानियों के अंतर्गत नई विधा और नए कहानीकारों की कथाओं को भी यथोचित स्थान दिया गया है।

४) हिन्दी पाठ्यपुस्तक के साथ ही 'अभ्यास पुस्तिका' की भी अलग से रचना की गई है जिसमें गद्य, पद्य एवं अपठित भाग से चुनिंदा अभ्यास प्रश्नों को शामिल किया गया है। चतुर्थ सोपान में **व्याकरण तथा रचना भाग** के अंतर्गत पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषयों पर अभ्यास कार्य दिया गया है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों की लेखन प्रवृत्ति को विकसित करना है।

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक में संकलित पाठों के चयन में अनेक शिक्षाविदों, अनुभवी प्राध्यापकों तथा भाषाविदों का सहयोग मिला है तदर्थ हम उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं। उपाधि-पूर्व शिक्षा विभाग के निदेशक, संयुक्त निदेशक तथा अन्य पदाधिकारियों के प्रति हम आभारी हैं जिन्होंने समय-समय पर न सिर्फ हमारा मार्गदर्शन किया बल्कि निश्चित समयावधि में पाठ्यपुस्तक की रचना हेतु भरपूर सहयोग दिया।

संपादक मंडल

अनुक्रमणिका

प्रथम सोपान – गद्य भाग

	पाठ	लेखक / कवि	पृष्ठ संख्या
१.	बड़े घर की बेटी	प्रेमचंद	१
२.	युवाओं से	स्वामी विवेकानंद	१४
३.	निन्दा रस	हरिशंकर परसाई	२४
४.	बिन्दा	महादेवी वर्मा	३१
५.	बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर	शान्ति स्वरूप बौद्ध	४१
६.	दिल का दौरा और एनजाइना	डॉ. यतीश अग्रवाल	५१
७.	मेरी बद्रीनाथ यात्रा	विष्णु प्रभाकर	६०
८.	नालायक	विवेकी राय	७०
९.	राष्ट्र का स्वरूप	वासुदेवशरण अग्रवाल	७८
१०.	रिहर्सल	ओमप्रकाश 'आदित्य'	८६

द्वितीय सोपान – पद्य भाग

(अ) मध्ययुगीन काव्य

१.	कबीरदास के दोहे	९९
२.	तुलसीदास के दोहे	१०२
३.	मीराबाई के पद	१०५
४.	शरण वचनामृत – अल्लमप्रभु, बसवेश्वर, अक्कमहादेवी	१०८
५.	रीतिकालीन काव्य – रसखान के सवैये	११२

पाठ		लेखक / कवि	पृष्ठ संख्या

(आ) आधुनिक कविता

१.	कुटिया में राजभवन	मैथिलीशरण गुप्त	११५
२.	तोड़ती पत्थर	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'	११८
३.	उल्लास	सुभद्राकुमारी चौहान	१२१
४.	तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए	हरिवंशराय 'बच्चन'	१२४
५.	प्रतिभा का मूल बिन्दु	प्रभाकर माचवे	१२७
६.	तुम आओ मन के मुग्ध मीत	सरगु कृष्णमूर्ति	१२९
७.	मत घबराना	रामनिवास 'मानव'	१३२
८.	अभिनंदनीय नारी	जयन्ती प्रसाद नौटियाल	१३५

तृतीय सोपान – अपठित भाग (कहानियाँ)

१.	मधुआ	जयशंकर प्रसाद	१३९
२.	श्मशान	मन्नू भंडारी	१४७
३.	खून का रिश्ता	भीष्म साहनी	१५५
४.	शीत लहर	जयप्रकाश कर्दम	१७२
५.	सिलिया	सुशीला टाकभौरे	१८२
६.	दोपहर का भोजन	अमरकांत	१९२

प्रथम सोपान

गद्य भाग

१. बड़े घर की बेटी

— प्रेमचन्द

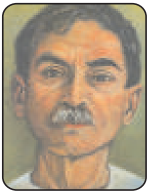

लेखक परिचय :

उपन्यास सम्राट और कहानीकार मुंशी प्रेमचंद का जन्म काशी के निकट लमही नामक गाँव में सन् १८८० में हुआ था। आपके पिता का नाम अजायबराय तथा माता का नाम आनंदीदेवी था। आपका जीवन बहुत संघर्षपूर्ण रहा। आपने अनेक उपन्यास लिखे जिनमें 'गोदान', 'गबन', 'कर्म भूमि', 'सेवासदन', 'रंगभूमि' तथा 'निर्मला' आदि बहुत ही प्रसिद्ध हैं। आपने तीन सौ से अधिक कहानियाँ भी लिखीं, जो मानसरोवर के आठ भागों में संकलित हैं। आपकी रचनाओं में मानव जीवन एवं भारत के गाँवों की दशा का मार्मिक चित्रण हुआ है। ८ अक्टूबर सन् १९३६ को आपका स्वर्गवास हुआ।

प्रस्तुत कहानी 'बड़े घर की बेटी' प्रेमचन्द की श्रेष्ठ कहानियों में से एक है। सामाजिक जीवन के सूक्ष्म चित्रकार मुंशी प्रेमचन्द ने इस कहानी में मध्यम वर्ग के गृहस्थ जीवन की एक ऐसी घटना को चित्रित किया है, जो हमारे घरों में आये दिन घटती रहती है। आनंदी बड़े घर की बेटी है। सम्पन्न घर की सुविधाओं का अभ्यस्थ होने पर भी उसने अपने आपको श्रीकंठ के रूढ़िग्रस्त तथा अभावों से पूर्ण घर के अनुकूल बना लिया।

एक दिन श्रीकंठ के छोटे भाई लालबिहारी सिंह के अभद्र व्यवहार के कारण आनंदी को क्रोध आ गया। झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि दोनों भाइयों के अटूट-प्रेम की कड़ियाँ शिथिल हो गईं और लालबिहारी घर छोड़कर जाने लगा। घर को बिखरता देख आनन्दी की सात्विक वृत्तियाँ जाग उठीं। उसने लालबिहारी को रोक लिया और बिगड़ता हुआ काम बना लिया। उच्च कुल की आदर्श महिलाएँ कष्ट सहकर अपमानित होकर भी मर्यादा नष्ट नहीं होने देतीं। यही इस कहानी का सन्देश है। पारिवारिक सदस्यों के आपसी संबंधों के महत्व को उजागर करने के उद्देश्य से प्रस्तुत पाठ का चयन किया गया है।

बेनीमाधव सिंह गौरीपुर गाँव के जमींदार और नम्बरदार थे। उनके पितामह किसी समय बड़े धन-धान्य संपन्न थे। गाँव का पक्का तालाब और मंदिर जिनकी अब मरम्मत भी मुश्किल थी, उन्हीं के कीर्ति-स्तंभ थे। कहते हैं, इस दरवाजे पर हाथी झूमता था, अब उसकी जगह एक बूढ़ी भैंस थी, जिसके शरीर में अस्थि-पंजर के सिवा और कुछ शेष न रहा था, पर दूध शायद बहुत देती थी; क्योंकि एक न एक आदमी हाँड़ी लिए उसके सिर पर सवार ही रहता था। बेनीमाधव सिंह अपनी आधी से अधिक संपत्ति वकीलों को भेंट कर चुके थे। उनकी वर्तमान आय एक हजार रुपये वार्षिक से अधिक न थी। ठाकुर साहब के दो बेटे थे। बड़े का नाम श्रीकंठ सिंह था। उसने बहुत दिनों के परिश्रम और उद्योग के बाद बी.ए. की डिग्री प्राप्त की थी। अब एक दफ्तर में नौकर था। छोटा लड़का लालबिहारी सिंह दोहरे बदन का, सजीला जवान था। भरा हुआ मुखड़ा, चौड़ी छाती। भैंस का दो सेर ताजा दूध वह उठ कर सबेरे पीता था। श्रीकंठ सिंह की दशा बिलकुल विपरीत थी। इन नेत्रप्रिय गुणों को उन्होंने बी.ए. — इन्हीं दो अक्षरों पर न्योछावर कर दिया था। इन दो अक्षरों ने उनके शरीर को निर्बल और चेहरे को कांतिहीन बना दिया था। इसी से वैद्यक ग्रंथों पर उनका विशेष प्रेम था। आयुर्वेदिक औषधियों पर उनका अधिक विश्वास था। शाम-सबेरे से उनके कमरे से प्राय: खरल की सुरीली कर्णमधुर ध्वनि सुनायी दिया करती थी। लाहौर और कलकत्ते के वैद्यों से बड़ी लिखा-पढ़ी रहती थी।

श्रीकंठ इस अँगरेजी डिग्री के अधिपति होने पर भी अँगरेजी सामाजिक प्रथाओं के विशेष प्रेमी न थे; बल्कि वह बहुधा बड़े जोर से उसकी निंदा और तिरस्कार किया करते थे। इससे गाँव में उनका बड़ा सम्मान था। दशहरे के दिनों में वह बड़े उत्साह से रामलीला में सम्मिलित होते और स्वयं किसी न किसी पात्र का पार्ट लेते थे। गौरीपुर में रामलीला के वही जन्मदाता थे। प्राचीन हिंदू सभ्यता का गुणगान उनकी धार्मिकता का प्रधान अंग था। सम्मिलित कुटुम्ब के तो वह एकमात्र उपासक थे। आजकल स्त्रियों को कुटुम्ब में मिल-जुल कर रहने की जो अरुचि होती है, उसे वह जाति और देश दोनों के लिए हानिकारक समझते थे। यही कारण था कि गाँव की ललनाएँ उनकी निंदक थीं। कोई-कोई तो उन्हें अपना शत्रु समझने में भी संकोच न करती थीं। स्वयं उनकी पत्नी को ही इस विषय में

उनसे विरोध था। यह इसलिए नहीं कि उसे अपने सास-ससुर, देवर या जेठ आदि से घृणा थी, बल्कि उसका विचार था कि यदि बहुत कुछ सहने और तरह देने पर भी परिवार के साथ निर्वाह न हो सके, तो आये-दिन की कलह से जीवन को नष्ट करने की अपेक्षा यही उत्तम है कि अपनी खिचड़ी अलग पकायी जाय।

आनंदी एक बड़े उच्च कुल की लड़की थी। उसके बाप एक छोटी-सी रियासत के ताल्लुकेदार थे। विशाल भवन, एक हाथी, तीन कुत्ते, बाज, बहरी-शिकरे, झाड़-फानूस, आनरेरी मजिस्ट्रेटी और ऋण, जो एक प्रतिष्ठित ताल्लुकेदार के भोग्य पदार्थ हैं, यहाँ सभी विद्यमान थे। नाम था भूपसिंह। बड़े उदार-चित्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे; पर दुर्भाग्य से लड़का एक भी न था। सात लड़कियाँ हुईं और दैवयोग से सब की सब जीवित रहीं। पहली उमंग में तो उन्होंने तीन ब्याह दिल खोल कर किये; पर पंद्रह-बीस हजार रुपयों का कर्ज सिर पर हो गया, तो आँखें खुलीं, हाथ समेट लिया; आनंदी चौथी लड़की थी। वह अपनी सब बहनों से अधिक रूपवती और गुणवती थी। इससे ठाकुर भूपसिंह उसे बहुत प्यार करते थे। सुन्दर संतान को कदाचित् उसके माता-पिता भी अधिक चाहते हैं। ठाकुर साहब बड़े धर्म-संकट में थे कि इसका विवाह कहाँ करें? न तो यही चाहते थे कि ऋण का बोझ बढ़े और न यही स्वीकार था कि उसे अपने को भाग्यहीन समझना पड़े। एक दिन श्रीकंठ उनके पास किसी चंदे का रुपया माँगने आये। शायद नागरी-प्रचार का चंदा था। भूपसिंह उनके स्वभाव पर रीझ गये और धूमधाम से श्रीकंठ सिंह का आनंदी के साथ ब्याह हो गया।

आनंदी अपने नये घर में आयी, तो यहाँ का रंग-ढंग कुछ और ही देखा। जिस टीम-टाम की उसे बचपन से ही आदत पड़ी हुई थी, वह यहाँ नाम-मात्र को भी न थी। हाथी-घोड़ों का तो कहना ही क्या, कोई सजी हुई सुंदर बहली तक न थी। रेशमी स्लीपर साथ लायी थी; पर यहाँ बाग कहाँ। मकान में खिड़कियाँ तक न थीं, न जमीन पर फर्श, न दीवार पर तस्वीरें। यह सीधा-सादा देहाती गृहस्थ का मकान था; किन्तु आनंदी ने थोड़े ही दिनों में अपने को इस नयी अवस्था के ऐसा अनुकूल बना लिया, मानो उसने विलास के सामान कभी देखे ही न थे।

२

एक दिन दोपहर के समय लालबिहारी सिंह दो चिड़िया लिये हुए आया और भावज से बोला – जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है। आनंदी भोजन बना कर उसकी राह देख रही थी। अब वह नया व्यंजन बनाने बैठी। हाँडी में देखा, तो घी पाव-भर से अधिक न था। बड़े घर की बेटी, किफायत क्या जाने। उसने सब घी माँस में डाल दिया। लालबिहारी खाने बैठा, तो दाल में घी न था, बोला – दाल में घी क्यों नहीं छोड़ा?

आनंदी ने कहा – घी सब माँस में पड़ गया। लालबिहारी जोर से बोला – अभी परसों घी आया है। इतना जल्दी उठ गया?

आनंदी ने उत्तर दिया – आज तो कुल पाव भर रहा होगा। वह सब मैंने माँस में डाल दिया।

जिस तरह सूखी लकड़ी जल्दी से जल उठती है उसी तरह क्षुधा से बावला मनुष्य जरा-जरा सी बात पर तिनक जाता है। लालबिहारी को भावज की यह ढिठाई बहुत बुरी मालुम हुई, तिनक कर बोला – मैके में तो चाहे घी की नदी बहती हो!

स्त्री गालियाँ सह लेती हैं, मार भी सह लेती हैं, पर मैके की निंदा उनसे नहीं सही जाती। आनंदी मुँह फेर कर बोली – हाथी मरा भी, तो नौ लाख का। वहाँ इतना घी नित्य नाई-कहार खा जाते हैं।

लालबिहारी जल गया, थाली उठाकर पलट दी और बोला – जी चाहता है, जीभ पकड़ कर खींच लूँ।

आनंदी को भी क्रोध आ गया। मुँह लाल हो गया, बोली – वह होते तो आज इसका मजा चखाते।

अब अपढ़, उजड्ड ठाकुर से न रहा गया। उसकी स्त्री एक साधारण जमींदार की बेटी थी। जब जी चाहता, उस पर हाथ साफ कर लिया करता था। खड़ाऊँ उठाकर आनंदी की ओर जोर से फेंकी और बोला – जिसके गुमान पर भूली हुई हो, उसे भी देखूँगा और तुम्हें भी।

आनंदी ने हाथ से खड़ाऊँ रोकी, सिर बच गया; पर उँगली में बड़ी चोट आयी। क्रोध के मारे हवा से हिलते पत्ते की भाँति काँपती हुई अपने कमरे में आकर खड़ी हो गयी। स्त्री का बल और साहस, मान और

मर्यादा पति तक है। उसे अपने पति के ही बल और पुरुषत्व का घमंड होता है। आनंदी खून का घूँट पीकर रह गयी।

३

श्रीकंठ सिंह शनिवार को घर आया करते थे। बृहस्पति को यह घटना हुई थी। दो दिन तक आनंदी कोप-भवन में रही। न कुछ खाया न पिया, उनकी बाट देखती रही। अंत में शनिवार को वह नियमानुकूल संध्या समय घर आये और बाहर बैठ कर कुछ इधर-उधर की बातें, कुछ देश-काल संबंधी समाचार तथा कुछ नये मुकदमों आदि की चर्चा करने लगे। यह वार्तालाप दस बजे रात तक होता रहा। गाँव के भद्र पुरुषों को इन बातों में ऐसा आनंद मिलता था कि खाने-पीने की भी सुधि न रहती थी। श्रीकंठ को पिंड छुड़ाना मुश्किल हो जाता था। ये दो-तीन घंटे आनंदी ने बड़े कष्ट से काटे! किसी तरह भोजन का समय आया। पंचायत उठी। एकांत हुआ, तो लालबिहारी ने कहा – भैया, आप जरा भाभी को समझा दीजिएगा कि मुँह सँभाल कर बातचीत किया करें, नहीं तो एक दिन अनर्थ हो जायेगा।

बेनीमाधव सिंह ने बेटे की ओर साक्षी दी – हाँ, बहू-बेटियों का यह स्वभाव अच्छा नहीं कि मर्दों के मुँह लगें।

लालबिहारी – वह बड़े घर की बेटी है, तो हम भी कोई कुर्मी-कहार नहीं हैं। श्रीकंठ ने चिंतित स्वर में पूछा – आखिर बात क्या हुई?

लालबिहारी ने कहा – कुछ भी नहीं, यों ही आप ही आप उलझ पड़ीं। मैके के सामने हम लोगों को कुछ समझती ही नहीं।

श्रीकंठ खा-पीकर आनंदी के पास गये। वह भरी बैठी थी। यह हजरत भी कुछ तीखे थे। आनंदी ने पूछा – चित्त तो प्रसन्न है।

श्रीकंठ बोले – बहुत प्रसन्न है; पर तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है?

आनंदी की त्योरियों पर बल पड़ गये, झुंझलाहट के मारे बदन में ज्वाला-सी दहक उठी। बोली – जिसने तुमसे यह आग लगायी है, उसे पाऊँ, मुँह झुलस दूँ।

श्रीकंठ – इतनी गरम क्यों होती हो, बात तो कहो।

आनंदी – क्या कहूँ, यह मेरे भाग्य का फेर है! नहीं तो गँवार छोकरा, जिसको चपरासगिरी करने का भी शऊर नहीं, मुझे खड़ाऊँ से मार कर यों न अकड़ता।

श्रीकंठ – सब हाल साफ-साफ कहो, तो मालूम हो। मुझे तो कुछ पता नहीं।

आनंदी – परसों तुम्हारे लाड़ले भाई ने मुझसे माँस पकाने को कहा। घी हाँडी में पाव-भर से अधिक न था। वह सब मैंने माँस में डाल दिया। जब खाने बैठा तो कहने लगा – दाल में घी क्यों नहीं है। बस, इसी पर मेरे मैके को बुरा-भला कहने लगा – मुझसे न रहा गया। मैंने कहा कि वहाँ इतना घी तो नाई-कहार खा जाते हैं और किसी को जान भी नहीं पड़ता। बस इतनी सी बात पर इस अन्यायी ने मुझ पर खड़ाऊँ फेंक मारी। यदि हाथ से न रोक लूँ, तो सिर फट जाय। उसी से पूछो, मैंने जो कुछ कहा है, वह सच है या झूठ।

श्रीकंठ की आँखें लाल हो गयीं। बोले – यहाँ तक हो गया, इस छोकरे का यह साहस !

आनंदी स्त्रियों के स्वभावानुसार रोने लगी; क्योंकि आँसू उनकी पलकों पर रहते हैं। श्रीकंठ बड़े धैर्यवान और शांत पुरुष थे। उन्हें कदाचित् ही कभी क्रोध आता था; स्त्रियों के आँसू पुरुष की क्रोधाग्नि भड़काने में तेल का काम देते हैं। रात भर करवटें बदलते रहे। उद्विग्नता के कारण पलक तक नहीं झपकी। प्रात:काल अपने बाप के पास जाकर बोले – दादा, अब इस घर में मेरा निबाह न होगा।

इस तरह की विद्रोह-पूर्ण बातें कहने पर श्रीकंठ ने कितनी ही बार अपने कई मित्रों को आड़े हाथों लिया था, परन्तु दुर्भाग्य, आज उन्हें स्वयं वे ही बातें अपने मुँह से कहनी पड़ी ! दूसरों को उपदेश देना भी कितना सहज है!

बेनीमाधव सिंह घबरा उठे और बोले – क्यों?

श्रीकंठ – इसलिए कि मुझे भी अपनी मान-प्रतिष्ठा का कुछ विचार है। आपके घर में अब अन्याय और हठ का प्रकोप हो रहा है। जिनको बड़ों का आदर-सम्मान करना चाहिए, वे उनके सिर चढ़ते हैं। मैं दूसरे का नौकर ठहरा घर पर रहता नहीं। यहाँ मेरे पीछे स्त्रियों पर खड़ाऊँ और जूतों की बौछारें होती हैं। कड़ी बात तक चिन्ता नहीं। कोई एक की

दो कह ले, वहाँ तक मैं सह सकता हूँ किन्तु यह कदापि नहीं हो सकता कि मेरे ऊपर लात-घूँसे पड़ें और मैं दम न मारूँ।

बेनीमाधव सिंह कुछ जवाब न दे सके। श्रीकंठ सदैव उनका आदर करते थे। उनके ऐसे तेवर देख कर बूढ़ा ठाकुर अवाक् रह गया। केवल इतना ही बोला – बेटा, तुम बुद्धिमान होकर ऐसी बातें करते हो? स्त्रियाँ इस तरह घर का नाश कर देती हैं। उनको बहुत सिर चढ़ाना अच्छा नहीं।

श्रीकंठ – इतना मैं जानता हूँ, आपके आशीर्वाद से ऐसा मूर्ख नहीं हूँ। आप स्वयं जानते हैं कि मेरे ही समझाने-बुझाने से इस गाँव में कई घर सँभल गये, पर जिस स्त्री की मान-प्रतिष्ठा का ईश्वर के दरबार में उत्तरदाता हूँ, उसके प्रति ऐसा घोर अन्याय और पशुवत् व्यवहार मुझे असह्य है। आप सच मानिए, मेरे लिए यही कुछ कम नहीं है कि लालबिहारी को कुछ दंड नहीं देता।

अब बेनीमाधव सिंह भी गरमाये। ऐसी बातें और न सुन सके। बोले – लालबिहारी तुम्हारा भाई है। उससे जब कभी भूल-चूक हो, उसके कान पकड़ो लेकिन .....

श्रीकंठ – लालबिहारी को मैं अब अपना भाई नहीं समझता।

बेनीमाधव सिंह – स्त्री के पीछे?

श्रीकंठ – जी नहीं, उनकी क्रूरता और अविवेक के कारण।

दोनों कुछ देर चुप रहे। ठाकुर साहब लड़के का क्रोध शांत करना चाहते थे, लेकिन यह नहीं स्वीकार करना चाहते थे कि लालबिहारी ने कोई अनुचित काम किया है। इसी बीच में गाँव के और कई सज्जन हुक्के-चिलम के बहाने वहाँ आ बैठे। कई स्त्रियों ने जब यह सुना कि श्रीकंठ पत्नी के पीछे पिता से लड़ने को तैयार है, तो उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। दोनों पक्षों की मधुर वाणियाँ सुनने के लिए उनकी आत्माएँ तिलमिलाने लगीं। गाँव में कुछ ऐसे कुटिल मनुष्य भी थे, जो इस कुल की नीतिपूर्ण गति पर मन ही मन जलते थे। वे कहा करते थे – श्रीकंठ अपने बाप से दबता है, इसीलिए वह दब्बू है। उसने विद्या पढ़ी, इसलिए वह किताबों का कीड़ा है। बेनीमाधव सिंह उनकी सलाह के बिना कोई काम नहीं करते, यह उनकी मूर्खता है। इन महानुभावों की शुभकामनाएँ आज पूरी होती दिखायी दीं। कोई हुक्का पीने के बहाने और कोई लगान की रसीद दिखाने आकर बैठ गया।

बेनीमाधव सिंह पुराने आदमी थे। इन भावों को ताड़ गये। उन्होंने निश्चय किया चाहे कुछ ही क्यों न हो, इन द्रोहियों को ताली बजाने का अवसर न दूँगा। तुरंत कोमल शब्दों में बोले – बेटा, मैं तुमसे बाहर नहीं हूँ। तुम्हारा जो जी चाहे करो, अब तो लड़के से अपराध हो गया।

इलाहाबाद का अनुभव-रहित झल्लाया हुआ ग्रेजुएट इस बात को न समझ सका। उसे डिबेटिंग-क्लब में अपनी बात पर अड़ने की आदत थी, इन हथकंडों की उसे क्या खबर? बाप ने जिस मतलब से बात पलटी थी, वह उसकी समझ में न आया। बोला – लालबिहारी के साथ अब इस घर में नहीं रह सकता।

बेनीमाधव – बेटा, बुद्धिमान लोग मूर्खों की बात पर ध्यान नहीं देते। वह बेसमझ लड़का है। उससे जो कुछ भूल हुई, उसे तुम बड़े होकर क्षमा करो।

श्रीकंठ – उसकी इस दुष्टता को मैं कदापि नहीं सह सकता। या तो वही घर में रहेगा या मैं ही। आपको यदि वह अधिक प्यारा है, तो मुझे विदा कीजिए, मैं अपना भार आप सँभाल लूँगा। यदि मुझे रखना चाहते हैं तो उससे कहिए, जहाँ चाहे चला जाय। बस यह मेरा अंतिम निश्चय है।

लालबिहारी सिंह दरवाजे की चौखट पर चुपचाप खड़ा बड़े भाई की बातें सुन रहा था। वह उनका बहुत आदर करता था। उसे कभी इतना साहस न हुआ था कि श्रीकंठ के सामने चारपाई पर बैठ जाय, हुक्का पी ले या पान खा ले। बाप का भी वह इतना मान न करता था। श्रीकंठ का भी उस पर हार्दिक स्नेह था। अपने होश में उन्होंने कभी उसे घुड़का तक न था। जब वह इलाहाबाद से आते, तो उसके लिए कोई न कोई वस्तु अवश्य लाते। मुगदर की जोड़ी उन्होंने ही बनवा दी थी। पिछले साल जब उसने अपने से डयौढ़े जवान को नागपंचमी के दिन दंगल में पछाड़ दिया, तो उन्होंने पुलकित होकर अखाड़े में ही जाकर उसे गले से लगा लिया था, पाँच रुपये के पैसे लुटाये थे। ऐसे भाई के मुँह से आज ऐसी हृदय-विदारक बात सुन कर लालबिहारी को बड़ी ग्लानि हुई। वह फूट-फूट कर रोने लगा। इसमें संदेह नहीं कि अपने किये पर पछता रहा था। भाई के आने से एक दिन पहले से उसकी छाती धड़कती थी कि देखूँ भैया क्या कहते हैं। मैं उनके सम्मुख कैसे जाऊँगा, उनसे कैसे बोलूँगा, मेरी आँखें उनके सामने कैसे उठेंगी। उसने समझा था कि भैया मुझे बुला कर

समझा देंगे। इस आशा के विपरीत आज उसने उन्हें निर्दयता की मूर्ति बने हुए पाया। वह मूर्ख था। परन्तु उसका मन कहता था कि भैया मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं। यदि श्रीकंठ उसे अकेले में बुला कर दो-चार बातें कह देते; इतना ही नहीं दो-चार तमाचे भी लगा देते तो कदाचित् उसे इतना दु:ख न होता; पर भाई का यह कहना कि अब मैं इसकी सूरत नहीं देखना चाहता, लालबिहारी से सहा न गया। वह रोता हुआ घर आया। कोठरी में जाकर कपड़े पहने, आँखें पोंछी, जिसमें कोई यह न समझे कि रोता था। तब आनंदी के द्वार पर आकर बोला – भाभी, भैया ने निश्चय किया है कि वह मेरे साथ घर में न रहेंगे। अब वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते, इसलिए अब मैं जाता हूँ। उन्हें फिर मुँह न दिखाऊँगा! मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, उसे क्षमा करना।

यह कहते-कहते लालबिहारी का गला भर आया।

४

जिस समय लालबिहारी सिंह सिर झुकाये आनंदी के द्वार पर खड़ा था, उसी समय श्रीकंठ सिंह भी आँखें लाल किये बाहर से आये। भाई को खड़ा देखा, तो घृणा से आँखें फेर ली और कतरा कर निकल गये। मानो उसकी परछाहीं से दूर भागते हों।

आनंदी ने लालबिहारी की शिकायत तो की थी; लेकिन अब मन में पछता रही थी। वह स्वभाव से ही दयावती थी। उसे इसका तनिक भी ध्यान नहीं था कि बात इतनी बढ़ जायेगी। वह मन में अपने पति पर झुँझला रही थी कि यह इतने गरम क्यों होते हैं। उस पर यह भय भी लगा हुआ था कि कहीं मुझसे इलाहाबाद चलने को कहें, तो कैसे क्या करूँगी। इस बीच में जब उसने लालबिहारी को दरवाजे पर खड़े यह कहते सुना कि अब मैं जाता हूँ, मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, क्षमा करना, तो उसका रहा-सहा क्रोध भी पानी हो गया। वह रोने लगी। मन का मैल धोने के लिए नयन-जल से उपयुक्त और कोई वस्तु नहीं है।

श्रीकंठ को देख कर आनंदी ने कहा – लाला बाहर खड़े बहुत रो रहे हैं।

श्रीकंठ – तो मैं क्या करूँ?

आनंदी – भीतर बुला लो। मेरी जीभ में आग लगे! मैंने कहाँ से यह झगड़ा उठाया।

श्रीकंठ – मैं न बुलाऊँगा।

आनंदी – पछताओगे। उन्हें बहुत ग्लानि हो गयी है, ऐसा न हो, कहीं चल दें।

श्रीकंठ न उठे। इतने में लालबिहारी ने फिर कहा – भाभी, भैया से मेरा प्रणाम कह दो। वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते; इसलिए मैं भी अपना मुँह उन्हें न दिखाऊँगा।

लालबिहारी इतना कह कर लौट पड़ा और शीघ्रता से दरवाजे की ओर बढ़ा। अंत में आनंदी कमरे से निकली और उसका हाथ पकड़ लिया। लालबिहारी ने पीछे फिर के देखा और आँखों में आँसू भरे बोला – मुझे जाने दो।

आनंदी – कहाँ जाते हो?

लालबिहारी – जहाँ कोई मेरा मुँह न देखे।

आनंदी – मैं न जाने दूँगी?

लालबिहारी – मैं तुम लोगों के साथ रहने योग्य नहीं हूँ।

आनंदी – तुम्हें मेरी सौगंध, अब एक पग भी आगे न बढ़ाना।

लालबिहारी – जब तक मुझे यह न मालूम हो जाय कि भैया का मन मेरी तरफ से साफ हो गया, तब तक मैं इस घर में कदापि न रहूँगा।

आनंदी –मैं ईश्वर को साक्षी देकर कहती हूँ कि तुम्हारी ओर से मेरे मन में तनिक भी मैल नहीं है।

अब श्रीकंठ का हृदय भी पिघला। उन्होंने बाहर आकर लालबिहारी को गले से लगा लिया। दोनों भाई खूब फूट-फूट कर रोये। लालबिहारी ने सिसकते हुए कहा – भैया, अब कभी मत कहना कि तुम्हारा मुँह न देखूँगा। इसके सिवा आप जो दंड देंगे, मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा।

श्रीकंठ ने काँपते हुए स्वर से कहा – लल्लू! इन बातों को बिलकुल भूल जाओ। ईश्वर चाहेगा, तो फिर ऐसा अवसर न आवेगा।

बेनीमाधव सिंह बाहर से आ रहे थे। दोनों भाइयों को गले मिलते देख कर आनंद से पुलकित हो गये। बोल उठे – बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिगड़ता हुआ काम बना लेती हैं।

गाँव में जिसने यह वृत्तांत सुना, उसी ने इन शब्दों में आनंदी की उदारता को सराहा – 'बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं।'

कठिन शब्दार्थ :

नंबरदार = गाँव का भू-स्वामी; मरम्मत = ठीक करना; निर्बल = बलहीन, कमजोर; वैद्यक ग्रंथ = चिकित्सा सम्बन्धी पुस्तक; निर्वाह = निभानेवाला; बहरी = बाज जैसा एक शिकारी पक्षी; शिकरे = बाज से छोटा एक शिकारी पक्षी; रीझ = प्रसन्न होना; टीमटाम = श्रृंगार, सजावट; किफायत = बचत करना; तिनक = चिढ़ना, गुस्सा होना; ढ़िठाई = दुस्साहस; उजड्ड = गँवार, असभ्य; खड़ाऊँ = काठ की बनी खूंटीदार पादुका; सुधि = ध्यान रहना; शऊर = तरीका, ढ़ंग; दब्बू = दबकर रहनेवाला; हथकंडा = षड्यंत्र; घुड़का = डाँटना; मुगदर = व्यायाम के लिए लकड़ी की बनी मुँगरी ।

मुहावरे :

खून का घूँट पीकर रह जाना = क्रोध को दबाकर बैठ जाना;
पिंड छुडाना = पीछा छुड़ाना; आँखें लाल होना = गुस्सा करना;
तिलमिला उठना = बौखला जाना; उल्लू बनाना = मूर्ख बनाना;
गले लगाना = आलिंगन करना; सिर झुकाना = लज्जा से झुक जाना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) ठाकुर साहब के कितने बेटे थे?
२) बेनीमाधव सिंह अपनी आधी से अधिक संपत्ति किसे भेंट के रूप में दे चुके थे?
३) ठाकुर साहब के बड़े बेटे का नाम क्या था?
४) श्रीकंठ कब घर आया करते थे?
५) आनंदी के पिता का नाम लिखिए।
६) थाली उठाकर किसने पलट दी?
७) गौरीपुर गाँव के जमीनदार कौन थे?
८) किसकी आँखें लाल हो गयी थीं?

९) बिगड़ता हुआ काम कौन बना लेती हैं?
१०) 'बड़े घर की बेटी' कहानी के लेखक कौन हैं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) बेनीमाधव सिंह के परिवार का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
२) आनंदी ने अपने ससुराल में क्या रंग-ढंग देखा?
३) लालबिहारी आनंदी पर क्यों बिगड़ पड़ा?
४) आनंदी बिगड़ता हुआ काम कैसे बना लेती है?
५) आनंदी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

III) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे ?

१) जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है।
२) जिसके गुमान पर भूली हुई हो, उसे भी देखूँगा और तुम्हें भी।
३) बुद्धिमान लोग मूर्खों की बात पर ध्यान नहीं देते।
४) लालबिहारी को मैं अब अपना भाई नहीं समझता।
५) अब मेरा मुँह नहीं देखना चाहते, इसलिए अब मैं जाता हूँ।
६) भैया, अब कभी मत कहना कि तुम्हारा मुँह न देखूँगा।
७) मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, क्षमा करना।

IV) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) अभी परसों घी आया है। इतना जल्दी उठ गया?
२) स्त्री गालियाँ सह लेती हैं, मार भी सह लेती हैं, पर मैके की निंदा उनसे नहीं सही जाती।
३) पर तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है?
४) उससे जो कुछ भूल हुई, उसे तुम बड़े होकर क्षमा करो।
५) बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिगड़ता हुआ काम बना लेती हैं।

V) वाक्य शुद्ध कीजिए :

१) उनकी पितामह किसी समय बड़े धन-धान्य सम्पन्न थे।
२) स्वयं उनका पत्नी को ही इस विषय में उनसे विरोध थी।

३) आनंदी अपने नये घर में आया।
४) मुझे जाना दो।

VI) कोष्ठक में दिए गए उचित शब्दों से रिक्त स्थान भरिए :
(शनिवार, संतान, ऐसी, गौरीपुर, हाथी)
१) इस दरवाज़े पर .... झूमता था।
२) .... में रामलीला के वही जन्मदाता थे।
३) सुन्दर .... को कदाचित् उसके माता-पिता भी अधिक चाहते थे।
४) श्रीकंठ सिंह .... को घर आया करते थे।
५) बड़े घर की बेटियाँ .... ही होती हैं।

VII) अन्य लिंग रूप लिखिए :
ठाकुर, पति, बेटा, स्त्री, बुद्धिमान, हाथी, भाई।

VIII) अन्य वचन रूप लिखिए :
घर, बेटी, भैंस, स्त्री, आँखें, थाली।

* * * * * *

2. `dmAm| g

– ñdm_r oddH$mZX

c I H$ [naM` :

`J[éf ñdm_r oddH$mZX Or H$m OÝ_ 12 OZdar 1863 H$m H$cH$Îmm (H$mcH$Îmm) _| hAm Wm$& ZaÝÐZmW (ñdm_r oddH$mZX H$ ]M[Z H$m Zm_) H$ o[Vm odídZmW XÎmm Ama _mVm ^dZídar Xdr Wr$& ]M[Z g hr Am[ ]hV hr àoV^membr, Jar]m| H$ àoV X`m[U öX` a I Zdmc Ama ^oº$ Ed dXmÝV _| éoM a I Zdmc Wo$&  Ir am_H$îU [a_hg Am[H$ Jé Wo$& ñdm_r oddH$mZX AÀN› dº$m W Ed g^r Y_m H$ AÜ`Vm ^r W$&

ogVå]a 1893 _| A_naH$m H$ oMH$mJm eha _| Am`moOV "gd-Y_ gå_cZ' _| ohÝX Y_, ^oº$ Ama dXmÝV H$ ]ma _| ñdm_rOr Z Om ^mfU oX`m, dh AoÛVr` Wm$&  Am[ ^maV Xe, ^maV H$s àOm Ama ^maVr` gñH$oV H$ AÀN› kmVm W$& Bg H$maU I ÊS›- I ÊSmVa _| ohÝX Y_ H$m AmÞË`, ^oº$ Ed dXmÝV H$ àMma-àgma _| Am[ oZaVa H$m` H$aV ah$& Am[H$s _Ë` 4 OcmB 1902 H$m hB$&  "H$_`mJ', "^JdmZ H$îU Ama ^JdXJrVm', "_aUmÎma OrdZ', "_a Jé Xd' AmoX Am[H$s àogÕ aMZmE h$&

àñVV gå]mYZ, "`dmAm| g' _| ñdm_r oddH$mZX Or Z Zd`dH$m| H$m _mJXeZ oH$`m h$&  Am[H$m odídmg Wm oH$ Xe H$m CÕma H$dc Zd`dH$ Ed Zd`doV`m| H$ Ûmam hr g^d h$& ñdm_r oddH$mZX Or Z h_| _mZd oZ_mUH$mar Y_ Ed XeZ H$s oej m Xr h Om h_ma amï› oZ_mU H$ ocE CZH$s AZ[_ XZ h$&

ñdm_rOr H$s 150 dr O`Vr H$ C[cú` _| CZH$s odMmaYmam H$m [naM` odÚmoW`m| H$m oXcmZ hV Bg AZoXV [mR› H$m M`Z oH$`m J`m h$&

मेरी आशा, मेरा विश्वास नवीन पीढ़ी के नवयुवकों पर है। उन्हीं में से मैं अपने कार्यकर्ताओं का संग्रह करूँगा। वे सिंहविक्रम से देश की यथार्थ उन्नति संबंधी सारी समस्या का समाधान करेंगे। वर्तमान काल में अनुष्ठेय आदर्श को मैंने एक निर्दिष्ट रूप में व्यक्त कर दिया है और उसको कार्यान्वित करने के लिए मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है।... वे एक केंद्र से दूसरे केंद्र का विस्तार करेंगे – और इस प्रकार हम धीरे-धीरे समग्र भारत में फैल जायेंगे।

भारतवर्ष का पुनरूत्थान होगा, पर वह शारीरिक शक्ति से नहीं, वरन् आत्मा की शक्ति द्वारा। वह उत्थान विनाश की ध्वजा लेकर नहीं, वरन् शांति और प्रेम की ध्वजा से... मैं अपने सामने यह एक सजीव दृश्य अवश्य देख रहा हूँ कि हमारी यह वृद्ध माता पुनः एक बार जाग्रत होकर अपने सिंहासन पर नवयौवनपूर्ण और पूर्व की अपेक्षा अधिक महा-महिमान्वित होकर विराजी है। शांति और आशीर्वाद के वचनों के साथ सारे संसार में उसके नाम की घोषणा कर दो।

देखो, वह निद्रित भारत अब जागने लगा है। मानो हिमालय के प्राणप्रद वायु-स्पर्श से मृत देह के शिथिलप्राय अस्थि-माँस तक में प्राण-संचार हो रहा है। जड़ता धीरे-धीरे दूर हो रही है। जो अंधे हैं, वे ही देख नहीं सकते और जो विकृत-बुद्धि हैं वे ही समझ नहीं सकते कि हमारी मातृ-भूमि अपनी गंभीर निद्रा से अब जाग रही है। अब कोई उसे रोक नहीं सकता। अब यह फिर सो भी नहीं सकती। कोई बाह्य शक्ति इस समय इसे दबा नहीं सकती क्योंकि यह असाधारण शक्ति का देश अब जागकर खड़ा हो रहा है।

एक नवीन भारत निकल पड़े – निकले हल पकड़कर, किसानों की कुटी भेदकर, मछुआ, मोची, मेहतरों की झोंपड़ियों से। निकल पड़े बनियों की दुकानों से, भुजवा के भाड़ के पास से, कारखाने से, हाट से, बाजार से; निकले झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से।

क्या भारत मर जाएगा? तब तो संसार से सारी आध्यात्मिकता का समूल नाश हो जाएगा, सारे सदाचारपूर्ण आदर्श जीवन का विनाश हो जाएगा, धर्मों के प्रति सारी मधुर सहानुभूति नष्ट हो जाएगी, सारी भावुकता का भी लोप हो जाएगा, और उसके स्थान में कामरूपी देव और विलासितारूपी देवी राज्य करेगी। धन उनका पुरोहित होगा। प्रतारणा,

पाशविक बल और प्रतिद्वंद्विता, ये ही उनकी पूजा-पद्धति होगी और मानवता उनकी बलिसामग्री हो जाएगी। ऐसी दुर्घटना कभी हो नहीं सकती।

भारत के राष्ट्रीय आदर्श हैं : त्याग और सेवा। आप इन धाराओं में तीव्रता उत्पन्न कीजिए और शेष सब अपने-आप ठीक हो जाएगा। तुम काम में लग जाओ; फिर देखोगे इतनी शक्ति आएगी कि तुम उसे सँभाल न सकोगे। दूसरों के लिए रत्ती-भर सोचने, काम करने से भीतर की शक्ति जाग उठती है। दूसरों के लिए रत्ती-भर सोचने से धीरे-धीरे हृदय में सिंह का-सा बल आ जाता है। तुम लोगों से मैं इतना स्नेह करता हूँ, परंतु यदि तुम लोग दूसरों के लिए परिश्रम करते-करते मर भी जाओ तो भी यह देखकर मुझे प्रसन्नता ही होगी।

केवल वही व्यक्ति सबकी अपेक्षा उत्तम रूप से कार्य करता है, जो पूर्णतया नि:स्वार्थी है, जिसे न तो धन की लालसा है, न कीर्ति की और न किसी अन्य वस्तु की ही। और मनुष्य जब ऐसा करने में समर्थ हो जाएगा तो वह भी एक बुद्ध बन जाएगा, और उसके भीतर से ऐसी शक्ति प्रकट होगी, जो संसार की अवस्था को संपूर्ण रूप से परिवर्तित कर सकती है।

जब तक करोड़ों भूखे और अशिक्षित रहेंगे, तब तक मैं प्रत्येक उस आदमी को विश्वासघातक समझूँगा, जो उनके खर्च पर शिक्षित हुआ है, परंतु जो उन पर तनिक भी ध्यान नहीं देता। वे लोग जिन्होंने गरीबों को कुचलकर धन पैदा किया है और अब ठाट-बाट से अकड़कर चलते हैं यदि उन बीस करोड़ देशवासियों के लिए जो इस समय भूखे और असभ्य बने हुए हैं, कुछ नहीं करते, तो वे घृणा के पात्र हैं।

हमेशा बढ़ते चलो! मरते दम तक गरीबों और पददलितों के लिए सहानुभूति – यही हमारा आदर्श वाक्य है। वीर युवकों! बढ़े चलो। ईश्वर के प्रति आस्था रखो। किसी चालबाजी की आवश्यकता नहीं, उससे कुछ नहीं होता। दुखियों का दर्द समझो और ईश्वर से सहायता की प्रार्थना करो – वह अवश्य मिलेगी।... युवकों! मैं गरीबों, मूर्खों और उत्पीड़ितों के लिए इस सहानुभूति और प्राणपण प्रयत्न को थाती के तौर पर तुम्हें अर्पण करता हूँ।... प्रतिज्ञा करो कि अपना सारा जीवन इन तीस करोड़ लोगों के उद्धार-कार्य में लगा दोगे, जो दिनोंदिन अवनति के गर्त में गिरते जा रहे हैं। यदि तुम सचमुच मेरी संतान हो, तो तुम किसी वस्तु से

न डरोगे, न किसी बात पर रुकोगे। तुम सिंहतुल्य होगे। हमें भारत को और पूरे संसार को जगाना है।

तुम तो ईश्वर की संतान हो, अमर आनंद के भागी हो, पवित्र और पूर्ण आत्मा हो। अतएव तुम कैसे अपने को जबर्दस्ती दुर्बल कहते हो? उठो, साहसी बनो, वीर्यवान होओ। सब उत्तरदायित्व अपने कंधे पर लो – यह याद रखो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो। तुम जो कुछ बल या सहायता चाहो, सब तुम्हारे ही भीतर विद्यमान है।

एक बात पर विचार करके देखिए, मनुष्य नियमों को बनाता है या नियम मनुष्य को बनाते हैं? मनुष्य रुपया पैदा करता है या रुपया मनुष्यों को पैदा करता है? मनुष्य कीर्ति और नाम पैदा करता है या कीर्ति और नाम मनुष्य पैदा करते हैं? मेरे मित्रों, पहले मनुष्य बनिए, तब आप देखेंगे कि वे सब बाकी चीजें स्वयं आपका अनुसरण करेंगी। परस्पर घृणित द्वेषभाव को छोड़िए... और सदुद्देश्य, सदुपाय, सत्साहस एवं सद्वीय का अवलंबन कीजिए। आपने मनुष्य योनि में जन्म लिया है तो अपनी कीर्ति यहीं छोड़ जाइए।

जाति तो व्यक्तियों की केवल समष्टि है। शिक्षा के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को उपयुक्त बनाने के सिवाय मेरी और कोई उच्चाकांक्षा नहीं है। अपनी चिंता हमें स्वयं ही करनी है। इतना तो हम कर ही सकते हैं।... क्योंकि दुनिया तभी पवित्र और अच्छी हो सकती है, जब हम स्वयं पवित्र और अच्छे हों। वह है कार्य और हम हैं उसके कारण। इसलिए आओ, हम अपने-आपको पवित्र बना लें। आओ, हम अपने-आपको पूर्ण बना लें।

केवल मनुष्यों की आवश्यकता है; और सब कुछ हो जाएगा, किंतु आवश्यकता है वीर्यवान, तेजस्वी, श्रद्धासंपन्न और अंत तक कपट रहित नवयुवकों की। इस प्रकार के सौ नवयुवकों से संसार के सभी भाव बदल दिए जा सकते हैं। और सब चीजों की अपेक्षा इच्छाशक्ति का अधिक प्रभाव है। इच्छाशक्ति के सामने और सब शक्तियाँ दब जाएँगी, क्योंकि इच्छाशक्ति साक्षात् ईश्वर से निकलकर आती है। विशुद्ध और दृढ़ इच्छाशक्ति सर्वशक्तिमान है।

मैंने तो इन नवयुवकों का संगठन करने के लिए जन्म लिया है। यही क्या, प्रत्येक नगर में सैकड़ों और मेरे साथ सम्मिलित होने को तैयार

हैं; और मैं चाहता हूँ कि इन्हें अप्रतिहत गतिशील तरंगों की भाँति भारत में सब ओर भेजूँ, जो दीन-हीनों एवं पददलितों के द्वारा परसुख, नैतिकता, धर्म एवं शिक्षा उँड़ेल दें। और इसे मैं करूँगा, या मरूँगा।

मैं सुधार में विश्वास नहीं करता, मैं विश्वास करता हूँ स्वाभाविक उन्नति में। मैं अपने को ईश्वर के स्थान पर प्रतिष्ठित कर अपने समाज के लोगों के सिर पर यह उपदेश ''तुम्हें इस भाँति चलना होगा, दूसरे प्रकार नहीं'' – मढ़ने का साहस नहीं कर सकता। मैं तो सिर्फ उस गिलहरी की भाँति होना चाहता हूँ जो श्री रामचंद्रजी के पुल बनाने के समय थोड़ा बालू देकर अपना भाग पूरा कर संतुष्ट हो गई थी। यही मेरा भी भाव है।

लोग स्वदेश-भक्ति की चर्चा करते हैं। मैं स्वदेश-भक्ति में विश्वास करता हूँ, पर स्वदेश-भक्ति के संबंध में मेरा एक आदर्श है। बड़े काम करने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता होती है। बुद्धि और विचार-शक्ति हम लोगों की थोड़ी सहायता कर सकती है। वह हमको थोड़ी दूर अग्रसर करा देती है और वहीं ठहर जाती है। किंतु हृदय के द्वारा ही महाशक्ति की प्रेरणा होती है, प्रेम असंभव को संभव कर देता है। जगत् के सब रहस्यों का द्वार प्रेम ही है। अत: मेरे भावी संस्कारकों, मेरे भावी देशभक्तों, तुम हृदयवान बनो। क्या तुम हृदय से समझते हो कि देव और ऋषियों की करोड़ों संतानें पशुतुल्य हो गई हैं? क्या हृदय में अनुभव करते हो कि करोड़ों आदमी आज भूखे मर रहे हैं। और वे कई शताब्दियों से इस भाँति भूखों मरते आ रहे हैं? क्या तुम समझते हो कि अज्ञात के काले बादल ने सारे भारत को आच्छन्न कर लिया है? क्या तुम यह सब समझकर कभी अस्थिर हुए हो? क्या तुम कभी इससे अनिद्रित हुए हो? क्या कभी यह भावना तुम्हारे रक्त में मिलकर तुम्हारी धमनियों में बही है? क्या वह तुम्हारे हृदय के स्पंदन से कभी मिली है? क्या उसने कभी तुम्हें पागल बनाया है? क्या कभी तुम्हें निर्धनता और नाश का ध्यान आया है? क्या तुम अपने नाम, यश, संपत्ति यहाँ तक कि अपने शरीर को भी भूल गए हो? क्या तुम ऐसे हो गये हो? यदि हो, तो जानो कि तुमने स्वदेश-भक्ति की प्रथम सीढ़ी पर पैर रखा है। जैसा तुममें से अधिक लोग जानते हैं, मैं धार्मिक महासभा के लिए अमेरिका नहीं गया था, किंतु देश के जनसाधारण की दुर्दशा के प्रतिकार करने का भूत मुझमें – मेरी आत्मा में घुस गया था। मैं अनेक वर्ष तक समग्र भारत में घूमता रहा, पर अपने

स्वदेशवासियों के लिए कार्य करने का मुझे कोई अवसर नहीं मिला, इसीलिए मैं अमेरिका गया। तुममें से अधिकांश जो मुझे उस समय जानते थे, इस बात को अवश्य जानते हैं। इस धार्मिक महासभा की कौन परवाह करता था? यहाँ मेरे रक्त-मांस- स्वरूप जनसाधारण की दशा हीन होती जाती थी, उनकी कौन खबर ले? स्वदेश-हितैषी होने की यह मेरी पहली सीढ़ी है।

उठो, जागो, स्वयं जगकर औरों को जगाओ। अपने नर-जन्म को सफल करो। ''उत्तष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत – उठो, जागो और तब तक रुको नहीं, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाय।''

जो अपने आपमें विश्वास नहीं करता, वह नास्तिक है। प्राचीन धर्मों ने कहा है, वह नास्तिक है जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता। नया धर्म कहता है, वह नास्तिक है जो अपने आपमें विश्वास नहीं करता।

यह एक बड़ी सच्चाई है; शक्ति ही जीवन और कमजोरी ही मृत्यु है। शक्ति परम सुख, जीवन अजर-अमर है; कमजोरी कभी न हटने वाला बोझ और यंत्रणा है; कमजोरी ही मृत्यु है।

उपनिषदों में यदि कोई ऐसा शब्द है, जो वज्रवेग से अज्ञानराशि के ऊपर पतित होता है, उसे बिलकुल उड़ा देता है, तो वह है 'अभी:' निर्भयता। संसार को यदि किसी एक धर्म की शिक्षा देनी चाहिए, तो वह है 'निर्भीकता'। यह सत्य है कि इस ऐहिक जगत् में, अथवा आध्यात्मिक जगत् में भय ही पतन तथा पाप का कारण है। भय से ही दुख होता है, यह मृत्यु का कारण है तथा इसी के कारण सारी बुराई तथा पाप होता है।

सबसे पहले हमारे तरूणों को मजबूत बनना चाहिए। धर्म इसके बाद की वस्तु है। मेरे तरूण मित्रों! शक्तिशाली बनो, मेरी तुम्हें यही सलाह है। तुम गीता के अध्ययन की अपेक्षा फुटबाल के द्वारा ही स्वर्ग के अधिक समीप पहुँच सकोगे। ये कुछ कड़े शब्द हैं, पर मैं उन्हें कहना चाहता हूँ, क्योंकि तुम्हें प्यार करता हूँ कि काँटा कहाँ चुभता है। मुझे इसका कुछ अनुभव है। तुम्हारे स्नायु और मांसपेशियाँ अधिक मजबूत होने पर तुम गीता अधिक अच्छी तरह समझ सकोगे। तुम अपने शरीर में शक्तिशाली रक्त प्रवाहित होने पर, श्रीकृष्ण के तेजस्वी गुणों और उनकी अपार शक्ति को अधिक समझ सकोगे। जब तुम्हारा शरीर मजबूती से तुम्हारे पैरों पर खड़ा रहेगा और तुम अपने को 'मनुष्य' अनुभव करोगे,

तब तुम उपनिषद और आत्मा की महानता को अधिक अच्छा समझ सकोगे।

हम देख सकते हैं कि एक तथा दूसरे मनुष्य के बीच अंतर होने का कारण उसका अपने आपमें विश्वास होना और न होना ही है। अपने आपमें विश्वास होने से सबकुछ हो सकता है। मैंने अपने जीवन में इसका अनुभव किया है, अब भी कर रहा हूँ और जैसे-जैसे मैं बड़ा होता जा रहा हूँ, मेरा विश्वास और भी दृढ़ होता जा रहा है।

प्रत्येक आत्मा ही अव्यक्त ब्रह्म है। बाह्य एवं अंत:प्रकृति, दोनों का नियतन कर, इस अंतर्निहित ब्रह्म-स्वरूप को अभिव्यक्त करना ही जीवन का ध्येय है। कर्म, भक्ति, योग या ज्ञान के द्वारा; इनमें से किसी एक के द्वारा या एक से अधिक के द्वारा, या सबके सम्मिलन के द्वारा यह ध्येय प्राप्त कर लो और मुक्त हो जाओ। यही धर्म का सर्वस्व है। मतमतांतर, विधि या अनुष्ठान, ग्रंथ, मंदिर — ये सब गौण हैं। यदि ईश्वर है, तो हमें उसे देखना चाहिए; यदि आत्मा है तो हमें उसकी प्रत्यक्ष अनुभूति कर लेनी चाहिए; अन्यथा उन पर विश्वास न करना ही अच्छा है। ढोंगी बनने की अपेक्षा स्पष्ट रूप से नास्तिक बनना अच्छा है।

एक विचार ले लो। उसी एक विचार के अनुसार अपने जीवन को बनाओ; उसी को सोचो, उसी का स्वप्न देखो और उसी पर अवलंबित रहो। अपने मस्तिष्क, मांसपेशियों, स्नायुओं और शरीर के प्रत्येक भाग को उसी विचार से ओत-प्रोत होने दो और दूसरे सब विचारों को अपने से दूर रखो। यही सफलता का रास्ता है और यही वह मार्ग है जिसने महान् धार्मिक पुरुषों का निर्माण किया है।

मैं अभी तक के सभी धर्मों को स्वीकार करता हूँ और उन सबकी पूजा करता हूँ; मैं उनमें से प्रत्येक के साथ ईश्वर की उपासना करता हूँ; वे स्वयं चाहे किसी भी रूप में उपासना करते हों। मैं मुसलमानों की मस्जिद में जाऊँगा, मैं ईसाइयों के गिरिजा में क्रास के सामने घुटने टेककर प्रार्थना करूँगा, मैं बौद्ध-मंदिरों में जाकर बुद्ध और उनकी शिक्षा की शरण लूँगा। मैं जंगल में जाकर हिंदुओं के साथ ध्यान करूँगा, जो हृदयस्थ ज्योतिस्वरूप परमात्मा को प्रत्यक्ष करने में लगे हुए हैं।

शिक्षा विविध जानकारियों का ढेर नहीं है, जो तुम्हारे मस्तिष्क में ठूँस दिया गया है और जो आत्मसात् हुए बिना वहाँ आजन्म पड़ा रहकर

गड़बड़ मचाया करता है। हमें उन विचारों की अनुभूति कर लेने की आवश्यकता है, जो जीवन-निर्माण, मनुष्य-निर्माण तथा चरित्र-निर्माण में सहायक हों। यदि आप केवल पाँच ही परखे हुए विचार आत्मसात् कर उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हैं, तो आप पूरे ग्रंथालय को कंठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हैं।

अपने भाइयों का नेतृत्व करने का नहीं, वरन् उनकी सेवा करने का प्रयत्न करो। नेता बनने की इस क्रूर उन्मत्तता ने बड़े-बड़े जहाजों को इस जीवन रूपी समुद्र में डुबो दिया है।

हमारे स्वभाव में संगठन का सर्वथा अभाव है, पर इसे हमें अपने स्वभाव में लाना है। इसका महान् रहस्य है ईर्ष्या का अभाव। अपने भाइयों के मत से सहमत होने को सदैव तैयार रहो और हमेशा समझौता करने का प्रयास करो। यही है संगठन का पूरा रहस्य।

मैं तुम सबसे यही चाहता हूँ कि तुम आत्मप्रतिष्ठा, दलबंदी और ईर्ष्या को सदा के लिए छोड़ दो। तुम्हें पृथ्वी माता की तरह सहनशील होना चाहिए। यदि तुम ये गुण प्राप्त कर सको, तो संसार तुम्हारे पैरों पर लोटेगा।

कठिन शब्दार्थ :

सिंह विक्रम = सिंहबल; अनुष्ठेय = आचरणीय; पुनरुत्थान = पुनः उन्नति; प्रतारणा = धूर्तता; पाशविक = मृगीय; उत्पीड़ित = सताए हुए; थाती = धरोहर, अमानत; गर्त = गड्ढा; नियतन = निर्धारित करना, आवंटन करना; वीर्यवान = साहसी, तेजोवान; गिरिजा = चर्च; उन्मत्तता = पागलपन; अवनति = विनाश।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) स्वामी विवेकानंद का विश्वास किन पर है?
२) स्वामी विवेकानंद के अनुसार भारत के राष्ट्रीय आदर्श क्या हैं?
३) कौन सबकी अपेक्षा उत्तम रूप से कार्य करता है?
४) किस शक्ति के सामने सब शक्तियाँ दब जाएँगी?
५) असंभव को संभव बनानेवाली चीज़ क्या है?

६) जो अपने आपमें विश्वास नहीं करता, वह क्या है?
७) कमज़ोरी किसके समान है?
८) सबसे पहले हमारे तरुणों को क्या बनना चाहिए?
९) प्रत्येक आत्मा क्या है?
१०) नवयुवकों को किसकी तरह सहनशील होना चाहिए?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) भारतवर्ष का पुनरुत्थान कैसे होगा?
२) त्याग और सेवा के बारे में स्वामी विवेकानंद जी के क्या विचार हैं?
३) स्वदेश-भक्ति के बारे में स्वामी विवेकानंद जी का आदर्श क्या है?
४) सर्व धर्म सहिष्णुता के बारे में स्वामी विवेकानंद जी के विचार लिखिए।
५) शिक्षा के बारे में स्वामी विवेकानंद जी क्या कहते हैं?

III) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) 'यह याद रखो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो।'
२) 'उठो, जागो और तब तक रुको नहीं, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।'
३) 'भय से ही दुःख होता है, यह मृत्यु का कारण है तथा इसी के कारण सारी बुराई तथा पाप होता है।'
४) 'ढोंगी बनने की अपेक्षा स्पष्ट रूप से नास्तिक बनना अच्छा है।'
५) 'मैं तुम सबसे यही चाहता हूँ कि तुम आत्मप्रतिष्ठा, दलबंदी और ईर्ष्या को सदा के लिए छोड़ दो।'

IV) विलोम शब्द लिखिए :

आशा, साधारण, स्वदेश, स्वार्थी, कीर्ति, शिक्षित, पवित्र, जन्म, निर्धन, मज़बूत, धर्म, नास्तिक।

V) समानार्थक शब्द लिखिए :

नवीन, पुरोहित, जंगल, पहाड़, ईश्वर, साहस, तरुण, अधिक।

VI) निम्नलिखित अनुच्छेद पढ़कर उस पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

हमेशा बढ़ते चलो। मरते दम तक गरीबों और पददलितों के लिए सहानुभूति – यही हमारा आदर्श वाक्य है। वीर युवकों! बढ़े चलो। ईश्वर के प्रति आस्था रखो। किसी चालबाज़ी की आवश्यकता नहीं, उससे कुछ नहीं होता। दुखियों का दर्द समझो और ईश्वर से सहायता की प्रार्थना करो – वह अवश्य मिलेगी। युवकों! मैं गरीबों, मूर्खों और उत्पीडितों के लिए इस सहानुभूति और प्राणपण प्रयत्न को थाती के तौर पर तुम्हें अर्पण करता हूँ। प्रतिज्ञा करो कि अपना सारा जीवन इन तीस करोड़ लोगों के उद्धार-कार्य में लगा दोगे, जो दिनोंदिन अवनति के गर्त में गिरते जा रहे हैं। यदि तुम सचमुच मेरी संतान हो, तो तुम किसी वस्तु से न डरोगे, न किसी बात पर रुकोगे। तुम सिंहतुल्य होगे। हमें भारत को और पूरे संसार को जगाना है।

प्रश्न :
१) हमारा आदर्श वाक्य क्या है?
२) किसके प्रति आस्था रखनी चाहिए?
३) किसकी आवश्यकता नहीं है?
४) तुम किसके समान होगे?
५) हमें किसे जगाना है?

VII) योग्यता विस्तार :

माता शारदादेवी एवं श्री रामकृष्ण परमहंस के संबंध में जानकारी प्राप्त कीजिए।

* * * * * *

३. निन्दा रस

— हरिशंकर परसाई

लेखक परिचय :

सुप्रसिद्ध हास्य-व्यंग्य साहित्यकार हरिशंकर परसाई जी का जन्म मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जिले के अन्तर्गत जमानी नामक स्थान में २२ अगस्त १९२४ ई. को हुआ था। प्रारम्भ से लेकर स्नातक स्तर तक की शिक्षा मध्यप्रदेश में ही हुई। तदोपरांत नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया। आपने खण्डवा में ६ माह तक अध्यापन कार्य किया तथा सन् १९४१ से १९४३ ई. तक २ वर्ष जबलपुर में स्पेंस ट्रेनिंग कालेज में शिक्षण कार्य किया। आप अध्यापन कार्य में कुशल थे। परसाई जी नियमित रूप से 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'धर्मयुग' तथा अन्य पत्रिकाओं के लिए अपनी रचनाएँ लिखते रहे। आपका निधन १० अगस्त १९९५ ई. में हुआ।

प्रमुख रचनाएँ — कहानी संग्रह : 'हँसते हैं, रोते हैं', 'जैसे उनके दिन फिरे'। उपन्यास : 'रानी नागफनी की कहानी', 'तट की खोज'। निबंध संग्रह : 'तब की बात और थी', 'भूत के पाँव पीछे', 'बेईमान की परत', 'पगडंडियों का जमाना', 'सदाचार का तावीज', 'शिकायत मुझे भी है', 'और अन्त में'।

प्रस्तुत व्यंग्य रचना 'निन्दा रस' एक सुन्दर कलाकृति है। लोग एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या भाव से निन्दा करते हैं, कुछ लोग अपने स्वभाव-वश अकारण ही निन्दा करने में रस लेते रहते हैं तथा कुछ लोग अपने आपको बड़ा सिद्ध करने के लिए दूसरों की निन्दा करने में लगे रहते हैं। ऐसे निन्दकों पर हरिशंकर परसाई जी ने करारा प्रहार किया है।

मनुष्य के सहज गुण 'निन्दा' करने की आदत से परिचित कराने तथा अपने आप को यथासंभव उससे दूर रखने के उद्देश्य से प्रस्तुत रचना चयनित है।

'क' कई महीने बाद आये थे। सुबह चाय पीकर अखबार देख रहा था कि वे तूफान की तरह कमरे में घुसे, 'साइक्लोन' की तरह मुझे अपनी भुजाओं में जकड़ा तो मुझे धृतराष्ट्र की भुजाओं में जकड़े भीम के पुतले की याद आ गयी। यह धृतराष्ट्र की ही जकड़ थी। अंधे धृतराष्ट्र ने टटोलते हुए पूछा, 'कहाँ है भीम? आ बेटा, तुझे कलेजे से लगा लूँ।' और जब भीम का पुतला उनकी पकड़ में आ गया तो उन्होंने प्राणघाती स्नेह से उसे जकड़कर चूर कर डाला।

ऐसे मौके पर हम अक्सर अपने पुतले को अंकवार में दे देते हैं, हम अलग खड़े देखते रहते हैं। 'क' से क्या मैं गले मिला? क्या मुझे उसने समेटकर कलेजे से लगा लिया? हरगिज नहीं। मैंने अपना पुतला ही उसे दिया। पुतला इसलिए उसकी भुजाओं में सौंप दिया कि मुझे मालूम था कि मैं धृतराष्ट्र से मिल रहा हूँ। पिछली रात को एक मित्र ने बताया कि 'क' अपनी ससुराल आया है और 'ग' के साथ बैठकर शाम को दो-तीन घंटे तुम्हारी निन्दा करता रहा। इस सूचना के बाद जब आज सबेरे वह मेरे गले लगा तो मैंने शरीर से अपने मन को चुपचाप खिसका दिया और नि:स्नेह, कँटीली देह उसकी बाँहों में छोड़ दी। भावना के अगर काँटे होते तो उसे मालूम होता कि वह नागफनी को कलेजे से चिपटाये है। छल का धृतराष्ट्र जब आलिंगन करे, तो पुतला ही आगे बढ़ाना चाहिए।

पर वह मेरा दोस्त अभिनय में पूरा है। उसके आँसू भर नहीं आये, बाकी मिलन के हर्षोल्लास के सब चिन्ह प्रकट हो गये – वह गहरी आत्मीयता की जकड़, नयनों से छलकता वह असीम स्नेह और वह स्नेहसिक्त वाणी।

बोला, 'अभी सुबह की गाड़ी से उतरा और एकदम तुमसे मिलने चला आया, जैसे आत्मा का एक खण्ड दूसरे खण्ड से मिलने को आतुर रहता है।' आते ही झूठ बोला कम्बख्त। कल का आया है, यह मुझे मेरा मित्र बता गया था। इस झूठ में कोई प्रयोजन शायद उसका न रहा हो। कुछ लोग बड़े निर्दोष मिथ्यावादी होते हैं। वे आदतन, प्रकृति के वशीभूत झूठ बोलते हैं। उनके मुख से निष्प्रयास, निष्प्रयोजन झूठ ही निकलता है। मेरे एक रिश्तेदार ऐसे हैं। वे अगर बम्बई जा रहे हैं और उनसे पूछे, तो वे कहेंगे, 'कलकत्ता जा रहा हूँ।' ठीक बात उनके मुँह से निकल ही नहीं

सकती। 'क' भी बड़ा निर्दोष, सहज-स्वाभाविक मिथ्यावादी है।

वह बैठा। कब आये? कैसे हो? – वगैरह के बाद उसने 'ग' की निन्दा आरम्भ कर दी। मनुष्य के लिए जो भी कर्म जघन्य हैं वे सब 'ग' पर आरोपित करके उसने ऐसे गाढ़े काले तारकोल से उसकी तस्वीर खींची कि मैं यह सोचकर काँप उठा कि ऐसी ही काली तस्वीर मेरी 'ग' के सामने इसने कल शाम को खींची होगी।

सुबह की बातचीत में 'ग' प्रमुख विषय था। फिर तो जिस परिचित की बात निकल आती, उसी को चार-छह वाक्यों में धराशायी करके वह बढ़ लेता।

अद्भुत है मेरा यह मित्र। उसके पास दोषों का 'केटलाग' है। मैंने सोचा कि जब वह हर परिचित की निन्दा कर रहा है तो क्यों न मैं लगे हाथों विरोधियों की गत, इसके हाथों करा लूँ। मैं अपने विरोधियों का नाम लेता गया और वह उन्हें निन्दा की तलवार से काटता चला। जैसे लकड़ी चीरने की आरा मशीन के नीचे मजदूर लकड़ी का लट्ठा खिसकाता जाता है और वह चीरता जाता है, वैसे ही मैंने विरोधियों के नाम एक-एक कर खिसकाये और वह उन्हें काटता गया। कैसा आनन्द था। दुश्मनों को रणक्षेत्र में एक के बाद एक कटकर गिरते हुए देखकर योद्धा को ऐसा ही सुख होता होगा।

मेरे मन में गत रात्रि के उस निन्दक मित्र के प्रति मैल नहीं रहा। दोनों एक हो गये। भेद तो रात्रि के अंधकार में ही मिटता है, दिन के उजाले में भेद स्पष्ट हो जाते हैं। निन्दा का ऐसा ही भेद-नाशक अँधेरा होता है। तीन-चार घंटे बाद, जब वह विदा हुआ तो हम लोगों के मन में बड़ी शांति और तुष्टि थी।

निन्दा की ऐसी ही महिमा है। दो-चार निन्दकों को एक जगह बैठकर निन्दा में निमग्न देखिए और तुलना कीजिए कि दो-चार ईश्वर-भक्तों से जो रामधुन लगा रहे हैं। निन्दकों की-सी एकाग्रता, परस्पर आत्मीयता, निमग्नता भक्तों में दुर्लभ है। इसलिए संतों ने निन्दकों को 'आँगन कुटी छवाय' पास रखने की सलाह दी है।

कुछ 'मिशनरी' निन्दक मैंने देखे हैं। उनका किसी से बैर नहीं, द्वेष नहीं। वे किसी का बुरा नहीं सोचते। पर चौबीसों घंटे वे निन्दा कर्म में बहुत पवित्र भाव से लगे रहते हैं। उनकी नितांत निर्लिप्तता, निष्पक्षता

इसी से मालूम होती है कि वे प्रसंग आने पर अपने आप की पगड़ी भी उसी आनन्द से उछालते हैं, जिस आनन्द से अन्य लोग दुश्मन की। निन्दा इनके लिए 'टॉनिक' होती है।

ट्रेड यूनियन के इस जमाने में निन्दकों के संघ बन गये हैं। संघ के सदस्य जहाँ-तहाँ से खबरें लाते हैं और अपने संघ के प्रधान को सौंपते हैं। यह कच्चा माल हुआ। अब प्रधान उनका पक्का माल बनायेगा और सब सदस्यों को 'बहुजन हिताय' मुफ्त बाँटने के लिए दे देगा। यह फुरसत का काम है, इसलिए जिनके पास कुछ और करने को नहीं होता, वे इसे बड़ी खूबी से करते हैं। एक दिन हमसे एक ऐसे संघ के अध्यक्ष ने कहा, ''यार आजकल लोग तुम्हारे बारे में बहुत बुरा-बुरा कहते हैं।'' हमने कहा, ''आपके बारे में मुझसे कोई भी बुरा नहीं कहता। लोग जानते हैं कि आपके कानों के घूरे में इस तरह का कचरा मजे में डाला जा सकता है।''

ईर्ष्या-द्वेष से प्रेरित निन्दा भी होती है। लेकिन इसमें वह मजा नहीं जो मिशनरी भाव से निन्दा करने में आता है। इस प्रकार का निन्दक बड़ा दु:खी होता है। ईर्ष्या-द्वेष से चौबीसों घंटे जलता है और निन्दा का जल छिड़ककर कुछ शांति अनुभव करता है। ऐसा निन्दक बड़ा दयनीय होता है। अपनी अक्षमता से पीड़ित वह बेचारा दूसरे की सक्षमता के चाँद को देखकर सारी रात श्वान जैसा भौंकता है। ईर्ष्या-द्वेष से प्रेरित निन्दा करनेवाले को कोई दंड देने की जरूरत नहीं है। वह निन्दक बेचारा स्वयं दण्डित होता है। आप चैन से सोइए और वह जलन के कारण सो नहीं पाता। उसे और क्या दंड चाहिए? निरन्तर अच्छे काम करते जाने से उसका दंड भी सख्त होता जाता है। जैसे एक कवि ने एक अच्छी कविता लिखी, ईर्ष्याग्रस्त निन्दक को कष्ट होगा। अब अगर एक और अच्छी लिख दी तो उसका कष्ट दुगना हो जायेगा।

निन्दा का उद्‌गम ही हीनता और कमजोरी से होता है। मनुष्य अपनी हीनता से दबता है। वह दूसरों की निन्दा करके ऐसा अनुभव करता है कि वे सब निकृष्ट हैं और वह उनसे अच्छा है। उसके अहं की इससे तुष्टि होती है। बड़ी लकीर को कुछ मिटाकर छोटी लकीर बड़ी बनती है। ज्यों-ज्यों कर्म क्षीण होता जाता है, त्यों-त्यों निन्दा की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। कठिन कर्म ही ईर्ष्या-द्वेष और उनसे उत्पन्न निन्दा को मारता है। इन्द्र बड़ा ईर्ष्यालु माना जाता है, क्योंकि वह निठल्ला है। स्वर्ग में देवताओं को

बिना उगाया अन्न, बे बनाया महल और बिन बोये फल मिलते हैं। अकर्मण्यता में उन्हें अप्रतिष्ठित होने का भय बना रहता है, इसलिए कर्मी मनुष्यों से उन्हें ईर्ष्या होती है।

निन्दा कुछ लोगों की पूँजी होती है। बड़ा लंबा-चौडा व्यापार फैलाते हैं वे इस पूँजी से। कई लोगों की प्रतिष्ठा ही दूसरों की कलंक-कथाओं के पारायण पर आधारित होती है। बड़े रस-विभोर होकर वे जिस-तिस की सत्य कल्पित कलंक-कथा सुनाते हैं और स्वयं को पूर्ण संत समझने की तुष्टि का अनुभव करते हैं।

आप इनके पास बैठिए और सुन लीजिए, ''बड़ा खराब जमाना आ गया। तुमने सुना? फलाँ और अमुक...।'' अपने चरित्र पर आँख डालकर देखने की उन्हें फुरसत नहीं होती। एक कहानी याद आ रही है। एक स्त्री किसी सहेली के पति की निन्दा अपने पति से कर रही है। वह बड़ा उचक्का, दगाबाज आदमी है। बेईमानी से पैसा कमाता है। कहती है कि मैं उस सहेली की जगह होती तो ऐसे पति को त्याग देती। तब उसका पति उसके सामने यह रहस्य खोलता है कि वह स्वयं बेईमानी से इतना पैसा कमाता है। सुनकर स्त्री स्तब्ध रह जाती है। क्या उसने पति को त्याग दिया? जी हाँ, वह दूसरे कमरे में चली गयी।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि हममें जो करने की क्षमता नहीं है, वह यदि कोई करता है तो हमारे पिलपिले अहं को धक्का लगता है, हममें हीनता और ग्लानि आती है। तब हम उसकी निन्दा करके उससे अपने को अच्छा समझकर तुष्ट होते हैं।

उस मित्र की मुलाकात के करीब दस-बारह घंटे बाद यह सब मन में आ रहा है। अब कुछ तटस्थ हो गया हूँ। सुबह जब उसके साथ बैठा था तब मैं स्वयं निन्दा के 'काला सागर' में डूबता-उतराता था, कल्लोल कर रहा था। बड़ा रस है न निन्दा में। सूरदास ने इसलिए 'निन्दा सबद रसाल' कहा है।

कठिन शब्दार्थ :

निमग्न = लीन; साइक्लोन = तेज और धूल भरी चक्कर काटती हुई आँधी; उद्गम = प्रारम्भ; निकृष्ट = नीच; मिशनरी = लगन, तत्परता एवं नैपुण्य से कार्य करने की भावना की ओर संकेत; बहुजन हिताय =

अधिकाधिक व्यक्तियों की भलाई के लिए; धृतराष्ट्र की जकड़ = जन्मांध धृतराष्ट्र की भुजाओं में बड़ी शक्ति थी; नागफनी = कँटीला पौधा, एक विशेष प्रकार का कैक्टस; धराशायी करना = पराजित करना, जमीन पर लिटाना; ट्रेड यूनियन = श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए संघर्ष करने वाला श्रमिक संगठन।

मुहावरे :

गले लगाना = आलिंगन करना; बेईमानी करना = धोखा देना;
कल्लोल करना = शोर मचाना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) धृतराष्ट्र की भुजाओं में कौनसा पुतला जकड़ गया था?
२) पिछली रात ‘क’ ‘ग’ के साथ बैठकर क्या करता रहा?
३) कुछ लोग आदतन क्या बोलते हैं?
४) लेखक के मित्र के पास दोषों का क्या है?
५) लेखक के मन में किसके प्रति मैल नहीं रहा?
६) निन्दकों की जैसी एकाग्रता किनमें दुर्लभ है?
७) मिशनरी निन्दक चौबीसों घंटे निन्दा करने में किस भाव से लगे रहते हैं?
८) निन्दा, निन्दा करनेवालों के लिए क्या होती है?
९) निन्दा का उद्‌गम किससे होता है?
१०) कौन बड़ा ईर्ष्यालु माना जाता है?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) धृतराष्ट्र का उल्लेख लेखक ने क्यों किया है?
२) निन्दा की महिमा का वर्णन कीजिए।
३) ‘मिशनरी’ निन्दक से लेखक का क्या तात्पर्य है?
४) निन्दकों के संघ के बारे में लिखिए।
५) ईर्ष्या-द्वेष से प्रेरित निन्दकों की कैसी दशा होती है?
६) निन्दा को पूँजी बनानेवालों के बारे में लेखक ने क्या कहा है?
७) ‘निन्दा रस’ निबंध का आशय अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

III) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) आ बेटा, तुझे कलेजे से लगा लूँ।
२) अभी सुबह की गाड़ी से उतरा और एकदम तुमसे मिलने चला आया।
३) कुछ लोग बड़े निर्दोष मिथ्यावादी होते हैं।
४) निन्दा का उद्‌गम ही हीनता और कमजोरी से होता है।
५) ज्यों-ज्यों कर्म क्षीण होता जाता है त्यों-त्यों निन्दा की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है।

IV) कोष्ठक में दिए गये उचित शब्दों से रिक्त स्थान भरिए :

(ईर्ष्या-द्वेष, भेद-नाशक, पूँजी, पुतला, तूफान)

१) सुबह चाय पीकर अखबार देख रहा था कि वे .... की तरह कमरे में घुसे।
२) छल का धृतराष्ट्र जब आलिंगन करे, तो ..... ही आगे बढ़ाना चाहिए।
३) निन्दा का ऐसा ही .... अँधेरा होता है।
४) .... से प्रेरित निन्दा भी होती है।
५) निन्दा कुछ लोगों की .... होती है।

V) वाक्य शुद्ध कीजिए :

१) ऐसी मौके पर हम अक्सर अपने पुतले को अंकवार में दे देते हैं।
२) पर वह मेरी दोस्त अभिनय में पूरा है।
३) निन्दा का ऐसी ही महिमा है।
४) आपके बारे में मुझसे कोई भी बुरी नहीं कहता।
५) सूरदास ने इसलिए 'निन्दा सबद रसाल' कही है।

VI) अन्य लिंग रूप लिखिए :

मजदूर, बेटा, पति, स्त्री।

VII) अन्य वचन रूप लिखिए :

भुजा, कथा, दुश्मन, घंटा, कमरा, कविता, लकीर।

VIII) योग्यता विस्तार :

हरिशंकर परसाई के अन्य व्यंग्य रचनाओं को पढ़िए।

* * * * * *

४. बिन्दा

– महादेवी वर्मा

लेखिका परिचय :

आधुनिक युग की मीरा एवं हिन्दी साहित्य की प्रमुख छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा का जन्म १९०७ ई. में फर्रुखाबाद में हुआ। आपकी प्रारंभिक शिक्षा इंदौर में हुई। आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। आप विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन द्वारा मानद डाक्टरेट की उपाधि से अलंकृत हुईं।

महादेवी वर्मा का व्यक्तित्व सौम्य और प्रभावशाली रहा। आपकी गंभीर भावुकता और प्रखर बौद्धिकता को देखकर चकित रह जाना पड़ता है। आपके संस्मरण एवं रेखाचित्रों में रचनात्मक गद्य का वैभव प्रकट होता है जो 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'पथ के साथी', 'क्षणदा' तथा 'मेरा परिवार' में संग्रहीत हैं। आपको १९८३ ई. में काव्य संग्रह 'यामा' पर भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

प्रस्तुत रेखाचित्र 'बिन्दा' को 'अतीत के चलचित्र' से लिया गया है। यह एक हृदयस्पर्शी रेखाचित्र है जो संस्मरण शैली में है। बिन्दा लेखिका के बचपन की सहेली है। वह अपनी सौतेली माँ द्वारा सतायी गयी, खिलने से पहले ही मुरझा जाने वाली असहाय, निरीह बालिका महादेवी वर्मा के स्मृति पटल पर जीवित है।

'बिन्दा' के माध्यम से मातृप्रेम से वंचित व सौतेली माँ के क्रूर व्यवहार को दर्शाने के उद्देश्य से इस रेखाचित्र का चयन किया गया है।

सभीत-सी आँखोंवाली उस दुर्बल, छोटी और अपने-आप ही सिमटी-सी बालिका पर दृष्टि डाल कर मैंने सामने बैठे सज्जन को, उनका भरा हुआ प्रवेशपत्र लौटाते हुए कहा – 'आपने आयु ठीक नहीं भरी है। ठीक कर दीजिए, नहीं तो पीछे कठिनाई पड़ेगी।' 'नहीं, यह तो गत आषाढ़ में चौदह की हो चुकी' सुनकर मैंने कुछ विस्मित भाव से अपनी उस भावी विद्यार्थिनी को अच्छी तरह देखा, जो नौ वर्षीय बालिका की सरल चंचलता से शून्य थी और चौदह वर्षीय किशोरी के सलज्ज उत्साह से अपरिचित।

उसकी माता के सम्बन्ध में मेरी जिज्ञासा स्वगत न रहकर स्पष्ट प्रश्न ही बन गयी होगी, क्योंकि दूसरी ओर से कुछ कुंठित उत्तर मिला – 'मेरी दूसरी पत्नी है, और आप तो जानती ही होंगी...' और उनके वाक्य को अधसुना ही छोड़कर मेरा मन स्मृतियों की चित्रशाला में दो युगों से अधिक समय की धूल के नीचे दबे बिन्दा या विन्ध्येश्वरी के धुँधले चित्र पर उँगली रखकर कहने लगा – ज्ञात है, अवश्य ज्ञात है।

बिन्दा मेरी उस समय की बाल्यसखी थी, जब मैंने जीवन और मृत्यु का अमिट अन्तर जान नहीं पाया था। अपने नाना और दादी के स्वर्ग-गमन की चर्चा सुनकर मैं बहुत गम्भीर मुख और आश्वस्त भाव से घर भर को सूचना दे चुकी थी कि जब मेरा सिर कपड़े रखने की आल्मारी को छूने लगेगा, तब मैं निश्चय ही एक बार उनको देखने जाऊँगी। न मेरे इस पुण्य संकल्प का विरोध करने की किसी को इच्छा हुई और न मैंने एक बार मरकर कभी न लौट सकने का नियम जाना। ऐसी दशा में, छोटे-छोटे असमर्थ बच्चों को छोड़कर मर जाने वाली माँ की कल्पना मेरी बुद्धि में कहाँ ठहरती। मेरा संसार का अनुभव भी बहुत संक्षिप्त-सा था। अज्ञानावस्था से मेरा साथ देनेवाली सफेद कुत्ती-सीढ़ियों के नीचे वाली अँधेरी कोठरी में आँख मूँदे पड़े रहनेवाले बच्चों की इतनी सतर्क पहरेदार हो उठती थी कि उसका गुर्राना मेरी सारी ममता-भरी मैत्री पर पानी फेर देता था। भूरी पूसी भी अपने चूहे जैसे नि:सहाय बच्चों को तीखे पैने दाँतों में ऐसी कोमलता से दबाकर कभी लाती, कभी ले जाती थी कि उनके कहीं एक दाँत भी न चुभ पाता था। ऊपर की छत के कोने पर कबूतरों का और बड़ी तस्वीर के पीछे गौरैया का जो घोंसला था, उसमें खुली हुई छोटी-छोटी चोंचों और उनमें सावधानी से भरे जाते दानों और कीड़े-मकोड़ों को भी मैं

अनेक बार देख चुकी थी। बछिया को हटाते हुए ही रँभा-रँभा कर घर भर को यह दु:खद समाचार सुनाने वाली अपनी श्यामा गाय की व्याकुलता भी मुझसे छिपी न थी। एक बच्चे कन्धे से चिपकाये और एक की उँगली पकड़े हुए जो भिखारिन द्वार-द्वार फिरती थी, वह भी तो बच्चों के लिए ही कुछ माँगती रहती थी। अत: मैंने निश्चित रूप से समझ लिया था कि संसार का सारा कारबार बच्चों को खिलाने-पिलाने, सुलाने आदि के लिए ही हो रहा है और इस महत्वपूर्ण कर्तव्य में भूल न होने देने का काम माँ नामधारी जीवों को सौंपा गया है।

और बिन्दा के भी तो माँ थी जिन्हें हम पंडिताइन चाची और बिन्दा नयी अम्मा कहती थी। वे अपनी गोरी, मोटी देह को रंगीन साड़ी से सजे-कसे, चारपाई पर बैठ कर फूले गाल और चिपटी-सी नाक के दोनों ओर नीले काँच के बटन सी चमकती हुई आँखों से युक्त मोहन को तेल मलती रहती थी। उनकी विशेष कारीगरी से सँवारी पाटियों के बीच में लाल स्याही की मोटी लकीर-सा सिन्दूर उनींदी सी आँखों में काले डोरे के समान लगने वाला काजल, चमकीले कर्णफूल, गले की माला, नगदार रंग-बिरंगी चूडियाँ और घुँघरूदार बिछुए मुझे बहुत भाते थे, क्योंकि यह सब अलंकार उन्हें गुड़िया की समानता दे देते थे।

यह सब तो ठीक था; पर उनका व्यवहार विचित्र-सा जान पड़ता था। सर्दी के दिनों में जब हमें धूप निकलने पर जगाया जाता था, गर्म पानी से हाथ मुँह धुलाकर मोजे, जूते और ऊनी कपड़ों से सजाया जाता था और मना-मनाकर गुनगुना दूध पिलाया जाता था, तब पड़ोस के घर में पंडिताइन चाची का स्वर उच्च-से-उच्चतर होता रहता था। यदि उस गर्जन-तर्जन का कोई अर्थ समझ में न आता, तो मैं उसे श्यामा के रँभाने के समान स्नेह का प्रदर्शन भी समझ सकती थी; परन्तु उसकी शब्दावली परिचित होने के कारण ही कुछ उलझन पैदा करने वाली थी। 'उठती है या आऊँ', 'बैल के-से दीदे क्या निकाल रही है', 'मोहन का दूध कब गर्म होगा', 'अभागी मरती भी नहीं', आदि वाक्यों में जो कठोरता की धारा बहती रहती थी, उसे मेरा अबोध मन भी जान ही लेता था।

कभी-कभी जब मैं ऊपर की छत पर जाकर उस घर की कथा समझने का प्रयास करती, तब मुझे मैली धोती लपेटे हुए बिन्दा ही आँगन से चौके तक फिरकनी-सी नाचती दिखाई देती। उसका कभी झाड़ू देना,

कभी आग जलाना, कभी आँगन के नल से कलसी में पानी लाना, कभी नयी अम्मा को दूध का कटोरा देने जाना, मुझे बाजीगर के तमाशा जैसे लगता था; क्योंकि मेरे लिए तो वे सब कार्य असम्भव-से थे। पर जब उस विस्मित कर देने वाले कौतुक की उपेक्षा कर पंडिताइन चाची का कठोर स्वर गूँजने लगता, जिसमें कभी-कभी पंडित जी की घुड़की का पुट भी रहता था, तब न जाने किस दुःख की छाया मुझे घेरने लगती थी। जिसकी सुशीलता का उदाहरण देकर मेरे नटखटपन को रोका जाता था, वही बिन्दा घर में चुपके-चुपके कौन-सा नटखटपन करती रहती है, इसे बहुत प्रयत्न करके भी मैं न समझ पाती थी। मैं एक भी काम नहीं करती थी और रात-दिन ऊधम मचाती रहती; पर मुझे तो माँ ने न मर जाने की आज्ञा दी और न आँखे निकाल लेने का भय दिखाया। एक बार मैंने पूछा भी – 'क्या पंडिताइन चाची तुम्हारी तरह नहीं है?' माँ ने मेरी बात का अर्थ कितना समझा यह तो पता नहीं, उनके संक्षिप्त 'हैं' से न बिन्दा की समस्या का समाधान हो सका और न मेरी उलझन सुलझ पायी।

बिन्दा मुझसे कुछ बड़ी ही रही होगी; परन्तु उसका नाटापन देखकर ऐसा लगता था, मानों किसी ने ऊपर से दबाकर उसे कुछ छोटा कर दिया हो। दो पैसों में आने वाली खँजड़ी के ऊपर चढ़ी हुई झिल्ली के समान पतले चर्म से मढ़े और भीतर की हरी-हरी नसों की झलक देने वाले उसके दुबले हाथ-पैर न जाने किस अज्ञात भय से अवसन्न रहते थे। कहीं से कुछ आहट होते ही उसका विचित्र रूप से चौंक पड़ना और पंडिताइन चाची का स्वर कान में पड़ते ही उसके सारे शरीर का थरथरा उठना, मेरे विस्मय को बढ़ा ही नहीं देता था, प्रत्युत् उसे भय में बदल देता था। और बिन्दा की आँखें तो मुझे पिंजड़ें में बन्द चिड़िया की याद दिलाती थीं।

एक बार जब दो-तीन करके तारे गिनते-गिनते उसने एक चमकीले तारे की ओर उँगली उठाकर कहा – 'वह रही मेरी अम्मा' तब तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। क्या सबकी एक अम्मा तारों में होती है और एक घर में? पूछने पर बिन्दा ने अपने ज्ञान-कोष में से कुछ कण मुझे दिये और तब मैंने समझा कि जिस अम्मा को ईश्वर बुला लेता है, वह तारा बनकर ऊपर से बच्चों को देखती रहती है और जो बहुत सजधज से घर में आती है, वह बिन्दा की नयी अम्मा जैसी होती है। मेरी बुद्धि सहज ही पराजय स्वीकार करना नहीं जानती, इसी से मैंने सोचकर कहा – 'तुम

नयी अम्मा को पुरानी अम्मा क्यों नहीं कहती, फिर वे न नयी रहेंगी और न डाँटेंगी।'

बिन्दा को मेरा उपाय कुछ जँचा नहीं, क्योंकि वह तो अपनी पुरानी अम्मा को खुली पालकी में लेटकर जाते और नयी को बन्द पालकी में बैठकर आते देख चुकी थी, अत: किसी को भी पदच्युत करना उसके लिए कठिन था।

पर उसकी कथा से मेरा मन तो सचमुच आकुल हो उठा, अत: उसी रात को मैंने माँ से बहुत अनुनय पूर्वक कहा – 'तुम कभी तारा न बनना, चाहे भगवान कितना ही चमकीला तारा बनावें।' माँ बेचारी मेरी विचित्र मुद्रा पर विस्मित होकर कुछ बोल भी न पायी थी कि मैंने अवकुंठित भाव से अपना आशय प्रकट कर दिया – 'नहीं तो पंडिताइन चाची जैसी नयी अम्मा पालकी में बैठकर आ जायेगी और फिर मेरा दूध, बिस्कुट, जलेबी सब बन्द हो जायेगी और मुझे बिन्दा बनना पड़ेगा।' माँ का उत्तर तो मुझे स्मरण नहीं, पर इतना याद है कि उस रात उसकी धोती का छोर मुट्ठी में दबाकर ही मैं सो पायी थी।

बिन्दा के अपराध तो मेरे लिए अज्ञात थे; पर पंडिताइन चाची के न्यायालय से मिलने वाले दण्ड के सब रूपों से मैं परिचित हो चुकी थी। गर्मी की दोपहर में मैंने बिन्दा को आँगन की जलती धरती पर बार-बार पैर उठाते और रखते हुए घंटों खड़े देखा था, चौके के खम्भे से दिन-दिन भर बँधा पाया था और भूख से मुरझाये मुख के साथ पहरों नयी अम्मा और खटोले में सोते मोहन पर पँखा झलते देखा था। उसे अपराध का ही नहीं, अपराध के अभाव का भी दण्ड सहना पड़ता था, इसी से पंडित जी की थाली में पंडिताइन चाची का ही काला मोटा और घुँघराला बाल निकलने पर भी दण्ड बिन्दा को मिला। उसके छोटे-छोटे हाथों से धुल न सकने वाले, उलझे, तेलहीन बाल भी अपने स्वाभाविक भूरेपन और कोमलता के कारण मुझे बड़े अच्छे लगते थे। जब पंडिताइन चाची की कैंची ने उन्हें कूड़े के ढेर पर, बिखरा कर उनके स्थान को बिल्ली की काली धारियों जैसी रेखाओं से भर दिया, तो मुझे रूलाई आने लगी; पर बिन्दा ऐसे बैठी रही, मानों सिर और बाल दोनों नयी अम्मा के ही हों।

और एक दिन याद आता है। चूल्हे पर चढ़ाया दूध उफना जा रहा था। बिन्दा ने नन्हें-नन्हें हाथों से दूध की पतीली उतारी अवश्य; पर

वह उसकी उँगलियों से छूट कर गिर पड़ी। खौलते दूध से जले पैरों के साथ दरवाजे पर खड़ी बिन्दा का रोना देख मैं तो हतबुद्धि सी हो रही। पंडिताइन चाची से कह कर वह दवा क्यों नहीं लगवा लेती, यह समझना मेरे लिए कठिन था। उस पर जब बिन्दा मेरा हाथ अपने जोर से धड़कते हुए हृदय से लगाकर कहीं छिपा देने की आवश्यकता बताने लगी, तब तो मेरे लिए सब कुछ रहस्यमय हो उठा।

उसे मैं अपने घर में खींच लाई अवश्य; पर न ऊपर के खण्ड में माँ के पास ले जा सकी और न छिपाने का स्थान खोज सकी। इतने में दीवारें लाँघ कर आने वाले, पंडिताइन चाची के उग्र स्वर ने भय से हमारी दिशाएँ रूँध दीं, इसी से हड़बड़ाहट में हम दोनों उस कोठरी में जा घुसीं, जिसमें गाय के लिए घास भरी जाती थी। मुझे तो घास की पत्तियाँ भी चुभ रही थीं, कोठरी का अंधकार भी कष्ट दे रहा था; पर बिन्दा अपने जले पैरों को घास में छिपाये और दोनों ठंडे हाथों से मेरा हाथ दबाये ऐसे बैठी थी, मानों घास का चुभता हुआ ढेर रेशमी बिछौना बन गया हो।

मैं तो शायद सो गई थी; क्योंकि जब घास निकालने के लिए आया हुआ गोपी इस अभूतपूर्व दृश्य की घोषणा करने के लिए कोलाहल मचाने लगा, तब मैंने आँखें मलते हुए पूछा 'क्या सबेरा हो गया?'

माँ ने बिन्दा के पैरों पर तिल का तेल और चूने का पानी लगाकर जब अपने विशेष सन्देशवाहक के साथ उसे घर भिजवा दिया, तब उसकी क्या दशा हुई, यह बताना कठिन है; पर इतना तो मैं जानती हूँ कि पंडिताइन चाची के न्यायविधान में न क्षमा का स्थान था, न अपील का अधिकार।

फिर कुछ दिनों तक मैंने बिन्दा को घर-आँगन में काम करते नहीं देखा। उसके घर जाने से माँ ने मुझे रोक दिया था; पर वे प्राय: कुछ अंगूर और सेब लेकर वहाँ हो आती थीं। बहुत खुशामद करने पर रुकिया ने बताया कि उस घर में महारानी आई हैं। 'क्या वे मुझसे नहीं मिल सकतीं' पूछने पर वह मुँह में कपड़ा ठूँस कर हँसी रोकने लगी। जब मेरे मन का कोई समाधान न हो सका, तब मैं एक दिन दोपहर को सबकी आँख बचाकर बिन्दा के घर पहुँची। नीचे के सुनसान खण्ड में बिन्दा अकेली एक खाट पर पड़ी थी। आँखें गड्ढे में धँस गयी थीं, मुख दानों से भर कर न जाने कैसा हो गया था और मैली-सी चादर के नीचे छिपा शरीर बिछौने से

भिन्न ही नहीं जान पड़ता था। डाक्टर, दवा की शीशियाँ, सिर पर हाथ फेरती हुई माँ और बिछौने के चारों चक्कर काटते हुए बाबूजी के बिना भी बीमारी का अस्तित्व है, यह मैं नहीं जानती थी, इसी से उस अकेली बिन्दा के पास खड़ी होकर मैं चकित-सी चारों ओर देखती रह गयी। बिन्दा ने ही कुछ संकेत और कुछ अस्पष्ट शब्दों में बताया कि नयी अम्मा मोहन के साथ ऊपर के खण्ड में रहती हैं, शायद चेचक के डर से। सबेरे-शाम बरौनी आकर उसका काम कर जाती है।

फिर तो बिन्दा को देखना सम्भव न हो सका; क्योंकि मेरे इस आज्ञा-उल्लंघन से माँ बहुत चिन्तित हो उठी थीं।

एक दिन सबेरे ही रुकिया ने उनसे न जाने क्या कहा कि वे रामायण बन्द कर बार-बार आँखें पोंछती हुई बिन्दा के घर चल दीं। जाते-जाते वे मुझे बाहर न निकलने का आदेश देना नहीं भूली थीं, इसी से इधर-उधर से झाँककर देखना आवश्यक हो गया। रुकिया मेरे लिए त्रिकालदर्शी से कम न थी; परन्तु वह विशेष अनुनय-विनय के बिना कुछ बताती ही नहीं थी और उससे अनुनय-विनय करना मेरे आत्म-सम्मान के विरुद्ध पड़ता था। अत: खिड़की से झाँककर मैं बिन्दा के दरवाजे पर जमा हुए आदमियों के अतिरिक्त और कुछ न देख सकी और इस प्रकार की भीड़ से विवाह और बारात का जो सम्बन्ध है, उसे मैं जानती थी। तब क्या उस घर में विवाह हो रहा है, और हो रहा है तो किसका? आदि प्रश्न मेरी बुद्धि की परीक्षा लेने लगे। पंडित जी का विवाह तो तब होगा, जब दूसरी पंडिताइन चाची भी मर कर तारा बन जायेंगी और बैठ न सकने वाले मोहन का विवाह सम्भव नहीं, यही सोच-विचार कर मैं इस परिणाम तक पहुँची कि बिन्दा का विवाह हो रहा है और उसने मुझे बुलाया तक नहीं। इस अचिन्त्य अपमान से आहत मेरा मन सब गुड़ियों को साक्षी बनाकर बिन्दा को किसी भी शुभ कार्य में न बुलाने की प्रतिज्ञा करने लगा।

कई दिन तक बिन्दा के घर झाँक-झाँककर जब मैंने माँ से उसके ससुराल से लौटने के सम्बन्ध में प्रश्न किया, तब पता चला कि वह तो अपनी आकाश-वासिनी अम्मा के पास चली गयी। उस दिन से मैं प्राय: चमकीले तारे के आस-पास फैले छोटे तारों में बिन्दा को ढूँढ़ती रहती; पर इतनी दूर से पहचानना क्या सम्भव था?

तब से कितना समय बीत चुका है, पर बिन्दा और उसकी नयी अम्मा की कहानी शेष नहीं हुई। कभी हो सकेगी या नहीं, इसे कौन बता सकता है?

कठिन शब्दार्थ :

सलज्ज = लाज से; बिछुए = पाँव की उँगलियों का एक गहना; फिरकनी = फिरकी/चकरी नामक खिलौना; खँजड़ी = खँजरी, छोटी डफली; अवसन्न = खिन्न, उदास; पदच्युत = पद से हटाना; चेचक = शीतला नामक रोग (small pox)।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) महादेवी वर्मा की बाल्य सखी का नाम लिखिए।
२) महादेवी वर्मा को किसका अनुभव बहुत संक्षिप्त था?
३) पंडिताइन चाची के अलंकार उन्हें किसकी समानता दे देते थे?
४) बिन्दा का काम लेखिका को किसके तमाशे जैसा लगता था?
५) बिन्दा की आँखें लेखिका को किसकी याद दिलाती थीं?
६) बिन्दा ने तारे गिनते-गिनते एक चमकीले तारे की ओर उँगली उठाकर क्या कहा?
७) महादेवी वर्मा ने रात को अपनी माँ से बहुत अनुनय पूर्वक क्या कहा?
८) महादेवी वर्मा किसके न्यायालय से मिलने वाले दण्ड से परिचित हो चुकी थीं?
९) महादेवी वर्मा को किसकी पत्तियाँ चुभ रही थीं?
१०) किसने बिन्दा के पैरों पर तिल का तेल लगाया?
११) महादेवी वर्मा के लिए कौन त्रिकालदर्शी से कम न थी?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) महादेवी वर्मा को बिन्दा की याद क्यों आ गई?
२) महादेवी वर्मा को पंडिताइन चाची का कौन-सा रूप आकर्षित करता था?

३) महादेवी वर्मा के कभी-कभी छत पर जाकर देखने पर बिन्दा क्या-क्या करते दिखाई देती थी?

४) बिन्दा अपनी नयी अम्मा से किस प्रकार डरती थी?

५) महादेवी वर्मा ने दोपहर के समय सबकी आँख बचाकर बिन्दा के घर पहुँचने पर क्या देखा?

६) बिन्दा के घर के सामने भीड़ देखकर लेखिका के मन में क्या विचार आने लगे?

III) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे ?

१) 'क्या पंडिताइन चाची तुम्हारी तरह नहीं है?'

२) 'वह रही मेरी अम्मा।'

३) 'तुम कभी तारा न बनना, चाहे भगवान कितना ही चमकीला तारा बनावें।'

IV) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) 'उठती है या आऊँ', 'बैल के-से दीदे क्या निकाल रही है', 'मोहन का दूध कब गर्म होगा', 'अभागी मरती भी नहीं आदि।

२) 'तुम नयी अम्मा को पुरानी अम्मा क्यों नहीं कहती, फिर वे न नयी रहेंगी और न डाँटेंगी।'

३) ... पंडिताइन चाची के न्यायविधान में न क्षमा का स्थान था, न अपील का अधिकार।

V) कोष्ठक में दिए गए कारक चिन्हों से रिक्त स्थान भरिए :

(को, की, पर, से)

१) बिन्दा .... समस्या का समाधान न हो सका।

२) बिन्दा .... मेरा उपाय कुछ जँचा नहीं।

३) उसके घर जाने .... माँ ने मुझे रोक दिया था।

४) चूल्हे ...... चढ़ाया दूध उफना जा रहा था।

VI) अन्य लिंग रूप लिखिए :
भिखारिन, पंडिताइन, लेखिका, बैल, चाची, नाना, दादी, विद्यार्थिनी, बालिका।

VII) अन्य वचन रूप लिखिए :
बच्चा, कोठरी, सीढ़ी, मुद्रा, पंखा, दरवाजे, उँगली।

VIII) विलोम शब्द लिखिए :
दुर्बल, स्पष्ट, ज्ञात, मृत्यु, स्वर्ग, पुण्य, सुन्दर, न्याय, पराजय, स्वाभाविक, ऊपर।

IX) योग्यता विस्तार :
महादेवी वर्मा के अन्य रेखाचित्रों को पढ़कर जानकारी प्राप्त कीजिए।

* * * * * *

५. बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर

— शान्ति स्वरूप बौद्ध

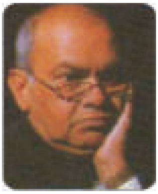

लेखक परिचय :

शांति स्वरूप बौद्ध जी का जन्म २ अक्टूबर १९४९ में फराशखाना, पुरानी दिल्ली में हुआ। आपकी माता भुरियादेवी तथा पिता परिनिब्बुत्त लाल हरिचंद मौर्य थे। आप जन्मजात प्रतिभाशाली होने के साथ ही, बौद्ध धम्म पर भारत वर्ष के लगभग सभी प्रमुख नगरों में 'धम्म प्रवचन' दिया है। आपने विशेष रूप से आस्ट्रेलिया, इंग्लैंड, फ्रान्स आदि देशों की धम्म यात्रा की है। २१ वर्ष के सेवाकाल के पश्चात् आप सरकारी नौकरी को ठुकराकर, सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक सुधार की क्रान्ति के लिए समर्पित हैं। आपकी सामाजिक एवं साहित्यिक सेवाओं के लिए अनेक संस्थाओं ने सम्मानित किया है। आपकी महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं — 'महाबोधी राहुल सांकृत्यायन', 'बोधगया', 'सारनाथ', 'भीम जीवनी', 'अशोक', 'भगवान बुद्ध', 'महात्मा ज्योतिराव फूले' आदि।

प्रस्तुत जीवनी में डॉ.भीमराव अंबेडकर के संघर्षपूर्ण जीवन का सजीव एवं मार्मिक चित्रण है। उन्होंने जीवन की कठिन परिस्थितियों से जूझते हुए अपनी शिक्षा पूरी की। वंचित एवं पीड़ित समाज को जागरूक करना एवं उनके अधिकारों के प्रति सचेत करना ही उनके जीवन का मूल ध्येय रहा।

अंबेडकर के मूल मंत्र — 'शिक्षा, संगठन एवं संघर्ष' से विद्यार्थियों को भलीभाँति परिचित कराने के उद्देश्य से इस जीवनी को संकलित किया गया है।

महापुरुष राजमहलों में ही नहीं, खेत-खलिहानों में भी जन्म लेते हैं। ऊँची जातियों में ही नहीं, वे कभी-कभी निम्न जाति में भी पैदा होते हैं। इस बात को अच्छी तरह समझने के लिए हमें डॉ. बी.आर. अंबेडकर के जीवन चरित्र पर दृष्टि डालनी होगी। डॉ. बी.आर. अंबेडकर का जन्म १४ अप्रैल १८९१ में रामजी सूबेदार के घर में माता भीमाबाई की कोख से हुआ था। उस समय रामजी सूबेदार 'महू' नामक छावनी में सैनिक के पद पर थे। वे महाराष्ट्र की महार जाति से संबंध रखते थे। महार जाति महाराष्ट्र में अछूत समझी जाती है। इस कारण महारों को सामाजिक अत्याचार और तरह-तरह के बहिष्कार झेलने पड़ते थे।

जन्म के समय डॉ. अंबेडकर का नाम भीमराव रखा गया था। मगर परिवार वाले उन्हें 'भीवा' कहकर पुकारते थे। भीवा को बचपन से ही छूतछात का कटु अनुभव सहन करना पड़ा। उन दिनों अछूतों के लिए मंदिरों, कुँओं की तरह पाठशाला के भी दरवाजे बंद थे। मगर सेना में इन सामाजिक नियमों की कठोरता में कुछ ढील थी। बहुत कठिनाई से ही सही, पर भीवा का सैनिक स्कूल में प्रवेश हो गया।

प्रवेश तो हो गया, मगर सामाजिक भेदभाव और छूतछात ने भीवा का पीछा नहीं छोड़ा। बालक भीवा को अपने बैठने का टाट अपने साथ घर से ही ले जाना पड़ता था। पाठशाला में उन्हें कक्षा के भीतर अन्य विद्यार्थियों के साथ बैठने की मनाही थी। वे अपनी कक्षा के बाहर सब छात्रों के जूतों के बीच दरवाजे के बाहर बैठते थे। सामाजिक अत्याचारों की निर्दयता देखिए – भीमराव को पानी के घड़े को भी छूने की इजाजत नहीं थी। कारण यह था कि अछूतों के छू लेने से घड़े का जल भ्रष्ट हो जाता। चाहे कितनी भी प्यास लगे, बेशक प्यास के मारे प्राण ही क्यों न निकल जाएँ, मगर प्यासा अछूत घड़े से पानी लेकर नहीं पी सकता था। किसी चपरासी की कृपा हो गई, तो पानी मिल जाता, नहीं तो घर आकर ही पानी पीना पड़ता।

रामजी सूबेदार शिक्षा और अनुशासन का महत्त्व भली प्रकार जानते थे। उन्होंने भीमराव को भी इसका महत्त्व अच्छी तरह समझाया। यही कारण है कि सब प्रकार के अत्याचार, अनाचार और भेदभाव सहन करके भी वे शिक्षा प्राप्त करने में जुटे रहे।

भीमराव हाईस्कूल में पहुँचे, तो छूतछात की काली छाया उनके साथ यहाँ भी आ धमकी। गुरुजी ने एक प्रश्न पूछा। किसी ने उत्तर नहीं दिया। भीमराव प्रश्न का उत्तर लिखने के लिए ज्यों ही ब्लैक बोर्ड की तरफ चले, त्यों ही कक्षा के सवर्ण छात्रों ने शोर मचाते हुए कहा – रोको! इस अछूत को। ब्लैक बोर्ड के नीचे रखा हमारा भोजन इसके छूने से भ्रष्ट हो जाएगा। भीमराव इस प्रकार के असंख्य अपमान के खून के घूँट चुपचाप पी जाते।

सन् १९०७ में भीमराव ने मैट्रिक की परीक्षा पास की। एक अछूत बालक के लिए यह महान उपलब्धि थी। इस अवसर पर भीमराव के सम्मान में एक सभा का आयोजन किया गया जिसमें कृष्णजी अर्जुन केलुस्कर जी ने अपनी लिखी पुस्तक 'बुद्ध जीवनी' भीमराव को भेंट की। इसी समय रामजी सूबेदार ने घोषणा की कि हमारी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है, फिर भी मैं भीमराव को उच्च शिक्षा दिलाने का भरसक प्रयास करूँगा।

१७ वर्ष की आयु में भीमराव का विद्यार्थी जीवन में ही ९ वर्ष की रमाबाई के साथ विवाह हो गया। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भीमराव बंबई के एलफिंस्टन कालेज में दाखिल हो गए। उस समय एक अछूत के लिए यह बहुत अनोखी बात थी। मगर रामजी सूबेदार भीमराव को और पढ़ाने में कठिनाई महसूस करने लगे, तो केलुस्कर गुरुजी भीमराव को बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड जी के पास ले गए। भीमराव ने अपनी विद्वत्ता एवं बुद्धिमत्ता से महाराजा का दिल जीत लिया। महाराजा ने भीमराव की उच्च शिक्षा के लिए रु.२५/- मासिक छात्रवृत्ति स्वीकृत कर दी। समाज की क्रूर जाति-व्यवस्था उन्हें पग-पग पर पीड़ा पहुँचाती रही। वे संस्कृत पढ़ना चाहते थे, मगर अछूत होने के कारण उन्हें संस्कृत भाषा नहीं पढ़ने दी गई। दृढ़ इच्छाशक्ति के धनी भीमराव ने १९१२ में अंग्रेजी और फारसी विषयों के साथ बंबई विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा पास की थी। वे बी.ए. की परीक्षा पास करने वाले पहले महार थे।

सन् १९१३ में अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध भीमराव बड़ौदा स्टेट फोर्स में लैफ्टीनेंट भर्ती हो गए। भीमराव की भर्ती के करीब १५ दिन बाद २ फरवरी १९१३ को उनके पिता रामजी सूबेदार की मृत्यु हो गई।

भीमराव पर परिवार के दायित्व का भार बढ़ गया। मगर उनके मन में और भी ऊँची शिक्षा पाने की ललक बनी हुई थी।

इसी दौरान बड़ौदा रियासत की तरफ से मेधावी छात्रों को उच्च शिक्षा के लिए विदेश भेजे जाने की योजना के तहत भीमराव का चयन हो गया। अमेरिका में शिक्षा प्राप्त करने के बदले में भीमराव को एक शपथ-पत्र पर हस्ताक्षर करने पड़े जिसके अनुसार शिक्षा प्राप्त करके बड़ौदा रियासत में सेवा करनी थी। जुलाई १९१३ के अंत में भीमराव अंबेडकर न्यूयार्क (अमेरिका) में जाकर कोलम्बिया विश्वविद्यालय में दाखिल हो गए। उस समय एक अछूत युवक का विदेश में जाकर शिक्षा पाना कल्पना से परे की बात थी।

अमेरिका में जाकर भीमराव अंबेडकर को स्वतंत्र एवं खुला माहौल मिला, जहाँ किसी भी प्रकार का जातीय बंधन नहीं था और न ही जाति-आधारित भेदभाव। भीमराव का पढ़ाई में खूब मन लगा। अमेरिका में उदार, प्रेमपूर्ण और समानता के व्यवहार ने उन्हें धनाभाव के कारण भूखा-प्यासा रहकर भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। वे शराब, सिगरेट आदि से दूर रहकर १८ घंटे पढ़ा करते थे। इसी दौरान उनकी नजर कमज़ोर हो गई और उन्हें चश्मा लगाना पड़ा। अमेरिका में उन्होंने राजनीति शास्त्र, नैतिक दर्शनशास्त्र, मानव विज्ञान, समाज विज्ञान, अर्थशास्त्र, आदि विषय पढ़े। सन् १९१५ में उन्होंने एम.ए. तथा १९१६ में पीएच.डी. की डिग्री प्राप्त की। अब वे भीमराव अंबेडकर से डॉ.भीमराव अंबेडकर हो गए।

सन् १९१६ में ही डॉ. अंबेडकर और अधिक शिक्षा पाने के लिए लंडन पहुँचे। लंडन के प्रोफेसरों ने उन्हें डॉक्टरेट ऑफ साइन्स (डी.ए.सी.) की तैयारी करने की अनुमति दे दी। उन्होंने तुरंत शोधकार्य आरंभ कर दिया।

इसी बीच उन्हें बड़ौदा के दीवान ने एक पत्र लिखा कि छात्रवृत्ति की अवधि खत्म हो चुकी है। अत: तुरंत वापस लौटकर शपथ-पत्र की शर्तों के अनुसार बड़ौदा रियासत की दस वर्ष तक सेवा करो। डॉ. अंबेडकर को अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी। भारत रवाना होने से पूर्व उन्होंने विश्वविद्यालय से यह अनुमति ले ली कि अक्टूबर १९२१ तक अधूरी पढ़ाई पूरी की जा सकती है। २१ अगस्त १९१७ को डॉ. अंबेडकर बंबई पहुँचे।

बड़ौदा रियासत की शर्त के अनुसार डॉ. अंबेडकर ने सैन्य सचिव के पद पर कार्य आरंभ किया। मगर इतने उदार महाराजा की बड़ौदा नगरी में संसार के महान विद्वान को छूतछात की दूषित भावना के कारण रहने के लिए कोई मकान नहीं मिला। वे नाम बदलकर एक पारसी धर्मशाला में रहने लगे। मगर पारसियों को जब उनकी जाति का पता चला, तो उन्होंने भी डॉ. अंबेडकर को अपमानित करके खदेड़ दिया। कितना मजबूत रहा होगा डॉ.अंबेडकर का जिगर, जो इतने जुल्म सह कर भी प्रगति पथ पर अग्रसर होते रहे। डॉ. अंबेडकर ने एक जगह लिखा भी है – 'वर्षों का समय बीत जाने पर भी पारसी सराय में मेरे साथ हुए दुर्व्यवहार का स्मरण करते ही मेरी आँखों में आँसू छलक पड़ते हैं।'

अपनी योग्यता के बल पर और जीवन के प्रगति पथ पर तेजी से अग्रसर होने के दृढ़ संकल्प के कारण डॉ. अंबेडकर सन् १९१८ में रू.४५०/- के मासिक वेतन पर सिडनेहम कालेज, मुंबई में प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हुए। यह नौकरी उन्होंने वेतन में से कुछ पैसे बचाकर लंडन जाकर अधूरी पढ़ाई पूरी करने के लिए की थी। सिडनेहम कालेज में भी जातिवादी मानसिकता के सवर्णों ने उन्हें प्रताड़ित करना नहीं छोड़ा।

जातीय आधार पर होने वाले अत्याचार कभी-कभी डॉ. अंबेडकर को यह सोचने के लिए बाध्य कर देते कि इस अन्याय को मिटाने के लिए हमें बंदूक उठा लेनी चाहिए। मगर धन्य हैं डॉ. अंबेडकर उन्होंने तलवार या बंदूक का नहीं अहिंसात्मक तरीके से अपने समाज के कष्टों को दूर करने का निर्णय लिया। अब उन्होंने अपने लिए या अपने बीबी-बच्चों के लिए नहीं, अपितु सदियों से पीड़ित समाज की पीड़ा दूर करने का बीड़ा उठाया।

उन्होंने वंचित एवं पीड़ित समाज को जागरूक करना आरंभ किया। इस दिशा में सर्वप्रथम उन्होंने 'मूकनायक' यानी 'गूंगों का नेता' नामक समाचार पत्र आरंभ किया। इस कार्य में कोल्हापुर के महाराज शाहूजी महाराजा ने भी उनकी सहायता की।

डॉ. अंबेडकर ने प्रोफेसर की नौकरी करते समय जो पैसे कमाए, उनमें कुछ कर्जे के पैसे मिलाकर वे दोबारा अपनी अधूरी पढ़ाई को पूरा करने के लिए सन् १९२० में फिर लंडन चले गए। वहाँ पर संघर्षपूर्ण अध्ययन के बल पर उन्होंने सन् १९२१ में 'ब्रिटिश भारत में साम्राज्य

पूंजी का प्रादेशिक विकेंद्रीकरण' विषय पर शोधकार्य पूरा करके मास्टर ऑफ साइंस की डिग्री प्राप्त की। सन् १९२३ में डॉ. भीमराव अंबेडकर एम.ए., पीएच.डी., एम.एस.सी., डी.एस.सी, और बार-एट-लॉ बनकर बंबई आए।

लंडन से लौटकर उन्होंने बैरिस्टर बनकर वकालत करने का निश्चय किया। इसी के साथ उन्होंने अपनी योग्यता के बल पर समाज कल्याण के कार्य को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' का गठन किया। सन् १९२४ में उन्होंने 'समता सैनिक दल' की स्थापना की।

२४ जनवरी १९२४ को बंबई विधान परिषद में डॉ. अंबेडकर ने बजट भाषण प्रस्तुत किया। उन्होंने बंबई विधान परिषद का सदस्य रहते हुए जन कल्याण के बहुत से कार्य किए। इसी बीच उन्हें पता चला कि महाड़ नामक स्थान पर हिंदुओं के धर्म-स्थानों, कुओं व तालाब पर कुत्ते-बिल्ली, गाय-भैंस व गधे-सूअर तो पानी पी सकते हैं, पर अछूत लोग नहीं। यह तो जातीय भेदभाव की पराकाष्ठा थी।

डॉ. अंबेडकर जानते थे कि स्वतंत्रता व अधिकार भीख में नहीं मिलते, इन्हें पाने के लिए तो सिर कटवाने पड़ते हैं। डॉ. अंबेडकर ने अछूतों को संगठित किया और १९-२० मार्च १९२७ को महाड़ में एक विशाल सभा का आयोजन किया। संसार के मानव इतिहास की यह ऐसी घटना थी, शायद ही कोई विदेशी विश्वास करेगा कि भारत के अछूतों को अपनी जान खतरे में डालकर पानी पीने के लिए संघर्ष करना पड़ा था।

इस संघर्ष में डॉ. अंबेडकर को सफलता मिली और इस घटना की सफलता के साथ डॉ. अंबेडकर अछूतों के ईमानदार नेता के रूप में स्थापित हुए।

भारत की भावी शासन-प्रणाली व संविधान के बारे में रूप-रेखा तय करने के लिए ब्रिटिश सम्राट ने एक गोलमेज सम्मेलन लंडन में आयोजित किया। इस सम्मेलन में ८९ भारतीय प्रतिनिधियों सहित भारत के अछूतों की ओर से डॉ. अंबेडकर ने अपने प्रभावशाली भाषण में कहा, ''वे ब्रिटिश-भारत की जनसंख्या के पाँचवे भाग का, जो कि फ्रांस या इंग्लैंड की आबादी से भी अधिक है, मत व्यक्त कर रहे हैं।'' डॉ. अंबेडकर ने सिंह-गर्जना करते हुए कहा, 'जब हम अपनी वर्तमान स्थिति

और ब्रिटिश-शासन से पहले की स्थिति की तुलना करते हैं, तो हम पाते हैं कि, हम उन्नति करने की बजाय व्यर्थ में अपना समय बर्बाद कर रहे हैं।'

डॉ. अंबेडकर गोलमेज सम्मेलन में डटकर लड़े, निर्भयता से गरजे और अछूतों के पृथक निर्वाचन का अधिकार पाने में सफल हुए।

गांधी जी सहित हिन्दू नेताओं ने लिखित में 'पूनापैक्ट' नाम का एक समझौता किया, जिसके तहत अछूतों की प्रगति के लिए नौकरियों में और शिक्षा के क्षेत्र में आरक्षण की व्यवस्था की गई।

२७ मई १९३५ को उनकी पत्नी रमाबाई का देहांत हो गया। उन्होंने बहुत दु:ख माना और भगवा वस्त्र पहनकर संन्यास लेने का निर्णय कर लिया। मगर परिवार के बड़ों और मित्रों के समझाने-बुझाने पर उन्होंने भगवा वस्त्र त्यागकर समाज-कल्याण के लिए संघर्ष की राह पकड़ने का निर्णय लिया। इस समय भगवा वस्त्र धारण करने के कारण लोगों ने उन्हें 'बाबासाहेब' कहना आरंभ कर दिया।

बाबासाहेब गजब के पुस्तक प्रेमी थे। पुस्तकों को वे अपनी पत्नी और बच्चों से अधिक मानते थे। उनका पुस्तकालय किसी के भी व्यक्तिगत पुस्तकालय से बहुत विशाल था।

बाबासाहेब की विद्वत्ता और योग्यता से प्रभावित होकर भारत के गवर्नर ने उन्हें सन् १९४२ में अपने मंत्रिमंडल में श्रममंत्री का पद सौंपा। जब भारतवर्ष के स्वतंत्र होने की बात आई, तो अंग्रेजों ने यह सुनिश्चित करना चाहा कि हमारी शासन-व्यवस्था किस और कैसे संविधान के आधीन चलेगी। देश में संविधान बनाने वाला उनसे योग्य कोई था नहीं, अत: भारत के संविधान निर्माण के लिए उन्हें मसौदा समिति का अध्यक्ष चुना गया। उन्हीं के द्वारा हमारा संविधान लिखा गया।

संविधान पूरा होने पर भारत के प्रथम राष्टपति डॉ.राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था – 'डॉ. अंबेडकर को संविधान मसौदा समिति का अध्यक्ष बनाने से अधिक अच्छा कार्य हम नहीं कर पाए।' बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर को भारतीय संविधान का जनक माना जाता है। स्वतंत्र भारत में उन्हें नेहरू मंत्रिमंडल में कानून मंत्री बनाया गया। कानून मंत्री के रूप में उन्होंने अनेक अनूठे कार्य किए।

१४ अक्तूबर १९५६ को उन्होंने अपने पाँच लाख अनुयायियों के साथ भंते चंद्रमणि महाथेरो के हाथों बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। वे बौद्ध

बन गये। ६ दिसंबर १९५६ को बाबासाहेब का परिनिर्वाण हुआ।

दलितों के मसीहा एवं भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. भीमराव अंबेडकर को मरणोपरांत ''भारत रत्न'' के सर्वोच्च सम्मान से विभूषित किये जाने पर देश में सर्वत्र हर्ष और संतोष प्रकट किया गया।

कठिन शब्दार्थ :

निर्दयता = निष्ठुरता, कठोर; पराकाष्ठा = चरमसीमा; दमन = दबाने की क्रिया; छूतछात = अस्पृश्यता।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) डॉ. बी.आर. अंबेडकर का जन्म कब हुआ?
२) अंबेडकर की माता का नाम क्या था?
३) रामजी सूबेदार किस गाँव में सैनिक थे?
४) भीमराव ने मैट्रिक परीक्षा कब पास की?
५) कृष्णजी अर्जुन केलुस्कर ने कौन-सी पुस्तक भीमराव को भेंट दी?
६) भीमराव का विवाह किसके साथ हुआ?
७) महाराजा की ओर से भीमराव को मासिक छात्रवृत्ति कितनी मिलती थी?
८) अंबेडकर जी ने बी.ए. की परीक्षा कब पास की?
९) भीमराव जी १९१३ में अमेरिका के किस विश्वविद्यालय में दाखिल हो गए?
१०) डॉ. अंबेडकर ने किस समाज को जागरूक करना आरंभ किया?
११) 'मूक नायक' पत्रिका के संपादक कौन थे?
१२) डॉ. अंबेडकर पत्नी और बच्चों से भी अधिक किसे मानते थे?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) अंबेडकर जी के बाल्य जीवन का परिचय दीजिए।
२) अंबेडकर जी को शिक्षा प्राप्त करते समय किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ा?

३) लंडन के गोलमेज सम्मेलन में अंबेडकर जी ने किन विषयों पर प्रकाश डाला?

४) पत्नी की मृत्यु का डॉ.अंबेडकर पर क्या प्रभाव पड़ा?

III) कोष्ठक में दिए गए कारक चिन्हों से रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :

(के, का, में, के लिए, से)

१) जन्म के समय डॉ. अंबेडकर .... नाम भीमराव रखा गया था।

२) उस समय एक अछूत .... यह बहुत अनोखी बात थी।

३) इसी बीच उन्हें बड़ौदा .... दीवान ने एक पत्र लिखा।

४) आँखों .... आँसू छलक पडते हैं।

V) अन्य लिंग रूप लिखिए :

पंडित, सूबेदार, पिता, नायक, गाय, नारी।

V) निम्नलिखित अनुच्छेद पढ़कर उस पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१७ वर्ष की आयु में भीमराव का विद्यार्थी जीवन में ही ९ वर्ष की रमाबाई के साथ विवाह हो गया। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भीमराव बंबई के एलफिंस्टन कालेज में दाखिल हो गए। उस समय एक अछूत के लिए यह बहुत अनोखी बात थी। मगर रामजी सूबेदार भीमराव को और पढ़ाने में कठिनाई महसूस करने लगे, तो केलुस्कर गुरुजी भीमराव को बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड जी के पास ले गए। भीमराव ने अपनी विद्वत्ता एवं बुद्धिमत्ता से महाराजा का दिल जीत लिया। महाराजा ने भीमराव की उच्च शिक्षा के लिए रु.२५/- मासिक छात्रवृत्ति स्वीकृत कर दी। समाज की क्रूर जाति-व्यवस्था उन्हें पग-पग पर पीड़ा पहुँचाती रही। वे संस्कृत पढ़ना चाहते थे, मगर अछूत होने के कारण उन्हें संस्कृत भाषा नहीं पढ़ने दी गई। दृढ़ इच्छाशक्ति के धनी भीमराव ने १९१२ में अंग्रेजी और पारसी विषयों के साथ बंबई

विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा पास की थी। वे बी.ए. की परीक्षा पास करने वाले पहले महार थे।

प्रश्न :

१) भीमराव का विवाह किसके साथ हुआ?

२) भीमराव बंबई के किस कालेज में दाखिल हो गए?

३) केलुस्कर गुरुजी भीमराव को किस महाराजा के पास ले गये?

४) महाराजा ने भीमराव की उच्च शिक्षा के लिए कितने रुपयों की छात्रवृत्ति स्वीकृत कर दी?

५) भीमराव जी ने बी.ए. की परीक्षा किस वर्ष पास की?

VI) योग्यता विस्तार :

भारतीय संविधान में दिए गए नागरिकों के मूलाधिकारों के संबंध में जानकारी प्राप्त कीजिए।

* * * * * *

६. दिल का दौरा और एनजाइना

(कोरोनरी आर्टरी डिसीज, आई.एच.डी और हार्ट-अटैक)

– डॉ. यतीश अग्रवाल

लेखक परिचय :

डॉ. यतीश अग्रवाल वरिष्ठ चिकित्सक एवं चिकित्सा विज्ञान के सुप्रसिद्ध लेखक हैं। आपने अनेक रोगों के लक्षण और रोग-निदान के उपायों पर कई लेख लिखे हैं। आप संप्रति दिल्ली के सफदरजंग अस्पताल में वरिष्ठ आचार्य के पद पर सेवारत हैं। आप राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय आरोग्य सेवा संस्थाओं से जुड़े हुए हैं। आप विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) के राष्ट्रीय सलाहकार के रूप में भी कार्यनिरत हैं।

आपके लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपने औषध विज्ञान संबंधी विषयों पर संशोधन लेख भी प्रस्तुत किया है। आपकी कई कृतियाँ भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेजी, जापानी एवं चीनी भाषाओं में भी अनूदित हैं।

डॉ.अग्रवाल की प्रमुख पुस्तकों में – 'ए हंड्रेड्ज लाईफ्स', 'दग्दर बाबू', 'रिव्हर्सिंग बैक पैन', 'हाई ब्लड् प्रेशर', 'हार्ट अटैक' आदि प्रमुख हैं।

प्रस्तुत लेख 'स्वास्थ्य के २०० सवाल' पुस्तक से लिया गया है। आज के सामाजिक संघर्ष एवं तनाव से भरे जीवन में दिल का दौरा एक सामान्य बीमारी है। इससे बचाव और मुक्ति पाने के उपाय इस लेख में दिए गए हैं।

विद्यार्थियों को दिल का दौरा और एनज़ाइना जैसी घातक बीमारी से अवगत कराने के उद्देश्य से इस लेख का चयन किया गया है।

दिल का दौरा और एनजाइना किसे कहते हैं?

ये दो रूप हैं एक ही ह्रदय रोग के। ह्रदय ही शरीर का वह महत्वपूर्ण अंग है जो शरीर के समस्त भागों में जीवनदायी रक्त को पंप करता है। इस काम के लिए वह दिन-रात कड़ी मेहनत करता है और उसे स्वयं भी ऊर्जा की जरूरत पड़ती है। यह ऊर्जा उस तक पहुँचाती हैं – दो मुख्य कोरोनरी धमनियाँ और उनकी छोटी-बड़ी बहुत-सी शाखाएँ। जब कुछ कारणों से उनमें सिकुड़न आ जाती है तो ह्रदय को पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा नहीं मिल पाती। लेकिन ह्रदय तब भी किसी तरह काम चलाता रहता है। पर जब-जब उसे अधिक काम करने की जरूरत पड़ती है, यह स्थिति उसके लिए असहनीय हो जाती है और वह उस बोझ को सह पाने में अपने को असमर्थ पाता है। इसे ही कहते हैं एनजाइना।

इसका ही उग्र रूप है दिल का दौरा जिसे हार्ट-अटैक भी कहा जाता है। ह्रदय को ऊर्जा पहुँचाने वाली किसी एक धमनी में एकाएक रुकावट आ जाने से ही दिल का दौरा पड़ता है। ऊर्जा का स्त्रोत सूख जाने से ह्रदय की मांसपेशियाँ क्षतिग्रस्त हो जाती हैं और ठीक से काम नहीं कर पातीं। इससे ह्रदय की रक्त पंप करने की प्रक्रिया कमजोर पड़ने लगती है, धड़कन अनियमित हो जाती है और ह्रदय अवरुद्ध हो सकता है।

यह रोग किन कारणों से होता है?

अनियमित उच्च रक्तचाप यानी हाई ब्लड प्रेशर, डाइबेटिज़ (शुगर), मोटापा, मानसिक तनाव, अधिक मात्रा में धूम्रपान और वसायुक्त खाद्यों का सेवन, मदिरापान, रक्त में कोलेस्ट्रोल का बढ़ जाना, परिवार के अन्य सदस्यों में इस रोग का होना और व्यायाम तथा शारीरिक मेहनत न करना, इस रोग के मुख्य कारण समझे जाते हैं। इसके अलावा व्यक्तित्व का भी रोग से करीबी संबंध पाया गया है। ऐसे लोग जिनके स्वभाव में उग्रता होती है या जो प्रतिकूल परिस्थितियों को स्वीकार नहीं कर पाते और अपने गमों में भीतर ही भीतर घुलते रहते हैं, उनमें यह रोग अधिक देखा गया है। इसी तरह अकेले जिंदगी बसर करने वाले लोगों में भी यह रोग अधिक होता है। एक खास बात यह है कि यह बीमारी शहरी लोगों में ज्यादा पाई जाती है। शहरी जिंदगी की कशमकश और आधुनिकीकरण से जीवन के तौर-तरीकों में हुआ बदलाव दिल को रास

नहीं आया है। बढ़ता मानसिक तनाव, कुर्सी पर बैठे रहने की नौकरी, जिसमें कोई शारीरिक श्रम नहीं होता, जिंदगी की भाग-दौड़ जिसमें व्यायाम के लिए समय नहीं, खान-पान में आया अंतर और 'जंक फूड' का प्रचलन – इस सबसे इस रोग को बढ़ावा मिलता है।

यह किस उम्र का रोग है?

आमतौर से एनजाइना और दिल का दौरा ४५ वर्ष से अधिक उम्र के व्यक्तिओं में ही देखे जाते हैं। पर आजकल यह रोग युवावस्था में भी देखने को मिल रहा है। पिछले दिनों मेरे पास एक रोगी आया, उसकी उम्र सिर्फ २३ वर्ष थी। स्त्रियों में यह रोग, पुरुषों की अपेक्षा काफी कम संख्या में पाया जाता है।

रोग के प्रमुख लक्षण क्या हैं?

एनजाइना में लक्षण तभी उभरते हैं जब रोगी किसी तनावपूर्ण स्थिति से गुजर रहा होता है और उसके दिल को सामान्य से अधिक काम करने की जरूरत आ पड़ती है। ऐसे में उसके सीने में बाईं ओर दर्द उठने लगता है, भारीपन रहने लगता है, बेचैनी होती है और वह थका-थका सा महसूस करता है।

दिल के दौरे का प्रमुख लक्षण सीने में बाईं ओर प्राणलेवा दर्द उठना है। रोगी को ऐसा महसूस होता है जैसे उसकी छाती पर कोई बहुत भारी चीज रख दी गई हो। यह दर्द बाएँ कंधे, गर्दन, बाँह और अंगुलियों के पोरों तक फैल सकता है। इसके साथ ही जोरों का पसीना छूटने लगता है, घबराहट होती है और मितली की शिकायत भी हो सकती है। ज्यादा तेज दौरा हो तो रोगी बेहोश होकर गिर सकता है और उसकी धड़कन एकाएक रुक भी सकती है।

दिल का दौरा पड़ने पर प्राथमिक उपचार के लिए क्या-क्या कदम उठाने चाहिए?

तुरंत पास के डॉक्टर को बुला भेजें। तब तक रोगी को पीठ के बल लिटा दें, उसके कपड़े ढीले कर दें और कोई दर्दनाशक दवा दे दें। यदि वह पहले से इसका रोगी है और उसके पास सार्बिट्रेट की

गोली हो, तो उसे तुरंत वह गोली दे दें। उसे जीभ के नीचे रख कर वह चूसता रहे। अचानक दौरा पड़ जाए और रोगी की धड़कन रुक जाए तो उसे पीठ के बल सीधा लिटा कर उसके सीने की मालिश करें, मुँह से मुँह सटा कर साँस दें। तुरंत मोबाइल हृदय चिकित्सा वाहन बुला भेजें। उस समय एक-एक क्षण बहुमूल्य हो सकता है।

क्या किन्हीं अन्य रोगों में भी इस तरह के लक्षण उभर सकते हैं?

एनजाइना जैसे लक्षण कुछ अन्य रोगों में भी देखे जा सकते हैं। 'कोस्टोकोन्ड्राइटिस' नामक एक आम रोग में छाती में पसलियों और कास्टेल उपस्थियों के संगम स्थल पर जोरों का दर्द हो सकता है। इसी तरह 'सरवाइकल स्पोंडिलोसिस' में तंत्रिकाओं पर दबाव पड़ने से गर्दन, कंधे और बाजू में दर्द हो सकता है। लेकिन ये दर्द प्राय: लगातार बने रहते हैं जबकि एनजाइना का दर्द प्राय: रुक-रुक कर उठता है, चुभन-सा अपच के कारण भी बेचैनी हो सकती है, मितली की शिकायत हो सकती है। पर जब भी जरा-सा संशय हो, डॉक्टरी सलाह अवश्य ले लेनी चाहिए।

एनजाइना रोग का निदान (डाएगनोसिस) किस आधार पर किया जाता है?

इसमें व्यक्ति की बीमारी का इतिहास ही प्रमुख भूमिका निभाता है। इसके अलावा ई.सी.जी. भी महत्त्वपूर्ण है। कुछ रोगियों में 'ट्रेड मिल' नामक टेस्ट, जिसमें रोगी से खास मशीन पर व्यायाम करवाते समय उसका ई.सी.जी. रिकार्ड किया जाता है, यह भी बहुत उपयोगी है। दूसरे कुछ रोगियों में, 'हाल्टर' जाँच के अंतर्गत रोगी का २४ से ७२ घंटे तक ई.सी.जी. लेने की जरूरत भी पड़ सकती है। रोगी के बदन पर एक छोटी ई.सी.जी. मशीन लगा दी जाती है और वह आम दिनों की तरह अपना काम करता रहता है।

जिन रोगियों में तब भी निदान स्पष्ट नहीं हो पाता, उन्हें 'कोरोनरी एंजियोग्राफी' करवाने की सलाह दी जा सकती है। इसमें कोरोनरी धमनियों में एक रंगीन डाई (दवा) डालकर उनके एक्स-रे चित्र या फिल्म ले ली जाती है। उससे यह साफ हो जाता है कि कौन-सी कोरोनरी धमनी किस हद तक कहाँ रुकी हुई है।

और हार्ट-अटैक का निदान?

हार्ट-अटैक के तात्कालिक निदान में ई.सी.जी. और खास तरह के ब्लड टेस्ट इसकी निश्चित जानकारी देने में समर्थ हैं। बाद में जरूरत होने पर रोगी के दिल का न्यूक्लियर स्कैन कर यह भी पता लगाया जा सकता है कि दिल का कितना हिस्सा दौरे की चपेट में बेकार हुआ है। इसे 'मूगा टेस्ट' कहते हैं।

क्या एनजाइना का इलाज संभव है?

हाँ, ऐसी बहुत-सी दवाएँ उपलब्ध हैं, जो दिल पर पड़ने वाले भार को कम करती हैं और कोरोनरी धमनियों में फैलाव लाकर उस पर्याप्त खुराक पहुँचाने का काम करने में समर्थ होती हैं। इनमें सार्बिट्रेट, प्रोप्रेनोलाल, विरेपामिल, निफेडीपिन दवाएँ प्रमुख हैं। इसके अलावा रक्त में कोलेस्ट्रोल की मात्रा को घटाने के लिए भी एट्रोमिड जैसी दवाएँ उपलब्ध हैं।

जिन रोगियों में दवा से आराम नहीं आता, उनमें रुकी हुई कोरोनरी धमनियों को खोलने के लिए 'बैलून-एंजियोप्लास्टी' या 'बायपास ऑपरेशन' किया जा सकता है।

और हार्ट-अटैक के रोगी का इलाज किस तरह किया जाता है?

यह रोगी की स्थिति पर निर्भर करता है। रोगी तुरंत अस्पताल पहुँच जाए और सुविधा उपलब्ध हो तो रुक गई धमनी को बहाल करने के लिए धमनी में इस तरह की दवा (स्ट्रेप्टोकाइनेज या यूरोकाइनेज) इंजेक्ट की जा सकती है, जिससे धमनी फिर से खुल जाती है।

दिल की धड़कन बिगड़ गई हो, तो उसके लिए भी दवा और पेसमेकर की जरूरत पड़ सकती है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि पहले कुछ घंटों के लिए रोगी कड़ी डॉक्टरी निगरानी में रहे और उसे जरूरत के हिसाब से दवा, ऑक्सिजन आदि मिलती रहे। लेकिन इसके बावजूद कुछ रोगी कूच कर जाते हैं।

'बैलून-एंजियोप्लास्टी' तकनीक क्या है?

कोरोनरी धमनियों में सिकुड़न आने का एक बड़ा कारण है –

उनमें वसा की परत का जम जाना। जब एक या दो कोरोनरी धमनियाँ शुरू के हिस्से में इस तरह अवरुद्ध हों, तो उन्हें सामान्य बनाने के लिए ही 'बैलून एंजियोप्लास्टी' की जाती है। इसमें रोगी की टाँग या बाँह की किसी एक धमनी के रास्ते एक लंबी पतली ट्यूब अवरुद्ध हुई कोरोनरी धमनी तक पहुँचा दी जाती है। इस पहली ट्यूब के द्वारा फिर एक ऐसी ट्यूब भीतर डाली जाती है जिसके छोर पर एक गुब्बारा होता है। गुब्बारे को कोरोनरी धमनी के सिकुड़े हुए भाग में पहुँचाकर फुलाया जाता है, जिससे धमनी में जमी वसा की परत दब जाती है और धमनी पुन: खुल जाती है। इससे उस धमनी में रक्त बहाव सामान्य हो जाता है और रोग दूर हो जाता है।

बायपास सर्जरी में क्या किया जाता है? इस ऑपरेशन पर कितना खर्चा आता है? क्या यह भारत में संभव है?

बायपास सर्जरी में रुकी हुई कोरोनरी धमनी को बायपास करते हुए, टाँग की शिरा का टुकड़ा इस तरह लगाया जाता है कि दिल के उस भाग को फिर से पूरी-पूरी खुराक मिलने लगती है।

भारत में यह ऑपरेशन अब बहुत से अस्पतालों में सफलता-पूर्वक किया जा रहा है। इनमें पेरंबूर का दक्षिणी रेलवे अस्पताल, मद्रास का अपोलो अस्पताल, मुंबई का के.ई.एम. अस्पताल, वेल्लोर का क्रिश्चियन मेडिकल कालेज और नयी दिल्ली के अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, एस्कोर्ट्स हार्ट इंस्टीट्यूट और बत्रा अस्पताल अग्रणी हैं। एक ऑपरेशन में यहाँ बीस हजार से पचास हजार रुपए का खर्च आता है।

हृदय रोग से बचाव के लिए और जिन रोगियों में यह रोग हो, उनमें रोग काबू में रखने के लिए क्या-क्या एहतियात बरतने चाहिए?

रोजाना व्यायाम करें। इसके लिए सुबह-शाम की सैर अच्छी है। हृदय रोगियों के लिए भी यह उचित है। पर ध्यान रखें कि एकाएक दिल पर ज्यादा बोझ न पड़े। पहले एक फर्लांग, फिर दो और इस तरह हर हफ्ते डॉक्टर से सलाह लेकर सैर की सीमा बढ़ाते जाएँ।

प्राय: समझा जाता है कि रात्रि-भोज के बाद सैर अच्छी रहती है।

लेकिन दिल के रोगी के लिए ठीक नहीं। उस दौरान उसके दिल को उतनी ऊर्जा नहीं मिल पाती, क्योंकि वह भोजन को पचाने में लगी होती है। इसलिए भोजन करने के कुछ समय बाद तक तेज चलने पर एकाएक रोग उग्र हो सकता है, एनजाइना का अटैक पड़ सकता है।

अपने वजन पर कड़ी नजर रखें। उसे बिलकुल न बढ़ने दें। जितना ज्यादा वजन होगा, दिल को उतना ही ज्यादा काम करना पड़ेगा, जो आपके लिए ठीक नहीं।

जिंदगी में मानसिक तनाव को भी दूर रखें। उतार-चढ़ाव, लाभ-हानि – इसे जीवन का अंग मान लें।

ब्लड प्रेशर बढ़ा हुआ हो या फिर शुगर (मधुमेह) हो, तो उनके लिए भी ठीक समय से दवा लेते रहें। इससे बीमार दिल को राहत मिलेगी।

खान-पान में क्या-क्या परहेज जरूरी है?

तले हुए, अधिक वसा वाले भोजन से बच कर रहें। भोजन केवल इतना लें कि रोजमर्रा की आवश्यकताएँ पूरी होती रहें। वजन बढ़े नहीं। घी-मक्खन, अंडे, चिकन, पूड़ी-कचौड़ी, समोसे, पराँठे, टिक्की, पकौड़ों आदि से दूर रहें। कैफिन भी दिल की धड़कन तेज करती है। इसलिए जहाँ तक हो सके, कॉफी और चाय भी कम से कम लें।

धूम्रपान का शौक फरमाते हों या मदिरा दिल को भाती हो, तो अपने दिल की खातिर, इन पर आज ही रोक लगा दें। कुछ विशेषज्ञ कहते हैं कि थोड़ी मात्रा में ली गई मदिरा दिल के लिए लाभदायक होती है। लेकिन यह सच नहीं है। अध्ययनों से यह साबित हो गया है कि मदिरा-सेवन दिल के लिए कतई अच्छा नहीं।

क्या हृदय-रोगियों के लिए सामान्य दांपत्य जीवन वर्जित है?

नहीं, कतई नहीं। अधिकतर रोगी दांपत्य जीवन का सुख भोग सकते हैं। सहवास पर रोक-टोक लगाना प्रायः अनावश्यक होता है। हाँ, कुछ सीमाएँ जरूर बाँधनी पड़ती हैं। पर ब्रह्मचर्य में लौटने की कतई जरूरत नहीं है।

कठिन शब्दार्थ :

ऊर्जा = शक्ति, बल; वसा = फैट, चरबी; गुब्बारा = हवा भरी रबर की थैली; खाद्य = आहार; निदान = चिकित्सा; भाना = अच्छा लगना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) हृदय रोग के दो रूप कौन-से हैं?

२) दिल का दौरा और एनज़ाइना आम तौर से कितने वर्ष से अधिक उम्र के व्यक्तियों में देखे जाते हैं?

३) 'मूगा टेस्ट' किसे कहते हैं?

४) कोरोनरी धमनियों में सिकुड़न आने का एक बड़ा कारण क्या है?

५) क्या बायपास सर्जरी भारत में संभव है?

६) हृदय रोगियों के लिए किस तरह का भोजन अच्छा नहीं है?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) दिल का दौरा और एनजाइना किसे कहते हैं?

२) दिल का दौरा और एनजाइना किन कारणों से होता है?

३) दिल का दौरा और एनजाइना रोग के प्रमुख लक्षण क्या हैं?

४) दिल का दौरा पड़ने पर प्राथमिक उपचार के लिए क्या-क्या कदम उठाने चाहिए?

५) हार्ट अटैक के रोगी का इलाज किस तरह किया जाता है?

६) 'बैलून एंजियोप्लास्टी' तकनीक क्या है?

७) हृदय रोग से बचने व काबू पाने के लिए क्या-क्या एहतियात बरतने चाहिए?

III) कोष्ठक में दिए गए कारक चिन्हों से रिक्त स्थान भरिए :

(का, में, के, पर, की)

१) उसके सीने .... दर्द उठने लगता है।

२) इसके साथ ही जोरों .... पसीना छूटने लगता है।

३) मितली .... शिकायत भी हो सकती है।

४) पास .... डाक्टर को बुला भेजें।

५) कास्टेल उपस्थियों के संगम स्थल ....जोरों का दर्द हो सकता है।

IV) अन्य वचन रूप लिखिए :

पसली, तंत्रिका, दवा, सीमा, धमनी।

V) विलोम शब्द लिखिए :

पास, नीचे, छोटा, चैन, ज्यादा, समर्थ।

VI) योग्यता विस्तार :

मधुमेह और उसके निदान के संबंध में जानकारी हासिल कीजिए।

* * * * * *

७. मेरी बद्रीनाथ यात्रा

— विष्णु प्रभाकर

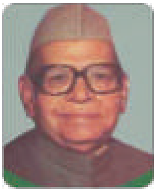

लेखक परिचय :

विष्णु प्रभाकर जी का जन्म २१ जून १९१२ को मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) के मीरापुर कस्बे में हुआ था। आपको बचपन से ही लेखन में रुचि थी। आपने प्रारंभ में 'प्रेमबंधु' तथा 'विष्णु' नाम से रचनाएँ लिखीं। आपने 'सुशील' नाम से समीक्षाएँ भी लिखीं। आपने एक जिज्ञासु के रूप में हिमालय, सभी तीर्थ स्थलों सहित लगभग संपूर्ण भारत का भ्रमण किया। आप भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों में हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य रहे।

'जमना-गंगा के नैहर में', 'अभियान और यात्राएँ', 'हँसते निर्झर दहकती भट्ठी', 'हिमशिखरों की छाया में', 'ज्योति पुंज हिमालय' आदि आपके प्रसिद्ध यात्रा-वृत्तांत हैं। इसके अतिरिक्त आपने साहित्य की विविध विद्याओं पर लेखनी चलाकर हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की है।

विष्णु प्रभाकर से रचित 'मेरी बद्रीनाथ यात्रा' एक प्रसिद्ध यात्रा वृत्तांत है। हिमालय की सुरम्य प्रकृति को देखते ही अकवि भी कवि, अदार्शनिक भी दार्शनिक बन जाता है। यहाँ भारत के कोने-कोने से लोग आते हैं। हिमशिखरों की भव्यता मन मोह लेती है। गंगा के अनेक रूप गरूड गंगा, विष्णु गंगा, पांडुकेश्वर मंदिर, शहतूत के वृक्ष, कुबेर शिला आदि दर्शनीय स्थलों के बाद बद्रीनारायण का मंदिर आता है । इस मंदिर में सरल भक्ति और प्रकृति के वैभव का आकर्षण है।

विद्यार्थियों में दर्शनीय स्थानों के प्रति रुचि बढ़ाने के उद्देश्य से इस यात्रा-वृत्तांत का चयन किया गया है।

कालिदास ने हिमालय को **नगाधिराज** व्यर्थ ही नहीं कहा है। सदा बर्फ से ढँका रहनेवाला यह पर्वत संसार का सबसे ऊँचा पर्वत ही नहीं है, सबसे सुन्दर भी है। इसके अंचल में न जाने कितनी उन्मादिनी सदानीरा गंगाएँ निरन्तर **अलख जगाती** रहती हैं। इसी के **देवदारू** और **भोजपत्र** के वैभवशाली वनों में हिंसक पशुओं के साथ, नाभि में सुगन्ध भरे कस्तूरी मृग रहता है। यहाँ, जहाँ एक ओर संसार-प्रसिद्ध सिद्धों ने ज्ञान सिद्ध किया, वहाँ तीनों लोक की रूप की रानी उर्वशी ने भी जन्म लिया। यहीं हर समय नाना रूप-रंगवाले पक्षियों का कलरव होता रहता है। यहीं क्षण-भर में उत्तुंग हिम-शिखरों की रजत चोटियाँ अरुण किरणों का मुकुट पहनकर, इन्द्रधनुषों का निर्माण करती हैं और दूसरे ही क्षण ठण्डे कुहरे के श्वेत अन्धकार में खो जाती हैं। ऐसे प्रदेश में पहुँचकर अकवि भी कवि और अदार्शनिक भी दार्शनिक बन जाता है।

इसलिए चाहे गंगा की खोज हो या विरही यक्ष के दूत को रास्ता दिखाना हो, या शिव-पार्वती का नृत्य देखना हो, देवता की आराधना करनी हो या प्रकृति का रूप-दर्शन — भूतकाल में जहाँ तक दृष्टि जाती है — मनुष्य हिमालय के दुर्गम प्रदेशों की यात्रा करता आ रहा है और इसलिए जब हमें पिछली मई में एक बार फिर बद्रीनाथ जाने का अवसर मिला तो सच मानिये, बेहद खुशी हुई।

एक बार सितम्बर-अक्तूबर में हम उधर हो आये थे। पर वह यात्रा का अवसर नहीं है, सैर का है। निपट नीला आकाश, निर्मल जल, भीड़ नहीं, मेघ, कुहरे और हिम के आवरण से मुक्त प्रकृति, आँखें जहाँ अटक जाती हैं मन भी वहीं रम जाता है। इसके विपरीत मई की यात्रा 'यात्रा' है। उसका अपना आकर्षण है। धर्मभीरू भीड़ का कोलाहल भारत की सांस्कृतिक एकता के दर्शन, विभिन्न प्रदेशों से विभिन्न वेषभूषा पहने, विभिन्न स्वरों में एक ही देवता को पुकारते, अनगिनत नर-नारी निकल पड़ते हैं, एक ही मार्ग पर, यह प्रमाणित करते हुए कि विभिन्नता में सौन्दर्य है, शक्ति है, विभेद नहीं है, विग्रह नहीं है।

हमारा दल भी ऐसा ही दल था। उसमें स्त्री और पुरुष, युवक और वृद्ध, वैष्णव और जैन, व्यापारी और विद्यार्थी, शासक और सम्पादक, प्रकाशक और लेखक, राजस्थानी, हिन्दी और मराठी भाषा-भाषी सभी थे। सीधे बद्रीनाथ जाने के लिए चाहे आप पौड़ी होकर जायें या हरिद्वार,

अब पीपलकोटी तक बस जाती है। वहाँ से कुल ३१ मील का पैदल मार्ग रह जाता है, लेकिन हम लोग यात्रा के नियम के अनुसार पहले केदारनाथ गये। वहाँ से लौटते हुए बीच में से हम एक ऐसे मार्ग पर मुड़ गये जो हमें चमौली पहुँचाता था। वहाँ से पीपलकोटी के लिये बस मिलती है। इसी मार्ग पर केदारनाथ की शीत-ऋतु की राजधानी उषीमठ और हिन्दुओं का सबसे ऊँचे स्थान पर बना हुआ मन्दिर तुंगनाथ है। यह मार्ग अपेक्षाकृत भयानक है, इसलिए इसका सौन्दर्य भी अभी अछूता है।

हम प्रतिदिन सवेरे तीन बजे उठते थे। बिस्तर समेटते, नित्य-कर्म से छुट्टी पाते और भारवाहकों को सामान सौंपकर चार बजे तक आगे बढ़ जाते थे। बिजली की रोशनी में जीनेवाले हम लोग जैसे उस प्रदेश के प्राकृतिक प्रकाश में राहत पाते थे। जैसे हम वहाँ चकाचौंध की थकान उतारने ही गये थे। प्रतिदिन १२ से १८ मील तक चलते। कहीं ऊँचा उठता चला गया पथरीला पथ, कहीं नीचे भागता हुआ चट्टानी मार्ग, सँकरी पगडंडी, एक और भूधराकार चट्टानें, दूसरी ओर अतल में बहती हुई सरिताएँ, कहीं सघन बन, तरह-तरह के पेड़, जंगली फूल, चहचहाते पक्षी, कहीं तेज धूप, निपट छायाहीन मार्ग, कहीं भयंकर शीत और कहीं वर्षा, बर्फ, तूफान। साथ में चलता यात्रियों का कारवाँ, तरह-तरह की पोशाकें पहने, तरह-तरह की बोलियाँ बोलते, धनी-निर्धन स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, कुछ तो आँखों में समाकर रह गये हैं।

तारकेश्वर की वह ८३ वर्ष बुढ़िया जिसके मुँह में न दाँत न पेट में आँत, ८ वर्ष की वह प्यारी बच्ची सन्ध्या, जो २०० मील के उस दुर्गम पथ पर पैदल चली, बंगाली दल की वह धर्मभीरू तरूणी जब भी बोलती आदर और स्नेह छलछला पड़ता, आन्ध्र देश की वे कन्याएँ जो टोपे पहने बराबर गाती रहतीं और उत्तर प्रदेश का वह बातून पर बड़े दिलवाला बूढ़ा, जो पति-पुत्रहीना अपनी बेटी का शोक कम करने के लिए उसे यात्रा करवा रहा था। उनमें कुछ घोड़ों पर थे, कुछ डाँडी पर, कुछ कंडियों में भी थे। वैसे कंडियों में बच्चे बैठते हैं। अधिकांश यात्री पैदल चलते हैं। उन्हीं के साथ धीरे-धीरे चलते हैं बोझ से दबे कुली और हाँफते डाँडी वाले.....।

इन सबसे मिलते, सुख-दुःख की बातें करते, बद्री विशाल की जय बुलवाते, हँसते खिलखिलाते पहाड़ी ढ़लान पर बने छोटे-छोटे गाँवों, खेतों में काम करते नर-नारियों को देखते, उस स्मृति को कैमरे में सुरक्षित

रखते, चट्टियों पर चाय-नाश्ता लेते और उनसे झगड़ते हम अगले पड़ाव पर पहुँच जाते। वहाँ नाना प्रकार से थकान उतारते, नहाते, कपड़े धोते, सामान खरीदकर खाना बनाते या बनवाते, खाते, घूमते, प्रार्थना करते और कभी-कभी लड़ भी पड़ते। कभी-कभी अनायास ही हममें से कोई हँसी का पात्र बन जाता। एक दिन एक छोटी-सी चट्टी पर खाना खा रहे थे कि सहसा हमारे दल के एक वयोवृद्ध सज्जन चिल्ला उठे, 'अरे बिच्छू-बिच्छू!' हम चौंके, 'कहाँ?' वह घिघिया रहे थे। किसी तरह कहा, 'यह मेरी जाँघ पर।' हाय राम, वह तो सचमुच बिच्छू लग रहा था पर वह चलता क्यों नहीं। सब मोमबत्तियाँ उठाकर उसे पकड़ने दौड़े, पर जानते हैं वह क्या निकला – चाबियों का गुच्छा जो उनकी जेब से लटक-कर जाँघ पर आ गया था।

लेकिन ये कथाएँ कहाँ तक कही जाएँ। उषीमठ होते हुए २९ मई को सवेरे ठीक चार बजे हम तुंगनाथ की ओर चले। १२,०८० फुट ऊँचे इस शिखर से हिम-शिखरों का जो भव्य दृश्य देखने को मिला, वह अपूर्व था। इतना अपूर्व कि तीन मील की वह प्राणलेवा चढ़ाई और उससे भी अधिक पैर तोड़ देनेवाली उतराई हमें तनिक भी नहीं थका सकी। अन्धकार जैसे-जैसे गदराता गया, वैसे-वैसे ही उन शिखरों का रंग पलटता गया। पहले उषा और फिर अरुद्ध किरणों ने जैसे ही उनका स्पर्श किया, प्रकृति झट अँगड़ाई लेकर उठ बैठी। अब तक एक के बाद एक शिखर स्मित हास्य से लगभग जगमग कर उठा जैसे अप्सराएँ खिलखिला उठी हों, उनकी इन्द्रधनुषी साड़ी हवा में उड़ने लगी हो। बुरांस के फूल झूम-झूमकर नाचने लगे। पक्षी संगीत संजोने लगे। गंगोत्री, जमनोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ, चौखम्बा, सभी रजत-शिखर सूर्य के प्रकाश में चमक रहे थे। चौखम्बा तो ऐसा लग रहा था जैसे देवताओं के खेल के मैदान को किसी कुशल चित्रकार ने धवल रंग में लिख दिया हो। रजत, स्वर्ण प्लातिनम का ठोस रूप लेते इन्हीं हिम-शिखरों को देखने यात्री इतने कष्ट उठाकर आते हैं पर विरलों को ही यह सौभाग्य मिलता है, क्योंकि दोपहर होते-होते वहाँ सब कुछ कुहरे के आवरण में छिप जाता है।

उस सौभाग्य को हम देर तक आँखों में सँजोते रहे पर कब तक? बद्रीनाथ हमें पुकार रहे थे। सो तुंगनाथ, सगरवन सभी पीछे छूट गये।

गोपेश्वर में भी नहीं रुके। यहाँ के प्राचीन मन्दिर, उसकी मूर्तियों और त्रिशूल-रूपी स्तम्भ पर प्राचीन लेख देखकर हमने शिव की घाटी से विदा ली। अब हम विष्णु अर्थात् बद्रीनारायण के प्रदेश में थे। चमोली पहुँचकर बस पकड़ी और पीपलकोटी आकर रुके। यहाँ से फिर पैदल यात्रा का आरम्भ था।

बद्रीनाथ की घाटी में केदारनाथ की घाटी-जैसा सौन्दर्य नहीं है। हरीतिमा नहीं, हिमशिखर नहीं, केवल अलकनंदा का रूपजाल है। कभी वह गम्भीर गति से गर्जन करती है, कभी ऊँचे से गिरकर प्रपात बनाती है। कभी अतल में बहती है, तो कभी मार्ग को छू लेती है। कई जगह बर्फ के प्राकृतिक पुल बन गये थे और उनके नीचे इधर-उधर से धाराएँ ऐसे भाग रही थीं जैसे नटखट बालक गुरुजनों के घेरे को तोड़कर शोर मचाते हुए निकल भागते हैं। उसी शोर में यात्रियों का शोर मिल गया था क्योंकि अपेक्षाकृत सुगम होने के कारण इस ओर यात्री बहुत आते हैं। उन्हीं के साथ हम गरुड़-गंगा पहुँच गये। यहाँ सुना कि जो गंगा में स्नान कर बिना देखे पत्थर का एक टुकड़ा पूजा करने के लिये घर ले जाता है – उसे साँपों का डर नहीं रहता। लेकिन हमारे एक मित्र थे जो यात्रा में नहाना ही आवश्यक नहीं समझते थे। फिर इस यात्रा में हर कहीं पानी रक्त को जमा देता है। एक बार ऐसे ही स्थान पर उन्हें नहाने के लिये विवश किया गया तो बेचारे नहाने गये। लौटे तो बुरी तरह काँप रहे थे। हमने पूछा, 'कहिये, दिल जम गया या बच गया।' बोले, 'जम कैसे सकता था, हमने वहाँ पानी लगने ही नहीं दिया।'

इसी गरुड़-गंगा से पाताल गंगा की चढ़ाई आरम्भ होती है। गंगा सचमुच पाताल में है और किनारे का पहाड़ हमेशा टूटता रहता है। सड़क के नाम पर पगडंडी इतनी सँकरी और टेढ़ी-मेढ़ी है जैसे काली भयानक घटा में बिजली की चमक। लेकिन सुना जाता है कि इसी प्रदेश में पार्वती ने शिव से विवाह करने के लिये तप किया था। वर्षों पत्ते खाकर रही थीं, इसीलिए आज भी यह पर्णखंड या पैखंडा कहलाता है। यही कहानियाँ सुनते-सुनते हम जोषीमठ जा पहुँचे। यहाँ से बद्रीनाथ केवल १९ मील रह जाता है। यह आद्य शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार मठों में से एक है। यहाँ पर हमने **कीमू** अर्थात् **शहतूत** का वह पेड़ देखा, जिसके बारे में सुना जाता है कि उसके नीचे बैठकर प्रतिभापुंज शंकर ने उपनिषदों पर

टीकाएँ लिखी थीं। नीचे छोटा-सा कस्बा है। उसमें भी कई मन्दिर हैं। इन मन्दिरों में जो मूर्तियाँ हैं उनमें से कई कला की दृष्टि से बड़ी सुन्दर हैं।

आगे फिर दो मील की सीधी उतराई आती है जो हमें विष्णु गंगा और अलकनंदा के संगम पर विष्णुप्रयाग में पहुँचा देती है। काफी डरावना स्थान है। नंगे ऊँचे पहाड़, तंग गहरी घाटी पर आदमी की श्रद्धा ने कब किससे हार मानी है? यात्रियों का कारवाँ हाँफता, साँस लेता, कभी अलकनंदा को, कभी पर्वत-शिखर को, कभी पीठ पर बोझ उठाये श्रम की प्रतिमा गढ़वाली नारियों को देखता और आगे बढ़ जाता। मार्ग में बच्चे गा-गाकर पाई-पैसा माँगते, युवतियाँ भी माँगने लगतीं – पाई-पैसा सुइयाँ या चूडियाँ – सारे रास्ते यही देखते आये थे पर यह अच्छा नहीं लगता था।

हम पांडु राजा द्वारा बसाई गई बस्ती पांडुकेश्वर में नहीं रुके। हाँ, वह मन्दिर अवश्य देखा जिसे कहते हैं, पांडवों ने स्थापित किया था। उस शिखर को भी देखा जहाँ निर्वाण के लिए जाते समय पांडवों ने अन्तिम बार **चौसर** खेली थी। यहाँ से फूलों की प्रसिद्ध घाटी और सिक्खों के तीर्थ स्थान लोकपाल को मार्ग जाता है। वही सब देखते हुए हम २ जून को अन्तिम पड़ाव की ओर चले। इस मार्ग पर अलकनंदा बार-बार तेज़ी से ऊपर से उतरती है, प्रपात बनाती है और जब सूर्य की किरण उससे स्पर्श करती है तो न जाने कितने इन्द्रधनुष निर्मित हो जाते हैं। देवदारु के पेड़ भी इधर बहुत हैं। यहाँ से हमें कई बार बर्फ पर चलना पड़ा।

आखिर हम कंचन गंगा को पार करके 'कुबेर शिला' के पास पहुँच गये। यह वह स्थान है जहाँ से यात्रियों को विशालापुरी के प्रथम दर्शन होते हैं। तूफान आ रहा था और मैं इस पुरी को पहले ही देख चुका था, फिर भी मुझे रोमांच हो आया। मंज़िल पर पहुँच जाने पर रोमांच हो ही आता है।

विशालापुरी अलकनंदा के दाहिने किनारे पर बसी है। सवारी को छोड़कर आज के युग की लगभग सभी सुविधाएँ वहाँ मिलती हैं। कमोवेश सारे मार्ग पर मिलती हैं। कहते हैं कि प्राचीन काल में भगवान ने नर-नारायण के रूप में यहाँ तप किया था। उसी की याद में अलकनंदा के दोनों ओर के पर्वत नर-नारायण कहलाते हैं। कभी यहाँ बेरी का वन था। बदरी बेर को कहते हैं। इसी कारण नारायण यहाँ बदरी नारायण के नाम

से प्रसिद्ध हैं। १०,४८० फुट की ऊँचाई पर बना हुआ यह मन्दिर, कहते हैं, आद्य शंकराचार्य ने स्थापित किया था। उससे पहले की कहानी अन्धकार में है। नहीं मालूम सत्य क्या है, पर वहाँ की स्थिति देखकर कल्पना की जा सकती है न जाने कितनी बार हिम के भयंकर तूफानों ने इस मन्दिर को नष्ट किया होगा और फिर संघर्षशील मानव ने, श्रद्धा के बल पर, पत्थरों की ये बोलती दीवारें चुनी होंगी। वर्तमान मन्दिर कला की दृष्टि से कोई महत्व नहीं रखता फिर भी उसमें एक आकर्षण है। वह आकर्षण है — सरल भक्ति का, प्रकृति के वैभव का।

तीन दिन तक हम उस प्रदेश का वैभव देखते रहे। बद्रीनाथ और नीलकंठ के हिम-शिखरों की छाया में और नारायण पर्वत की गोद में अलकनंदा के तट पर बसी यह नगरी दो मील परे उस पार भारत का अन्तिम गाँव माना जाता है। रक्तवर्णी निवासी, लाल चोंच और लाल पंजोंवाला कौवे-जैसा पक्षी क्याँगचू, पाँच मील पर वसुधारा का प्रसिद्ध प्रपात जो उस समय जमा हुआ था, लेकिन इसी कारा निद्रा का वह सौन्दर्य उसे और भी प्यारा बना रहा था। उसकी धारा तक पहुँचने में बर्फ पर चलने में जो रोमांचकारी आनन्द हमें मिला वह भुलाये न भूलेगा। और भी पवित्र शिलाएँ, धाराएँ और कुण्ड हमने देखे लेकिन उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण है, तप्त कुण्ड। इस शीत प्रदेश में इस कुण्ड का पानी इतना गर्म है कि सहसा हाथ देने का साहस नहीं होता। हम उसमें खूब नहाये। सोचते रहे, न जाने कब यह स्वास्थ्यवर्धक स्थान के रूप में प्रसिद्ध होगा।

मन्दिर में पूजा भी की। श्रृंगार, शयन सभी रूपों में नारायण की मूर्ति के दर्शन किये। हरिजनों को मन्दिर में प्रवेश करते देख, भक्तों को गदगद होते देखा, भावावेश में रोते देखा, परन्तु उस मुक्त वातावरण में नाद द्वारा ब्रह्म की उपासना करनेवाले एक महात्मा का संगीत सुनकर जो आनन्द आया वह बताया न जा सकेगा। समय भी कहाँ है। तब नहीं था सो हमें लौटना पड़ा। लौटे। मोटर के पथ पर आकर मेरे दिल से इस यात्रा के साथी कुलियों और घोड़ेवालों से विदा ली। यात्रा का यह अस्थायी स्नेह भी कितना पवित्र होता है। अब फिर वही मोटर, रेल यंत्र, मन फिर-फिर कर वहीं जाना चाहता है, पर इस 'पर' की कहानी आप सब जानते हैं।

कठिन शब्दार्थ :

अलख = अगोचर, जो देखा न जा सके; अछूता = जो छुआ न गया हो; कुहरे = ओस; धर्मभीरू = धर्म से डरनेवाला; पगडंडी = पैदल जाने का रास्ता; कोलाहल = शोर; डाँडी = एक झोली जैसी पहाड़ी सवारी; कारवाँ = यात्रियों का समूह; घिघियाना = गिड़गिड़ाना; शहतूत = एक प्रकार का वृक्ष जिसका फल मीठा होता है; क्याँगचू = एक पंछी जिसका पैर लाल होता है; कंडी = लकड़ी का झूला।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कालिदास ने हिमालय को क्या कहा है?
२) यात्रा के नियम के अनुसार लेखक पहले कहाँ गये?
३) केदारनाथ की शीत-ऋतु की राजधानी का नाम क्या है?
४) सबसे ऊँचे स्थान पर बना हुआ मंदिर कौन-सा है?
५) आठ वर्ष की प्यारी बच्ची का नाम क्या है?
६) जोषीमठ से बद्रीनाथ कितने मील की दूरी पर है?
७) किस पेड़ के नीचे बैठकर प्रतिभापुंज शंकर ने उपनिषदों पर टीकाएँ लिखी थीं?
८) बदरीनारायण मंदिर कितने फुट की ऊँचाई पर है?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) हिमालय की विशेषता का वर्णन कीजिए।
२) बद्रीनाथ यात्रा में लेखक और उनके साथियों की दिनचर्या लिखिए।
३) तुंगनाथ शिखर के सौंदर्य के संबंध में लेखक ने क्या कहा है?
४) बद्रीनाथ की घाटी का चित्रण कीजिए।
५) बद्रीनारायण मंदिर की विशेषता पर प्रकाश डालिए।

III) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे ?

१) 'अरे बिच्छू — बिच्छू!'
२) 'कहिए, दिल जम गया या बच गया।'
३) मंजिल पर पहुँच जाने पर रोमांच हो ही आता है।
४) यात्रा का यह अस्थायी स्नेह भी कितना पवित्र होता है।

IV) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) ऐसे प्रदेश में पहुँचकर अकवि भी कवि और अदार्शनिक भी दार्शनिक बन जाता है।

२) यह मार्ग अपेक्षाकृत भयानक है, इसलिए इसका सौंदर्य भी अभी अछूता है।

३) हाय राम, वह तो सचमुच बिच्छू लग रहा था, पर वह चलता क्यों नहीं?

४) जम कैसे सकता था, हमने वहाँ पानी लगने ही नहीं दिया।

५) वह आकर्षण है — सरल भक्ति का, प्रकृति के वैभव का।

V) वाक्य शुद्ध कीजिए :

१) हम प्रतिदिन सबेरे तीन बजे उठता था।

२) वह तो सचमुच बिच्छू लग रही थी।

३) लेकिन ये कथाएँ कहाँ तक कहा जाए।

४) मंदिर में पूजा हो रहा था।

VI) कोष्ठक में दिए गए कारक चिन्हों से रिक्त स्थान भरिए :
(के, ने, का, पर)

१) मंजिल .... पहुँच जाने पर रोमांच हो ही आता है।

२) कहते हैं कि प्राचीन काल में भगवान .... नर-नारायण के रूप में यहाँ तप किया था।

३) देवदारू .... पेड़ भी इधर बहुत हैं।

४) तीन दिन तक हम उस प्रदेश .... वैभव देखते रहे।

VII) निम्नलिखित वाक्यों को सूचना के अनुसार बदलिए :

१) हम प्रतिदिन सबेरे तीन बजे उठते थे। (वर्तमान काल में बदलिए)

२) अधिकांश यात्री पैदल चलते हैं। (भविष्यत् काल में बदलिए)

३) बद्रीनाथ हमें पुकार रहे हैं। (भूतकाल में बदलिए)

VIII) अन्य लिंग रूप लिखिए :
बालक, भक्त, कवि, भगवान, वृद्ध।

IX) अन्य वचन रूप लिखिए :

रानी, यात्रा, दर्शन, ऋतु, कहानी, चोटी, भाषा।

X) विलोम शब्द लिखिए :

आगे, ऊँचा, उठना, उतार।

XI) निम्नलिखित अनुच्छेद पढ़कर उस पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

इसी गरुड-गंगा से पाताल गंगा की चढ़ाई आरम्भ होती है। गंगा सचमुच पाताल में है और किनारे का पहाड़ हमेशा टूटता रहता है। सड़क के नाम पर पगडंडी इतनी सँकरी और टेढ़ी-मेढ़ी है जैसे काली भयानक घटा में बिजली की चमक। लेकिन सुना जाता है, कि इसी प्रदेश में पार्वती ने शिव से विवाह करने के लिए तप किया था। वर्षों पत्ते खाकर रही थी, इसीलिए आज भी यह पर्णखंड या पैखंडा कहलाता है। यही कहानियाँ सुनते-सुनते हम जोषीमठ जा पहुँचे। यहाँ से बद्रीनाथ केवल १९ मील रह जाता है। यह आद्य शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार मठों में से एक है। यहाँ पर हमने कीमू अर्थात शहतूत का वह पेड़ देखा, जिसके बारे में सुना जाता है कि उसके नीचे बैठकर प्रतिभापुंज शंकर ने उपनिषदों पर टीकाएँ लिखी थीं। नीचे छोटा-सा कस्बा है। उसमें भी कई मंदिर हैं। इन मंदिरों में जो मूर्तियाँ हैं उनमें से कई कला की दृष्टि से बड़ी सुन्दर हैं।

प्रश्न :

१) पाताल गंगा की चढ़ाई कहाँ से आरम्भ होती है?

२) पार्वती ने किससे विवाह करने के लिए तप किया था?

३) जोषीमठ से बद्रीनाथ कितने मील की दूरी पर है?

४) जोषीमठ की स्थापना किसने की थी?

५) शंकराचार्य ने उपनिषदों पर टीकाएँ किस पेड़ के नीचे बैठकर लिखी थीं?

XII) योग्यता विस्तार :

भारत के सांस्कृतिक वैभव प्रधान स्थानों के यात्रा-वृत्तांत पढ़िए।

* * * * * *

८. नालायक

— विवेकी राय

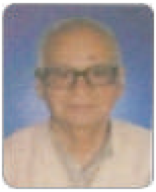

लेखक परिचय :

ग्राम-जीवन और लोक-संस्कृति के प्रति समर्पित रचनाकार विवेकी राय जी का जन्म २० नवंबर १९२३ को गाजीपुर जिले के सोनवानी नामक गाँव के किसान परिवार में हुआ। आप स्वयं को किसान साहित्यकार कहते हैं। अतीत के अभावग्रस्त जीवन, ग्रामीण शिक्षा और प्राइमरी स्कूल के शिक्षक से आरम्भ जीवन यात्रा को, उच्च शिक्षण संस्था की रीडर पद पर सेवा, बड़े लोगों से संपर्क – सान्निध्य तथा ख्याति प्राप्त रचनाकार के रूप में स्थापित हो जाने पर भी सादगी से परिचय में प्रस्तुति उनकी लेखकीय विश्वसनीयता का उत्कृष्ट साक्ष्य है।

हिन्दी और भोजपुरी दोनों में आपने नाटक विधा को छोड़ सारी विधाओं को अधिकारिक रूप से उठाया है तथा अपनी अमिट छाप छोड़ी है।

आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं – काव्य : 'अर्गला', 'रजनीगंधा', 'दीक्षा'; कहानी संग्रह : 'जीवन परिधि', 'नयी कोयल', 'गूँगा जहाज', 'कालातीत', 'अतिथि', 'दलित विमर्श और विवेकी राय की कहानियाँ' आदि।

प्रस्तुत कहानी में मुख्य रूप से थर्ड डिवीजन में पास होनेवालों की मनोदशा को दर्शाया गया है। साथ ही इसमें बेरोजगारी जैसी व्यापक समस्या को उजागर किया गया है।

आज युवाओं में नौकरी के लिए होड़ लगी है। नौकरी पर ही अवलंबित न होकर, किसी न किसी काम पर या व्यवहार में जुट जाने की कला को अपनाना चाहिए। अंको के आधार पर ही नहीं बल्कि प्रतिभा के आधार पर भी युवकों को नौकरियों में चाँस मिले। इन विचारों को ध्यान में रखकर इस पाठ का चयन किया गया है।

जनवरी में एक दिन जब शीतलहर के चाँटे बरस रहे थे और शहर के ऊँचे-ऊँचे भवनों से ऊपर उठे सूरज की किरणें थरथर कर रही थीं, लोगों ने देखा कि शहर में असाधारण भीड़ बढ़ गयी है। यह कैसा कुम्भ पर्व कुछ पहले ही यहाँ आ गया? अथवा स्वर्गीय जवाहरलाल नेहरु जैसा कोई नेता तो शहर में नहीं आया है? अथवा पाकिस्तान से शरणार्थी आ गये? अथवा आज मिट्टी का तेल बँटने वाला है? ये कैसे देहाती घुसपैठिये नगर की शांत सड़कों को हलचलों में डुबोने लगे? कैसे फटेहाल हैं? चेहरों पर हवाइयाँ उड़ रही हैं। आँखों में गहरी उदासी और निराशा है। हर उम्र के लोग हैं। नगर के पथरीले फैलाव में छुट्टे मवेशी की तरह घूम रहे हैं। बीच-बीच में कुछ ऊनी कपड़े और एम्बेसेडर जूते वाले लोग भी हैं। ये उन्हें हाँकने वाले हैं।

बाद में पता चला कि आज जिला परिषद् में प्राइमरी स्कूलों के लिए अनट्रेण्ड अध्यापकों का चुनाव है। तीन सौ अध्यापक चुने जायेंगे। दस हजार उम्मीदवार आये हैं और प्रति उम्मीदवार लगभग ५-६ सिफारिश करने वाले। दर्शक भी काफी हैं और सब मिलाकर एक मेला उतर आया है।

मेरे यहाँ एक उम्मीदवार और उसके चार सिफारिशी पहुँचे तो मैंने इस तरह की बात की जैसे मैं ही चेयरमैन साहब हूँ। मैंने पूछा:

''आपका उम्मीदवार किस डिवीजन में पास है?''

''थर्ड डिवीजन।'' उत्तर मिला।

''थर्ड डिवीजन हाई स्कूल पास है? क्या वह हरिजन है? क्या वह स्वतंत्रता सेनानी का आश्रित है? क्या वह सीमा पर तैनात सैनिक का पुत्र है?''

''नहीं, यह सब तो कुछ नहीं।''

''तब कैसे चले हैं उसे लेकर? थर्ड डिवीजनर के लिए दुनिया में कोई जगह नहीं है।''

''आप ठीक कहते हैं। मगर थर्ड डिवीजनर के लिए दुनिया में कोई जगह हो चाहे न हो, पर स्कूल मास्टर की जगह तो रिजर्व ही समझिये।''

''आप लोग गलत समझते हैं। अब शिक्षा में तरक्की की जायेगी। योग्य लोग भरती किये जायेंगे। शिक्षा का स्तर गिर रहा है। उसे अब

और नहीं गिरने दिया जायेगा।''

''शिक्षा का स्तर तो आप नहीं गिरने देंगे, परन्तु यह बताइये कि आप क्या चुनाव भी नहीं लड़ेंगे?''

अब तक तो मैं जैसे चेयरमैन साहब बना बोल रहा था, परन्तु इस प्रश्न के बाद मेरी कुर्सी जैसे खिसक गयी और मैं मास्टर होकर, जमीन पर उतरकर बात करने लगा। बात देर तक हुई। अन्त में मैंने कहा।

''चेयरमैन साहब से मेरा ऐसा परिचय नहीं है कि मैं आपके उम्मीदवार की सिफारिश में चलूँ। इसके लिए आप लोग ही काफी हैं। हाँ, चलिए आपके साथ चल सकता हूँ।''

जीवन में पहली बार सिफारिश का यह तरीका जाना। एक कागज़ पर उम्मीदवार का नाम, ग्राम और शिक्षादि लिखा गया और उसके नीचे सिफारिश करने वालों ने अपने-अपने हस्ताक्षर किये। कागज़ मेरी तरफ बढ़ाया गया। मैंने भी बकलम खुद कर दिया।

अब संक्षेप में आज का काम था वह कागज चेयरमैन साहब के हाथों में दे देना। चुनाव की कार्रवाई होने में एक घण्टे की देर थी। पता चला कि चेयरमैन साहब जिला परिषद् में हैं। हम लोग पहुँचे।

लेकिन यह क्या? यहाँ तो अद्‌भुत अपार जनसागर पहले से ही उमड़कर जम गया है। प्रवेश-द्वार से लेकर बाहर आँगन, लान, मैदान, चौक, सड़क और लगभग दो-तीन फर्लांग तक ठसमठस आदमी भरे हैं। जिधर देखें उधर मुण्ड ही मुण्ड दिखाई पड़ रहे हैं। किसीको पता नहीं कि क्यों खड़े हैं। बस खड़े हैं। चुनाव हो रहा है। जो पहले आये वे पहले से फाटक की ओर खड़े हैं और जो बाद में आये वे उनके पीछे खड़े होते गये। जो आगे हैं उनका निकलना कठिन है। भीतर परिषद् कार्यालय है जो बन्द है। यही रहस्य है। सब लोग समझते हैं, कुछ हो रहा है। सब लोग जमे हैं कि कहीं बाहर गये और इधर कहीं कुछ हो न जाए।

बड़ी देर तक भीतर जाने का प्रयत्न किया, मगर किसी प्रकार सफलता नहीं मिली तो उसी प्रकार हम लोग भी खड़े हो गये। पान, चाय, चाट, चीनिया बादाम और मिठाई की दुकान का सामान सुबह ही चट हो गया। नया स्टाक लाने के लिए ये शहर की ओर दौड़े। फुटपाथ पर बैठे हाथ देखने वाले ज्योतिषी और शकुन निकालने वाले पण्डितों की चल निकली। सड़क बन्द हो गयी। रिक्शे घूमकर दूसरी ओर से जाने लगे।

देश का विकास, शिक्षा की उन्नति, जनता का नवजागरण, पंचवर्षीय योजनाओं की सफलता, बेकारी की रोकथाम और सच्चे स्वराज्य की झाँकी सड़कों पर साक्षात् दृष्टिगोचर होने लगी।

इसी समय अत्यंत गुप्त रूप से ज्ञात हुआ कि चेयरमैन साहब अभी अपने बंगले पर हैं। उम्मीदवार को वहाँ छोड़कर हम लोग चल पड़े। पता लगा कि अब फतह हुई परन्तु यहाँ का मोर्चा और कड़ा निकला। जितनी भीड़ जिला परिषद् के कार्यालय पर थी उससे दूनी भीड़ यहाँ पर थी। मैदान में लोग बिना बाल के ज्वार-बाजरे की ढ़ाठा की तरह खड़े थे। उसी तरह की बातें हो रही थीं जिस प्रकार चुनाव-पर्व पर पोलिंग स्टेशनों पर होती है। अधिकांश लोगों के हाथ में बैलेट पेपर की तरह सिफारिशी कागज शोभा दे रहा था। सबकी दृष्टि बंगले के फाटक पर लगी थी, जैसे रोजे वाले मुसलमान भाई ईद के चाँद की ओर टकटकी लगाये हों। सभी लोग आगे जाना चाहते हैं परन्तु आगे जमे हुए लोगों का जमाव इतना सघन है कि अक्ल काम नहीं कर रही है। यह सभी उसी प्रकार है जैसे पदों पर जमे हुए लोगों की अगली कतारें पीछे वालों की चोंच नहीं डूबने देती है।

इसी समय दो गाड़ी पुलिस आ गयी। शायद भीड़ को नियंत्रित करने के लिए फोन किया गया था, और लाउड स्पीकर से सुनायी पड़ा :

''सज्जनों, ज्ञात हुआ है कि आप लोग थर्ड डिवीजनरों के सिफारिशी हैं। आप लोगों को बहुत समझाया गया कि सिफारिश से काम नहीं चलेगा, परन्तु आप लोग मानते ही नहीं हैं। अब स्कूल-मास्टर के लिए थर्ड डिवीजनर्स नहीं लिए जायेंगे। यदि आप लोग बिना उस सिफारिशी कागज को दिये टलने वाले नहीं हैं तो दे दीजिये। पचास व्यक्ति खांची लेकर तैनात किये जाते हैं। इन्हीं खांचियों में डाल दें।''

पुलिस की सहायता से खांचियों में कागज डालने का कार्य सम्पन्न हुआ और देखते ही देखते सब खांचियाँ भर गयीं। बंगले के सामने भुसहुड़ की तरह कागजों की ढेरी लग गयी। जैसे कागजों का टुकड़ा लूटकर खूब ऊँचा सम्मत बाबा बना दिया गया है।

अब असली किस्सा सुनिये। वहाँ से हम लोग जिला परिषद् में लौट रहे थे तब तक हम लोगों का वह उम्मीदवार उधर से दौड़ता आता हुआ मिल गया। वह बहुत उत्तेजित था। सुबह का सिकुड़ा वह बालक अब तनकर जवान की तरह लग रहा था। उसका मुँह लाल हो गया था

और रोवें फड़क रहे थे। उसने कहा :

'यह देखिए साहब, लोग कहते हैं कि थर्ड डिवीजनर नहीं लिए जायेंगे। क्यों नहीं लिए जायेंगे? जिसका ज्यादा वोट होगा वह लिया जायेगा। हम लोग फर्स्ट और सेकेण्ड डिवीजन वालों के खिलाफ आन्दोलन करेंगे। ये लोग हम लोगों का हक मार रहे हैं, हम लोग मीटिंग करने जा रहे हैं।'

यह कहकर वह भाग गया। जैसे गोबर बारूद हो गया। लड़का है, कहीं कुछ गलती न कर दे, इसलिए हम लोग भी उधर ही लपके। कुछ दूर आगे बढ़ने पर देखा कि एक भारी भीड़ हूँ-हाँ करती पश्चिम की ओर सड़क पकड़कर भागती चली जा रही है। कुछ लोग 'थर्ड डिवीजनर्स जिन्दाबाद' के नारे लगा रहे हैं। कुछ लोग परिषद् के अधिकारियों के विरुद्ध बक-झक रहे हैं।

एक लड़के के द्वारा ज्ञात हुआ कि शहर से बाहर जहाँ पुलिस और सी.आई.डी. वाले नहीं पहुँच सकें, उन लोगों की कान्फ्रेन्स होगी और उसमें अत्यंत आवश्यक प्रस्ताव पास किये जायेंगे। ये सब लोग जो जा रहे हैं सभी थर्ड डिवीजनर्स हैं।

लगभग डेढ़ मील दूर नदी के किनारे एक बगीचे में सब लोग एकत्र हुए। एक काली माई का टूटा चबूतरा मंच का कार्य कर रहा था, जिस पर खड़े एक युवक ने कहा :

''दोस्तों, घास पर, पेड़ पर, मेड़ पर, डाल पर, और जमीन पर जिसे जहाँ जगह मिले बैठ जाइये। आज हम इस थर्ड डिवीजनर्स कान्फ्रेन्स में 'करो या मरो' का नारा लगायेंगे और जीवन का संकल्प लेंगे। अब तक हम लोग मौत का, नरक का जीवन बिताते आ रहे हैं। सारी दुनिया हमें धक्का देती है। हमारे लिए हर जगह दरवाजा बन्द है। जैसे हम आदमी नहीं बैल हैं। हम हरगिज़ नहीं मानते कि कागज की तीन लकीरों के कारण हम लोग नालायक हैं। हमने फीस दी, हमने स्कूल में समय बिताया, हमने परीक्षा दी। परीक्षा में यदि थर्ड डिवीजन आया तो यह हमारी सरकार का, स्कूल का, स्कूल के अधिकारियों का दोष है। हम उनसे पूछना चाहते हैं कि आखिर हमारा थर्ड डिवीजन क्यों आया? हमारा जो नुकसान हुआ उसका जिम्मेदार कौन है? हम लोग उक्त संस्थानों और लोगों पर मुकद्दमा कायम करेंगे और हरजाना लेंगे। हम

लोग फर्स्ट क्लास के आदमी हैं। हम लोगों को जिन्होंने थर्ड क्लास का बनाया, वे अपराधी हैं, चोर हैं। ये लोग आज 'उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे' की कहावत चरितार्थ कर रहे हैं। हम लोगों को नौकरी के लिए नाक रगड़नी पड़ती है। दो-दो, चार-चार लोगों को खर्चा-वर्चा देकर साथ लाना पड़ता है। इसपर भी दुत्कार। खिलवाड़ नहीं, यह प्रजातंत्र है। वोट का युग है। तो हो जाए वोटिंग, देखें किसकी संख्या अधिक है। संख्या-बल पर निरक्षर यदि एम.एल.ए. हो सकता है तो क्या हम थर्ड डिवीजनर्स को मुदर्रिसी भी नहीं मिल सकती है? भाइयों, यही मुदर्रिसी तो हम लोगों के लिए शरण थी। सो इसपर भी फर्स्ट-सेकिण्ड डिवीजन वालों ने धावा बोल दिया। यह अधिकार अतिक्रमण है। वे लोग रेल में, विकास में और दूसरी सरकारी नौकरियों में जायें। यह मास्टर की गद्दी छोड़ें। इसके लिए हम लोगों को आन्दोलन करना होगा। इस कान्फ्रेन्स में उसकी रूपरेखा बनेगी। तो, किसी भी सभा के लिए एक सभापति की आवश्यकता होती है, सो मैं पाँच वर्ष फेल होकर छठे साल के हाईस्कूल में थर्ड डिवीजनर भाई श्री रघुपतिराघव का नाम आज की सभा के लिए प्रस्तावित करता हूँ।''

मुझे विद्यालय जाने में अत्यधिक विलम्ब हो रहा था, अतः चला आया। आगे क्या हुआ, इसका पता लगा रहा हूँ। हाँ, जब मैं आ रहा था तो 'थर्ड डिवीजनर्स जिन्दाबाद!' के गगनभेदी नारे गूँज रहे थे। एक नारा बहुत देर तक दुहराया गया :

'किसको मिले मास्टरी चाँस,
'थर्ड डिवीजन मैट्रिक पास।'

कठिन शब्दार्थ :

मवेशी = जानवर; बकलम = हस्ताक्षर; मुंड = सर; फतह = जीत; ढाठा = डंठल; खांची = टोकरी; भुसहुड़ = भूसे का ढ़ेर; हरजाना = भरपाई; चरितार्थ = हकीकत; दुत्कार = तिरस्कार; मुदर्रिसी = मास्टरी।

मुहावरे :

गोबर बारूद होना = नाकाम होना; नाक रगड़ना = गिड़गिड़ाना; हक मारना = अधिकार छीनना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कितने अनट्रेन्ड अध्यापकों का चुनाव था?
२) कितने उम्मीदवार आये थे?
३) प्रति उम्मीदवार के पीछे कितनी सिफारिशें आयी थीं?
४) ज्योतिषी कहाँ पर बैठे थे?
५) पुलिस की कितनी गाड़ियाँ आयी थीं?
६) किसका नाम सभापति के लिए प्रस्तावित किया गया?
७) 'नालायक' पाठ के लेखक कौन हैं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) अनट्रेंड अध्यापकों के चुनाव के माहौल का वर्णन कीजिए।
२) जिला परिषद् के बाहर का दृश्य प्रस्तुत कीजिए।
३) लाउड स्पीकर से क्या घोषणा की जा रही थी?
४) दौड़ कर आते हुए उम्मीदवार ने क्या कहा?
५) थर्ड डिवीजनरों की व्यथा को प्रकट कीजिए।

III) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे ?

१) आपका उम्मीदवार किस डिवीजन में पास है?
२) थर्ड डिवीजनर के लिए दुनिया में कोई जगह नहीं है।
३) ये लोग हम लोगों का हक मार रहे हैं।
४) हमारे लिए हर जगह दरवाजा बंद है।

IV) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) जीवन में पहली बार सिफारिश का यह तरीका जाना।
२) सुबह का सिकुड़ा वह बालक अब तनकर जवान की तरह लग रहा था।
३) हम हरगिज़ नहीं मानते कि कागज की तीन लकीरों के कारण हम लोग नालायक हैं।
४) किसको मिले मास्टरी चाँस, थर्ड डिवीजन मैट्रिक पास।

V) निम्नलिखित वाक्यों को सूचना के अनुसार बदलिए :

१) तीन सौ अध्यापक चुने जायेंगे। (वर्तमानकाल में बदलिए)
२) सभी सिफारिशें तिरस्कृत की गईं। (भविष्यत्काल में बदलिए)
३) पुलिस लोगों की रक्षा कर रही है। (भूतकाल में बदलिए)

VI) अन्य लिंग रूप लिखिए :

शेर, अध्यापक, मास्टर, साहब, युवक।

VII) अन्य वचन रूप लिखिए :

पुस्तक, गाड़ी, लड़का, बेटियाँ।

VIII) समानार्थक शब्द लिखिए :

सम्राट, अध्यापक, स्वतंत्र, प्रयत्न, सहायता।

IX) योग्यता विस्तार :

''प्रतिभा को सिर्फ अंकों से मापा नहीं जा सकता।'' इस विषय पर कक्षा में चर्चा कीजिए।

* * * * * *

९. राष्ट्र का स्वरूप

— वासुदेवशरण अग्रवाल

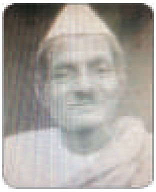

लेखक परिचय :

वासुदेवशरण अग्रवाल का जन्म १९०४ ई. में लखनऊ के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ था। आपने १९२९ में एम.ए., १९४१ में पीएच.डी., और १९४६ में डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त की। अग्रवाल जी ने पाली, संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं का तथा प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं पुरातत्व का गहन अध्ययन किया था। आप भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के गंभीर अध्येता के रूप में विख्यात हैं। १९६७ ई. में आपका निधन हो गया।

आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं – 'कल्पवृक्ष', 'पृथ्वीपुत्र', 'भारत की एकता', 'माता भूमि' आदि।

प्रस्तुत निबंध आपके 'पृथ्वी पुत्र' नामक निबंध संग्रह से लिया गया है। इस निबंध में लेखक ने यह बताया है कि 'राष्ट्र का स्वरूप' तीन तत्वों से मिलकर बनता है – भूमि, जन और संस्कृति। भूमि को माता के रूप में मानना और स्वयं को पृथ्वी का पुत्र मानना राष्ट्रीयता की भावना के उदय के लिए आवश्यक है। राष्ट्र के समग्र रूप में भूमि और जन का दृढ़ संबंध होना चाहिए। इसके साथ-साथ संस्कृति के विषय में लेखक ने मार्मिक विचार प्रकट किये हैं।

विद्यार्थियों को राष्ट्र के स्वरूप से भलीभाँति परिचित कराने एवं उनमें राष्ट्रीय भावना को जागृत करने के उद्देश्य से इस निबंध का चयन किया गया है।

भूमि

भूमि पर बसनेवाला जन और जन की संस्कृति, इन तीनों के सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है।

भूमि का निर्माण देवों ने किया है, वह अनंत काल से है। उसके भौतिक रूप, सौन्दर्य और समृद्धि के प्रति सचेत होना हमारा आवश्यक कर्तव्य है। भूमि के पार्थिव स्वरूप के प्रति हम जितने अधिक जागरित होंगे उतनी ही हमारी राष्ट्रीयता बलवती हो सकेगी। यह पृथ्वी सच्चे अर्थों में समस्त राष्ट्रीय विचारधाराओं की जननी है। जो राष्ट्रीयता पृथ्वी के साथ नहीं जुड़ी वह निर्मूल होती है। राष्ट्रीयता की जड़ें पृथ्वी में जितनी गहरी होंगी उतना ही राष्ट्रीय भावों का अंकुर पल्लवित होगा। इसलिए पृथ्वी के भौतिक स्वरूप की आद्योपांत जानकारी प्राप्त करना, उसकी सुन्दरता, उपयोगिता और महिमा को पहचानना आवश्यक धर्म है।

इस कर्तव्य की पूर्ति सैकड़ों-हजारों प्रकार से होनी चाहिए। पृथ्वी से जिस वस्तु का संबंध है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, उसका कुशल प्रश्न पूछने के लिए हमें कमर कसनी चाहिए। पृथ्वी का सांगोपांग अध्ययन जागरणशील राष्ट्र के लिए बहुत ही आनंदप्रद कर्तव्य माना जाता है। गाँवों और नगरों में सैकड़ों केन्द्रों से इस प्रकार के अध्ययन का सूत्रपात होना आवश्यक है।

उदाहरण के लिए, पृथ्वी की उपजाऊ शक्ति को बढ़ानेवाले मेघ जो प्रतिवर्ष समय पर आकर अपने अमृत जल से इसे सींचते हैं; हमारे अध्ययन की परिधि के अंतर्गत आने चाहिए। उन मेघजलों से परिवर्द्धित प्रत्येक तृणलता और वनस्पति का सूक्ष्म परिचय प्राप्त करना ही हमारा कर्तव्य है।

इस प्रकार जब चारों ओर से हमारे ज्ञान के कपाट खुलेंगे, तब सैकड़ों वर्षों से शून्य और अंधकार से भरे हुए जीवन के क्षेत्रों में नया उजाला दिखायी देगा।

धरती माता की कोख में जो अमूल्य निधियाँ भरी हैं जिनके कारण वह वसुन्धरा कहलाती है उससे कौन परिचित न होना चाहेगा? लाखों-करोड़ों वर्षों से अनेक प्रकार की धातुओं को पृथ्वी के गर्भ में पोषण

मिला है। दिन-रात बहनेवाली नदियों ने पहाड़ों को पीस-पीसकर अगणित प्रकार की मिट्टियों से पृथ्वी की देह को सजाया है। हमारे भावी आर्थिक अभ्युदय के लिए इन सबकी जाँच-पड़ताल अत्यन्त आवश्यक है। पृथ्वी की गोद में जन्म लेनेवाले जड़-पत्थर कुशल शिल्पियों से सँवारे जाने पर अत्यन्त सौन्दर्य के प्रतीक बन जाते हैं। नाना भाँति के अनगढ़ नग विन्ध्य की नदियों के प्रवाह में सूर्य की धूप से चिलकते रहते हैं, उनको जब चतुर कारीगर पहलदार कटाव पर लाते हैं तब उनके प्रत्येक घाट से नयी शोभा और सुन्दरता फूट पड़ती है, वे अनमोल हो जाते हैं। देश के नर-नारियों के रूप-मंडन और सौन्दर्य-प्रसाधन में इन छोटे पत्थरों का भी सदा से कितना भाग रहा है; अतएव हमें उनका ज्ञान होना भी आवश्यक है।

पृथ्वी और आकाश के अंतराल में जो कुछ सामग्री भरी है, पृथ्वी के चारों ओर फैले हुए गंभीर सागर में जो जलचर एवं रत्नों की राशियाँ हैं, उन सब के प्रति चेतना और स्वागत के नये भाव राष्ट्र में फैलने चाहिए। राष्ट्र के नवयुवकों के हृदय में उन सबके प्रति जिज्ञासा की नयी किरणें जब तक नहीं फूटतीं तब तक हम सोए हुए के समान हैं।

विज्ञान और उद्यम दोनों को मिलाकर राष्ट्र के भौतिक स्वरूप का एक नया ठाट खड़ा करना है। यह कार्य प्रसन्नता, उत्साह और अथक परिश्रम के द्वारा नित्य आगे बढ़ाना चाहिए। हमारा यह ध्येय हो कि राष्ट्र में जितने हाथ हैं उनमें से कोई भी इस कार्य में भाग लिये बिना रीता न रहे। तभी मातृभूमि की पुष्कल समृद्धि और समग्र रूपमंडन प्राप्त किया जा सकता है।

जन

मातृभूमि पर निवास करनेवाले मनुष्य राष्ट्र का दूसरा अंग है। पृथ्वी हो और मनुष्य न हों, तो राष्ट्र की कल्पना असंभव है। पृथ्वी और जन दोनों के सम्मिलन से ही राष्ट्र का स्वरूप संपादित होता है। जन के कारण ही पृथ्वी मातृभूमि की संज्ञा प्राप्त करती है। पृथ्वी माता है और जन सच्चे अर्थों में पृथ्वी का पुत्र है—

(माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या: ।)

— भूमि माता है, मैं उसका पुत्र हूँ।

जन के हृदय में इस सूत्र का अनुभव ही राष्ट्रीयता की कुंजी है। इसी भावना से राष्ट्र-निर्माण के अंकुर उत्पन्न होते हैं।

यह भाव जब सशक्त रूप में जागता है तब राष्ट्र-निर्माण के स्वर वायुमंडल में भरने लगते हैं। इस भाव के द्वारा ही मनुष्य पृथ्वी के साथ अपने सच्चे संबंध को प्राप्त करते हैं। जहाँ यह भाव नहीं है वहाँ जन और भूमि का संबंध अचेतन और जड़ बना रहता है। जिस समय भी जन का हृदय भूमि के साथ माता और पुत्र के संबंध को पहचानता है, उसी क्षण आनंद और श्रद्धा से भरा हुआ उसका प्रणाम-भाव मातृभूमि के लिए इस प्रकार प्रकट होता है –

(नमो मात्रे पृथिव्यै। नमो मात्रे पृथिव्यै।)
माता पृथ्वी को प्रणाम है। माता पृथ्वी को प्रणाम है।

यह प्रणाम-भाव ही भूमि और जन का दृढ़ बन्धन है। इसी दृढ़ भित्ति पर राष्ट्र का भवन तैयार किया जाता है। इसी दृढ़ चट्टान पर राष्ट्र का चिर जीवन आश्रित रहता है। इसी मर्यादा को मानकर राष्ट्र के प्रति मनुष्यों के कर्तव्य और अधिकारों का उदय होता है। जो जन पृथ्वी के साथ माता और पुत्र के संबंध को स्वीकार करता है, उसे ही पृथ्वी के वरदानों में भाग पाने का अधिकार है। माता के प्रति अनुराग और सेवाभाव पुत्र का स्वाभाविक कर्तव्य है। वह एक निष्कारण धर्म है। स्वार्थ के लिए पुत्र का माता के प्रति प्रेम, पुत्र के अध:पतन को सूचित करता है। जो जन मातृभूमि के साथ अपना संबंध जोड़ना चाहता है उसे अपने कर्तव्यों के प्रति पहले ध्यान देना चाहिए।

माता अपने सब पुत्रों को समान भाव से चाहती है। इसी प्रकार पृथ्वी पर बसनेवाले जन बराबर हैं। उनमें ऊँच और नीच का भाव नहीं है। जो मातृभूमि के उदय के साथ जुड़ा हुआ है वह समान अधिकार का भागी है। पृथ्वी पर निवास करनेवाले जनों का विस्तार अनंत है — नगर और जनपद, पुर और गाँव, जंगल और पर्वत नाना प्रकार के जनों से भरे हुए हैं। ये जन अनेक प्रकार की भाषाएँ बोलनेवाले और अनेक धर्मों के माननेवाले हैं, फिर भी ये मातृभूमि के पुत्र हैं और इस कारण उनका सौहार्द भाव अखण्ड है। सभ्यता और रहन-सहन की दृष्टि से जन एक-दूसरे से आगे-

पीछे हो सकते हैं किन्तु इस कारण से मातृभूमि के साथ उनका जो संबंध है उसमें कोई भेदभाव उत्पन्न नहीं हो सकता। पृथ्वी के विशाल प्रांगण में सब जातियों के लिए समान क्षेत्र है। समन्वय के मार्ग से भरपूर प्रगति और उन्नति करने का सबको एक जैसा अधिकार है। किसी जन को पीछे छोड़कर राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकता। अतएव राष्ट्र के प्रत्येक अंग की सुध हमें लेनी होगी। राष्ट्र के शरीर के एक भाग में यदि अंधकार और निर्बलता का निवास है तो समग्र राष्ट्र का स्वास्थ्य उतने अंश में असमर्थ रहेगा। इस प्रकार समग्र राष्ट्र को जागरण और प्रगति की एक जैसी उदार भावना से संचालित होना चाहिए।

जन का प्रवाह अनंत होता है। सहस्त्रों वर्षों से भूमि के साथ राष्ट्रीय जन ने तादात्म्य प्राप्त किया है। जब तक सूर्य की रश्मियाँ नित्य प्रात:काल भुवन को अमृत से भर देती हैं, तब तक राष्ट्रीय जन का जीवन भी अमर है। इतिहास के अनेक उतार-चढ़ाव पार करने के बाद भी राष्ट्र-निवासी जन नयी उठती लहरों से आगे बढ़ने के लिए अजर-अमर हैं। जन का संततवाही जीवन नदी के प्रवाह की तरह है, जिसमें कर्म और श्रम के द्वारा उत्थान के अनेक घाटों का निर्माण करना होता है।

संस्कृति

राष्ट्र का तीसरा अंग जन की संस्कृति है। मनुष्यों ने युग-युगों में जिस सभ्यता का निर्माण किया है वही उसके जीवन की श्वास-प्रश्वास है। बिना संस्कृति के जन की कल्पना कबंधमात्र है; संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है। संस्कृति के विकास और अभ्युदय के द्वारा ही राष्ट्र की वृद्धि संभव है। राष्ट्र के समग्र रूप में भूमि और जन के साथ-साथ जन की संस्कृति का महत्वपूर्ण स्थान है। यदि भूमि और जन अपनी संस्कृति से विरहित कर दिये जायँ तो राष्ट्र का लोप समझना चाहिए। जीवन के विटप का पुष्प संस्कृति है। संस्कृति के सौन्दर्य और सौरभ में ही राष्ट्रीय जन के जीवन का सौन्दर्य और यश अंतर्निहित है। ज्ञान और कर्म दोनों के पारस्परिक प्रकाश की संज्ञा संस्कृति है। भूमि पर बसनेवाले जन ने ज्ञान के क्षेत्र में जो सोचा है और कर्म के क्षेत्र में जो रचा है, दोनों के रूप में हमें राष्ट्रीय संस्कृति के दर्शन मिलते हैं। जीवन के विकास की युक्ति ही

संस्कृति के रूप में प्रकट होती है। प्रत्येक जाति अपनी-अपनी विशेषताओं के साथ इस युक्ति को निश्चित करती है और उससे प्रेरित संस्कृति का विकास करती है। इस दृष्टि से प्रत्येक जन की अपनी-अपनी भावना के अनुसार पृथक्-पृथक् संस्कृतियाँ राष्ट्र में विकसित होती हैं, परन्तु उन सबका मूल आधार पारस्परिक सहिष्णुता और समन्वय पर निर्भर है।

जंगल में जिस प्रकार अनेक लता, वृक्ष और वनस्पति अपने अदम्य भाव से उठते हुए पारस्परिक सम्मिलन से अविरोधी स्थिति प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार राष्ट्रीय जन अपनी संस्कृतियों के द्वारा एक-दूसरे के साथ मिलकर राष्ट्र में रहते हैं। जिस प्रकार जल के अनेक प्रवाह नदियों के रूप में मिलकर समुद्र में एकरूपता प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार राष्ट्रीय जीवन की अनेक विधियाँ राष्ट्रीय संस्कृति में समन्वय प्राप्त करती हैं। समन्वय- युक्त जीवन ही राष्ट्र का सुखदायी रूप है।

साहित्य, कला, नृत्य, गीत, आमोद-प्रमोद अनेक रूपों में राष्ट्रीय जन अपने-अपने मानसिक भावों को प्रकट करते हैं। आत्मा का जो विश्वव्यापी आनंद-भाव है वह इन विविध रूपों में साकार होता है। यद्यपि बाह्य रूप की दृष्टि से संस्कृति के ये बाहरी लक्षण अनेक दिखायी पड़ते हैं, किन्तु आंतरिक आनंद की दृष्टि से उनमें एकसूत्रता है। जो व्यक्ति सहृदय है, वह प्रत्येक संस्कृति के आनंद-पक्ष को स्वीकार करता है और उससे आनंदित होता है। इस प्रकार की उदार भावना ही विविध जनों से बने हुए राष्ट्र के लिए स्वास्थ्यकर है।

गाँवों और जंगलों में स्वच्छंद जन्म लेनेवाले लोकगीतों में, तारों के नीचे विकसित लोक-कथाओं में संस्कृति का अमित भंडार भरा हुआ है, जहाँ से आनंद की भरपूर मात्रा प्राप्त हो सकती है। राष्ट्रीय संस्कृति के परिचयकाल में उन सबका स्वागत करने की आवश्यकता है।

पूर्वजों ने चरित्र और धर्म-विज्ञान, साहित्य, कला और संस्कृति के क्षेत्र में जो कुछ भी पराक्रम किया है उस सारे विस्तार को हम गौरव के साथ धारण करते हैं और उसके तेज को अपने भावी जीवन में साक्षात् देखना चाहते हैं। यही राष्ट्र संवर्धन का स्वाभाविक प्रकार है। जहाँ अतीत वर्तमान के लिए भाररूप नहीं है, जहाँ भूत वर्तमान को जकड़ नहीं रखना

चाहता वरन् अपने वरदान से पुष्टि करके उसे आगे बढ़ाना चाहता है, उस राष्ट्र का हम स्वागत करते हैं।

कठिन शब्दार्थ :

बलवती = बलिष्ठ; आद्योपांत = आरंभ से अंत तक; सांगोपांग = पूर्ण रूप से; परिवर्द्धित = जिसमें वृद्धि हुई हो; अभ्युदय = उन्नति, वृद्धि; अनगढ़ = बेडौल; तादात्म्य = एकत्व समर्पण; संततवाही = निरंतर, सदा; कबंध = सिर रहित धड़; विटप = पेड़, वृक्ष; संवर्धन = उन्नति करना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) किनके सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है?
२) किसकी कोख में अमूल्य निधियाँ भरी हैं?
३) सच्चे अर्थों में पृथ्वी का पुत्र कौन है?
४) पुत्र का स्वाभाविक कर्तव्य क्या है?
५) माता अपने सब पुत्रों को किस भाव से चाहती है?
६) राष्ट्र का तीसरा अंग कौन-सा है?
७) राष्ट्र की वृद्धि किसके द्वारा संभव है?
८) राष्ट्र का सुखदायी रूप क्या है?
९) संस्कृति का अमित भंडार किसमें भरा हुआ है?
१०) 'राष्ट्र का स्वरूप' पाठ के लेखक कौन हैं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) राष्ट्र को निर्मित करनेवाले तत्वों का वर्णन कीजिए।
२) धरती 'वसुंधरा' क्यों कहलाती है?
३) राष्ट्र निर्माण में जन का क्या योगदान होता है?
४) लेखक ने संस्कृति को जीवन-विटप का पुष्प क्यों कहा है?
५) समन्वययुक्त जीवन के संबंध में वासुदेवशरण अग्रवाल के विचार प्रकट कीजिए।

III) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) भूमि माता है, मैं उसका पुत्र हूँ।
२) यह प्रणाम भाव ही भूमि और जन का दृढ़ बंधन है।
३) जन का प्रवाह अनंत होता है।
४) संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है।
५) उन सबका मूल आधार पारस्परिक सहिष्णुता और समन्वय पर निर्भर है।

IV) निम्नलिखित वाक्य सूचनानुसार बदलिए :

१) हमारे ज्ञान के कपाट खुलते हैं। (भविष्यत्काल में बदलिए)
२) माता अपने सब पुत्रों को समान भाव से चाहती थी। (वर्तमान काल में बदलिए)
३) मनुष्य सभ्यता का निर्माण करेगा। (भूतकाल में बदलिए)

V) कोष्ठक में दिए गए कारक चिन्हों से रिक्त स्थान भरिए :
(पर, का, के, में)

१) जन .... प्रवाह अनंत होता है।
२) जीवन नदी .... प्रवाह की तरह है।
३) पृथ्वी के गर्भ ...... अमूल्य निधियाँ हैं ।
४) भूमि .... जन निवास करते हैं।

VI) समानार्थक शब्द लिखिए :
अंबर, धरती, पेड़, नारी, सूर्य।

VII) विलोम शब्द लिखिए :
प्रसन्न, उत्साह, अमृत, स्वाभाविक, जन्म, ज्ञान।

VIII) योग्यता विस्तार :
भारत की विभिन्न संस्कृति एवं रीति-रिवाजों के बारे में जानकारी प्राप्त कीजिए।

* * * * * *

१०. रिहर्सल

— ओमप्रकाश 'आदित्य'

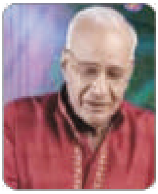

लेखक परिचय :

हिन्दी साहित्य जगत के प्रसिद्ध हास्य-व्यंग्य रचनाकार ओमप्रकाश 'आदित्य' का जन्म ५ नवम्बर १९३६ को रणसीका, गुड़गाँव (हरियाणा) में हुआ। आपने दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिन्दी) की उपाधि प्राप्त की। गंभीर कविताओं से प्रारंभ करके हास्य-व्यंग्य के क्षेत्र में अवतरित होने वाले 'आदित्य' जी ने आज कवि के रूप में हिन्दी मंच को और निबंधकार के रूप में पाठक वर्ग को पूरी तरह जकड़ लिया है। हास्य-एकांकी लेखन के क्षेत्र में भी आपने अपने जौहर दिखाए हैं। सन् १९६० में लालकिले का कवि-सम्मेलन आपके जीवन का प्रथम कवि-सम्मेलन था। आपकी हास्य-व्यंग्य रचनाएँ हिन्दी की विशिष्ट पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। आपकी प्रमुख कृतियों में, 'थर्ड डिवीजन', 'इधर भी गधे हैं, उधर भी गधे हैं', 'तोता एंड मैना', 'उल्लू का इंटरव्यू', 'माडर्न शादी', 'घट-घट व्यापी भ्रष्टाचार', 'गौरी बैठी छत पर' आदि सम्मिलित हैं। आपकी मृत्यु ८ जून २००९ को भोपाल के नज़दीक कार दुर्घटना में हुई।

प्रस्तुत एकांकी 'श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य एकांकी' — काका हाथरसी, डॉ.गिरिराज शरण अग्रवाल से संकलित की गई है। इस एकांकी में वैद्य परमानन्द तथा प्रोफेसर पांडुरंग अनोखे ढंग से मरीजों का इलाज करते हैं। रमेश के बेहोशी के अभिनय ने एकांकी को न सिर्फ हास्य-व्यंग्य से सराबोर किया है बल्कि वैद्य और प्रोफेसर की सच्चाई को भी भलीभाँति उजागर किया है।

हास्य-व्यंग्य के साथ-साथ विद्यार्थियों को विषय से अवगत कराने के उद्देश्य से 'रिहर्सल' एकांकी चयनित है।

पात्र —

एक बीमार स्त्री
वैद्य परमानन्द
किसान
अध्यापक
प्रोफेसर पांडुरंग
एक बालक
बालक के पिता, माता आदि।

(वैद्य परमानन्द का कमरा। वैद्य जी एक कुर्सी पर बैठे हैं। आगे पुरानी-सी एक मेज है। मेज पर कलम, दवात और कागज बेतरतीब बिखरे पड़े हैं। एक लम्बी शीशी रखी है जिसके लेबिल पर मोटे अक्षरों में 'अमर भास्कर चूर्ण' लिखा है। दायीं ओर एक बेंच है। परमानन्द एक पुरानी मोटी पुस्तक पढ़ने में व्यस्त हैं। आयु लगभग पचास वर्ष। आँखों पर चश्मा, लम्बी दाढ़ी, झुर्रीदार मूँछे हैं। एक अधेड़ उम्र की मॉडर्न ढ़ंग से सजी स्त्री आती है और आकर बेंच पर बैठ जाती है।)

स्त्री : मैं बीमार हूँ वैद्य जी !

परमानन्द : बीमार हो तभी तो यहाँ चली आयीं, नहीं तो क्यों आतीं! बीमारी का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

स्त्री : मेरा दिल धड़कता है (पहले दिल के दायीं ओर हाथ रखती है, फिर संभलकर बायीं ओर रखते हुए)

परमानन्द : इस उम्र में? लक्षण अच्छे नहीं हैं। हार्ट फेल हो सकता है।

स्त्री : सदा घबराहट महसूस करती हूँ !

परमानन्द : यही तो मौत की निशानी है।

स्त्री : (और घबराकर) नींद बहुत कम आती है।

परमानन्द : (किताब बन्द कर मेज पर रखते हुए) आपका बचना मुश्किल है बहिन जी! नब्ज दिखाइये।

स्त्री : (हाथ आगे बढ़ाते हुए) मेरी रक्षा कीजिए वैद्य जी, मैं अभी मरना नहीं चाहती।

परमानन्द : (नब्ज पकड़ते हुए) मरना तो कोई नहीं चाहता, लेकिन

मैंने अपने रोगियों को अक्सर मरते देखा है। आपको सपने भी आते हैं?

स्त्री : जी! कभी-कभी।

परमानन्द : सपने में भूत भी दिखाई देते होंगे?

स्त्री : (घबराकर सिर हिलाते हुए) भूत तो कभी नहीं...

परमानन्द : (नब्ज छोड़कर) आज दिखाई देंगे, ध्यान से देखियेगा।

स्त्री : आप मेरा कुछ इलाज कीजिए वैद्य जी।

परमानन्द : हृदय के भीतरी भाग पर चंदन का लेप कीजिए।

स्त्री : (आश्चर्य से) भीतरी भाग पर?

परमानन्द : (शीशी से स्त्री के हाथ पर चूर्ण उड़ेलते हुए) जी! यह अमर भास्कर ले जाइये। इसे इस तरह से खाइये कि पेट में न जाकर सीधा हृदय में जाये।

स्त्री : कोई परहेज भी है वैद्य जी?

परमानन्द : परहेज ही तो असली इलाज है। आप पन्द्रह दिन तक खाना मत खाइये।

स्त्री : पन्द्रह दिन तक?

परमानन्द : हाँ, दस दिन तक पानी मत पीजिए।

स्त्री : वैद्य जी, पानी.....।

परमानन्द : मेरा मतलब ठंडा पानी मत पीजिए, उबालकर पीजिए।

(एक किसान द्वार पर आकर खड़ा हो जाता है।)

स्त्री : वैद्य जी, फिर कब आऊँ आपकी शरण में ?

परमानन्द : कभी भी आइये, वैसे परमानन्द के पास जो एक बार होकर जाता है दोबारा लौटकर नहीं आता।

(स्त्री भयभीत मुद्रा में बनावटी हँसी हँसकर प्रस्थान करती है।)

किसान : (द्वार से ही हाथ जोड़कर परमानन्द की ओर आते हुए) राम-राम वैद्य जी !

परमानन्द : (ध्यानपूर्वक किसान को देखते हुए) राम-राम! आओ भाई! तुम तो बीमार दिखाई देते हो।

किसान : (बेंच पर बैठते हुए) वैद्य जी। मैं नही, मेरी गाय बीमार है। दस दिन से न चारा खाती है न दूध देती है।

परमानन्द : तुम बीमार हो या तुम्हारी गाय, मेरे लिए एक ही बात है।

लाओ नब्ज दिखाओ।

किसान : जी, नब्ज मैं दिखाऊँ?

परमानन्द : और कौन दिखायेगा? गाय तुम्हारी बीमार है या किसी और की? (नब्ज देखते हुए) गाय की हालत तो बहुत चिंताजनक है भाई। उसे शीघ्र चारा खिलाओ नहीं तो मरे बिना नहीं मानेगी।

किसान : वैद्य जी, यही तो रोग है उसे। वह चारा नहीं खाती।

परमानन्द : अच्छा! (सोचकर) उसे उसीका दूध निकालकर पिलाओ।

किसान : वह दूध देती ही नहीं वैद्य जी !

परमानन्द : तुम पिलाओगे तो अवश्य देने लगेगी। (शीशी उठाकर) यह अमर भास्कर चूर्ण ले जाओ, गर्म पानी के साथ खा लेना।

किसान : जी? मैं खाऊँ या गाय को खिलाऊँ?

परमानन्द : (चूर्ण किसान के हाथ पर डालते हुए) तुम भी खा लेना, गाय को भी खिला देना। दोनों को लाभ पहुँचेगा।

(तेजी से हाँफते हुए एक अध्यापक का प्रवेश। उम्र पैंतालीस, कुर्ता-पायजामा, जवाहरकट, पाँव में साधारण चप्पल, कई दिन से शेव नहीं हुई दाढ़ी-मूँछ।)

अध्यापक : वैद्य जी! शीघ्र चलिये। मेरा लड़का बेहोश हो गया है।

(किसान राम-राम करके प्रस्थान करता है।)

परमानन्द : आपका लड़का कितना बड़ा है उम्र में?

अध्यापक : जी काफी बड़ा है।

परमानन्द : आपसे तो छोटा ही होगा।

अध्यापक : जी... मेरा तो लड़का ही है।

परमानन्द : नहीं, कई बेटे अपने बाप से भी बड़े हो जाते हैं। आप क्या काम करते हैं?

अध्यापक : जी, काम तो कुछ नहीं करता, अध्यापक हूँ।

परमानन्द : मैं भी तो पहले अध्यापक था। मेरे पढ़ाये हुए बच्चे जानवरों से भी ज्यादा समझदार होते थे।

अध्यापक : वैद्य जी! जल्दी चलिए, यह बातों का समय नहीं है, मेरा लड़का... ।

परमानन्द : (उठते हुए) चलिये, चलिये, यह अमर भास्कर चूर्ण की शीशी उठा लीजिये।

(अध्यापक शीशी उठाता है। दोनों का शीघ्रता से प्रस्थान।)

दूसरा दृश्य

(प्रोफेसर पांडुरंग का कमरा। पांडुरंग कुर्सी पर बैठे हैं। मेज के एक कोने पर तीन पुस्तकें ऊपर-नीचे रखी हैं। वे दीवार पर नजर गड़ाये कुछ सोचने में व्यस्त हैं। उम्र बयालीस वर्ष। दाढ़ी फ्रेंचकट, मूँछे साफ, आँखों पर मोटे फ्रेम का काला चश्मा, काला सूट और काली टाई पहने हैं।
वही स्त्री आकर सामने की कुर्सी पर बैठ जाती है।)

स्त्री : मैं बीमार हूँ प्रोफेसर साहब!

प्रोफेसर : आपको भ्रम हो गया है, आप बीमार नहीं हैं।

स्त्री : मेरा हृदय धड़कता है।

प्रोफेसर : हृदय तो मेरा भी धड़कता है, दुनिया में हर आदमी का धड़कता है। इसमें नयी बात क्या है? हृदय का गुण ही धड़कना है।

स्त्री : घबराहट बहुत रहती है।

प्रोफेसर : यह आपके दिल की कमजोरी है, बीमारी नहीं।

स्त्री : यह कमजोरी कैसे दूर हो सकती है?

प्रोफेसर : हिम्मत से। अभी ठीक किये देता हूँ। आप सीधी होकर बैठिये।

(स्त्री सतर्क होकर बैठती है।)

प्रोफेसर : आँखें मूँद लीजिए।

(स्त्री आँखें मूँदती है।)

अब आप कहाँ हैं?

स्त्री : आपकी दुकान में।

प्रोफेसर : ना, आप बीहड़ जंगल में हैं, मेरी दुकान में नहीं।

स्त्री : लेकिन यह तो आपकी दुकान है।

प्रोफेसर : ना, महसूस कीजिए कि आप घने जंगल में हैं। हैं न आप जंगल में!

स्त्री : (सकपकाकर) जी.. जी.... हूँ।

प्रोफेसर : (पहले धीमे, फिर धीरे-धीरे तेज स्वर में) भयानक जंगल, पेड़ों का अंधेरा, हाथियों का चिंघाड़, शेरों की दहाड़, और फिर... सन्नाटा।

स्त्री : (घबराकर) जी... जी.... प्रोफेसर साहब।

प्रोफेसर : शेर आपको देखकर दहाड़ता हुआ, छलाँग लगाकर आपकी ओर बढ़ रहा है, उसकी आँखे जल रही हैं। नाखून कटार की तरह, दाँत बिजली की तरह....।

स्त्री : (घबराहट और रुदन के स्वर में) जी... जी...जी...

प्रोफेसर : घबराइये मत, आँखें मत खोलिये, आप शेर से लड़िये। मैं आपको जिताऊँगा। लड़िये, लड़िये, लड़िये,आप लड़ रही हैं ना?

स्त्री : (घबराई आवाज में) जी, लड़ रही हूँ।

प्रोफेसर : (हवा में घूँसा चलाते हुए) अब इसे घूँसे से मार दीजिए। उसके मुँह में हाथ डालकर उसके दाँत तोड़ दीजिए। जल्दी कीजिये।
(थोडी देर रुककर) अभी मारा या नहीं?

स्त्री : (फूली साँस से) जी, मार दिया।

(आँखें खोलकर घबरायी नजर से इधर-उधर देखती है। द्वार पर किसान अभी आया है। उसे देखकर उचक पड़ती है – जैसे शेर दिखाई दे गया हो।)

प्रोफेसर : इसी तरह आप तूफान आये समुद्र में कूदिये, दुर्गम पहाड़ों पर चढ़िये, चम्बल की घाटी में डाकुओं का सामना कीजिए। आप का दिल लोहे की तरह मजबूत हो जायेगा।

स्त्री : पांडुरंग जी! मुझे डर है कि कहीं यहाँ बैठे-बैठे मेरा दिल धड़कना बंद न कर दे। मैं चलती हूँ, नमस्ते !
(झटके के साथ उठकर तेजी से जाती है।)

प्रोफेसर : (एक ही साँस में) रास्ते-भर आँखें मूँदकर महसूस

करती जाइये कि आप रानी लक्ष्मीबाई की तरह लड़ाई के मैदान में तलवार चलाती हुई बढ़ रही हैं।

किसान : (प्रवेश करते हुए) राम-राम परोफेसर जी?

प्रोफेसर : एक बात पहले ही ध्यान से सुन लो।

किसान : (पास आकर) क्या परोफेसर जी?

प्रोफेसर : तुम्हें किसी तरह की कोई बीमारी नहीं है।

किसान : मैं तो आपकी दुआ से आज तक कभी बीमार हुआ ही नहीं, पिछले दस दिनों से मेरी गाय बीमार है।

प्रोफेसर : गाय बीमार है तो तुम किसलिए आये हो? गाय का इलाज क्या तुम्हारी शक्ल देखकर करूँ?

किसान : जी, वो न चारा खाती है न दूध देती है।

प्रोफेसर : गाय का चेहरा देखे बिना हम कुछ नहीं कह सकते। कल उसका चेहरा लेकर आना, फिर फेस रीडिंग करके बीमारी बतायेंगे।

किसान : परोफेसर जी! चेहरा कैसे लाया जा सकता है, गाय को ही ले आऊँगा।

प्रोफेसर : (गुस्से से) गाय को ले आओगे! यह दुकान है या गौशाला? गाय का एक फोटो खिंचवाकर ले आना। जाओ, मेरा समय नष्ट मत करो।

(सत्रह-अट्ठारह वर्ष की एक लड़की का प्रवेश)

लड़की : प्रोफेसर साहब! चलिये, जल्दी चलिये, मेरा भाई बेहोश हो गया है।

प्रोफेसर : किस तरह?

लड़की : एक घंटे से न बोलता है, न हिलता-डुलता है।

प्रोफेसर : यह कोई खास बीमारी नहीं है।

लड़की : कुछ लोग कहते हैं सन्निपात है।

प्रोफेसर : बिलकुल नहीं। सन्निपात उनको है जो ऐसा कहते हैं।

लड़की : एक डाक्टर ने डिप्थीरिया बताया है।

प्रोफेसर : ऐसे डाक्टर को बुलाया ही क्यों आपने?

लड़की : जल्दी चलिये प्रोफेसर जी, मेरा दिल काँप रहा है।

प्रोफेसर : यह आपके दिल की कमजोरी है, डिप्थीरिया नहीं।

लड़क़ी : डिप्थीरिया मुझको नहीं मेरे भाई को है। आप जल्दी चलिये।

प्रोफेसर : (बेंत उठाकर उठते हुए) चलिये, चलिये, घबराइये मत।

लड़की : आपका बैग?

प्रोफेसर : मेरे दिमाग में है।

(दोनों का प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

(अध्यापक का घर। बारह वर्षीय लड़का खाट पर अचेत पड़ा है। सिरहाने की ओर वैद्य परमानन्द बैठे हैं, पैताने की ओर लड़के का पिता। लड़के की माँ वैद्य जी के पास चिन्तित मुद्रा में खड़ी है।)

माँ : वैद्य जी! मेरे लड़के को बचाइये, नहीं तो मैं मर जाऊँगी।

परमानन्द : निश्चिंत रहिये! जब तक मैं दवाई न दूँ, यहाँ कोई नहीं मर सकता।

माँ : वैद्य जी किसी तरह इसे होश में लाइये, यह मेरा इकलौता पुत्र है।

परमानन्द : मैं भी अपने छोटे भाइयों के पैदा होने से पूर्व अपनी माँ का इकलौता पुत्र था, लेकिन इतनी बुरी तरह कभी बेहोश नहीं हुआ।

पिता : इसे क्या हो गया है वैद्य जी?

परमानन्द : यह बेहोश हो गया है।

माँ : यह ठीक हो जायेगा न वैद्य जी!

परमानन्द : ठीक तो हो जायेगा, पर होश में नही आयेगा।

माँ : (सिसकी लेते हुए) वैद्य जी !

पिता : ऐसा मत कहिये वैद्य जी, हम आपकी शरण में हैं!

(प्रोफेसर पांडुरंग तथा लड़की का प्रवेश)

लड़की : वैद्य जी भी बैठे हैं प्रोफेसर साहब। पिता जी मुझसे पहले ही वैद्य जी को बुला लाये।

प्रोफेसर : (आगे बढ़कर वैद्य परमानन्द की ओर देखते हुए) कौन? वैद्य परमानन्द! यमराज का सगा भाई!

परमानन्द : और तुम्हारा चाचा। प्रोफेसर पांडुरंग, तुम वात-पित्त -कफ की तरह एक साथ ही क्यों चले आ रहे हो?

प्रोफेसर : इसलिए कि तुम रोगी की नब्ज पकड़कर उसकी जान न ले लो।

(पांडुरंग दूसरी ओर सिरहाने बैठते हैं।)

पिता : इसकी डेढ़ घंटे से यही हालत है प्रोफेसर जी!

प्रोफेसर : मुझे इसका चेहरा देखने दीजिए।

परमानन्द : चेहरा देखकर इसकी तस्वीर बनाओगे?

प्रोफेसर : चुप रहिये आप, मुझे सोचने दीजिए।

परमानन्द : चुप रहेगा वह जो बेहोश है, मैं चुप नहीं रह सकता। मुझे इसका इलाज करना है।

पिता : जल्दी कीजिए वैद्य जी।

माँ : वैद्य जी, इसे ऐसी जड़ी सुँघाइये कि यह अभी खड़ा होकर बातें करने लगे।

परमानन्द : घर में देशी घी है?

माँ : गाय का है वैद्य जी।

परमानन्द : गाय का हो या बैल का, घी होना चाहिए।

प्रोफेसर : घी का क्या कीजियेगा?

परमानन्द : प्रोफेसर पांडुरंग की खोपड़ी पर मलूँगा, जिससे उसका दिमाग ठीक काम करे।

प्रोफेसर : देखिये, आपके लड़के को कोई बीमारी नहीं है। आप परमानन्द जी की बातों में मत आइये।

परमानन्द : इनकी बातों में मत आइये जिससे ये ऊटपटांग बातें करके इसे डबल बेहोश कर दें।

प्रोफेसर : कौन कहता है कि यह बेहोश है?

परमानन्द : सुनिये...

माँ : डॉक्टर जी! यह बेहोश नहीं है तो फिर बोलता क्यों नही?

प्रोफेसर : इसे आप एकान्त में लिटाइये।

पिता : जा।

प्रोफेसर : और इससे कहिये कि महसूस करे कि बेहोश नहीं है।

परमानन्द : और इस लड़के से यह भी कह दीजिए कि जब तक होश

में न आ जाये, तब तक इस प्रोफेसर की बातों पर ध्यान न दे।

माँ : वैद्य जी! डाक्टर जी! मेरे बच्चे का ख्याल कीजिए। इसे कुछ दवा-दारू दीजिए।

परमानन्द : यह लीजिये अमर भास्कर चूर्ण। होश में आने पर इसे गर्म पानी के साथ खिला दीजिए।

पिता : (खीझकर) पहले इसे होश में लाने की दवा तो दीजिए।

प्रोफेसर : इसे ऐसी-ऐसी कहानियाँ सुनाइये जिनमें बेहोश व्यक्तियों के होश में आने का वर्णन हो।

माँ : यह बेहोश है, आपको कहानियों की सूझ रही है।

प्रोफेसर : यह बेहोश नहीं है।

परमानन्द : तो क्या है?

प्रोफेसर : इसे भ्रम हो गया है कि यह बेहोश है। असल में यह होश में ही है।

माँ : आप कैसी बातें कर रहे हैं डॉक्टर जी। इन बातों से तो आप हमें भी बेहोश कर देंगे।

प्रोफेसर : इसी को स्नायुरोग कहते हैं। आप सब इससे कहिये कि यह होश में है।

परमानन्द : तुम्हारा सर होश में है। यह तो खूब बेहोश है।

प्रोफेसर : मैं कहता हूँ यह होश में है।

परमानन्द : इसकी नब्ज बता रही है कि यह बेहोश है।

प्रोफेसर : इसका चेहरा कह रहा है कि यह होश में है।

पिता : वैद्य जी, आप लड़िये मत।

माँ : मेरे बच्चे का ख्याल कीजिए।

परमानन्द : यह बेहोश है, इसका बचना मुश्किल है।

प्रोफेसर : यह होश में है, इसका मरना मुश्किल है।

परमानन्द : मैं इसे अमर भास्कर चूर्ण दूँगा, यह बेहोश है।

प्रोफेसर : बेहोश तुम हो, यह नहीं।

परमानन्द : होश में तुम हो, यह नहीं।

प्रोफेसर : इसे स्नायुरोग है।

परमानन्द : इसे सन्निपात है।

माँ : हाय राम! ये तो रोग पर रोग बढ़ाये जा रहे हैं।
(लड़का चद्दर फेंककर उठता है, सब चौंक पड़ते हैं।)

लड़का : सन्निपात है वैद्य परमानन्द को और स्नायुरोग है प्रोफेसर पांडुरंग को। मैं पूरी तरह होश में हूँ। न मुझे भ्रम है और न कुछ महसूस करने की जरूरत।

पिता : (आश्चर्य से) रमेश!

माँ : (दौड़कर उसे अंक में भरती हुई) मेरा लाल! तुझे क्या हो गया था मेरे लाड़ले!

रमेश : कुछ नहीं माँ, स्कूल में परसों एक नाटक होने जा रहा है। मुझे उसमें दो घंटे की बेहोशी का अभिनय करना है। उसीकी रिहर्सल कर रहा था।

माँ : (रमेश की पीठ पर दोनों हाथ मारकर) अरे, आग लगे तेरी रिहर्सल को। तू बीस-तीस मिनट और ऐसे ही रहता तो मेरी रिहर्सल हो जाती। चल तेरे लिए हलवा बनाती हूँ। तू भगवान के घर से लौटकर आया है।

(लड़का अपनी माँ के साथ भीतर प्रवेश करता है। पीछे-पीछे लड़के का पिता और बहन भी जाते हैं। वैद्य जी और प्रोफेसर खड़े होकर एक-दूसरे का कंधा पकड़े हुए उनकी ओर आश्चर्य से देखते हैं।)

प्रोफेसर : मैंने कहा था न कि यह लड़का होश में है।

परमानन्द : (उसी ओर देखते हुए) मैंने भी बचपन में एक बार बेहोशी की रिहर्सल की थी पर इस तरह होश में नहीं आया था।

(शीशी हाथ से गिरती है, परमानन्द लड़खड़ाकर गिरते हैं। पांडुरंग उन्हें बार-बार कमर में हाथ डालकर उठाते हैं।

प्रोफेसर :(उठाते हुए) आप गिर नहीं रहे हैं वैद्य जी। आप गिर नहीं रहे हैं। आप महसूस कीजिए कि नहीं गिर रहे हैं, महसूस कीजिए, कीजिए... कीजिए..।

(पटाक्षेप)

कठिन शब्दार्थ :

नब्ज = नाड़ी, रक्त वाहिनी शिराएँ; परहेज = हानिकारक एवं अहितकर वस्तुओं का सेवन न करना; बीहड़ = विषम, घना, ऊबड़-खाबड़; पैताने = वह दिशा जिधर पैर फैलाकर सोया जाए; अंक में भरना = गले लगाना, लिपटाना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) वैद्य परमानन्द बीमार स्त्री को कितने दिन तक खाना न खाने के लिए कहते हैं?

२) किसान किसकी बीमारी के इलाज के लिए वैद्य परमानन्द के पास पहुँचता है?

३) वैद्य परमानन्द हर बीमारी के लिए कौन-सी दवा देते हैं?

४) प्रोफेसर पांडुरंग बीमार स्त्री को कमजोरी दूर करने का क्या उपाय बताते हैं?

५) प्रोफेसर पांडुरंग किसान को किसका फोटो लाने के लिए कहते हैं?

६) प्रोफेसर पांडुरंग किसे यमराज का सगा भाई कहते हैं?

७) प्रोफेसर पांडुरंग लड़के को होश में लाने के लिए कैसी कहानियाँ सुनाने की सलाह देते हैं?

८) वैद्य परमानंद के अनुसार लड़के को क्या हुआ है?

९) बेहोशी का अभिनय किसने किया?

१०) बेहोशी का अभिनय करने वाले लड़के का नाम लिखिए।

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) वैद्य परमानंद बीमार स्त्री का इलाज किस प्रकार करते हैं?

२) वैद्य परमानंद गाय की बीमारी दूर करने का क्या उपाय बताते हैं?

३) प्रोफेसर पांडुरंग बीमार स्त्री का इलाज किस ढंग से करते हैं?

४) वैद्य और प्रोफेसर के आमने-सामने आने के बाद का दृश्य प्रस्तुत कीजिए।

५) रमेश ने बेहोशी का अभिनय क्यों किया?

६) वैद्य परमानंद का चरित्र-चित्रण कीजिए।

७) प्रोफेसर पांडुरंग का चरित्र-चित्रण कीजिए।

III) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे ?

१) परहेज ही तो असली इलाज है।
२) तुम भी खा लेना, गाय को भी खिला देना।
३) नहीं, कई बेटे अपने बाप से भी बड़े हो जाते हैं।
४) ठीक तो हो जायेगा, पर होश में नहीं आयेगा।
५) तुझे क्या हो गया था मेरे लाड़ले।

IV) ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए :

१) मरना तो कोई भी नहीं चाहता, लेकिन मैंने अपने रोगियों को अक्सर मरते देखा है।
२) हृदय का गुण ही धड़कना है।
३) मुझे डर है कि कहीं यहाँ बैठे-बैठे मेरा दिल धड़कना बंद न कर दे।
४) इसे भ्रम हो गया है कि यह बेहोश है।
५) सन्निपात है वैद्य परमानंद को और स्नायुरोग है प्रोफेसर पांडुरंग को।

V) अन्य लिंग रूप लिखिए :

हाथी, शेर, लड़का, गाय, पिता, अध्यापक, भगवान।

VI) अन्य वचन रूप लिखिए :

दुकान, घंटा, किताब, मूँछ, मुद्रा, सपना।

VII) विलोम शब्द लिखिए :

बेहोश, मोटा, मौत, शीघ्र, छोटा।

VIII) योग्यता विस्तार :

डॉ. रामकुमार वर्मा, काका हाथरसी, चिरंजीत, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि लेखकों की एकांकियों को पढ़िए।

* * * * * *

द्वितीय सोपान

पद्य भाग

अ) मध्ययुगीन काव्य

१. कबीरदास के दोहे

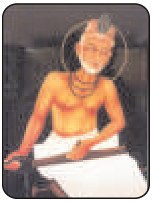

कवि परिचय :

संत काव्यधारा के सर्वाधिक प्रतिभाशाली एवं भक्तिकालीन निर्गुण भक्ति के प्रवर्तक कबीरदास का जन्म काशी में सन् १३९९ में हुआ। नीरू एवं नीमा नामक जुलाहा दम्पति ने आपका पालन-पोषण किया। कबीर अनपढ़ थे किन्तु वे आत्मज्ञानी थे। रामानन्द जी की शिक्षाओं से प्रभावित कबीरदास जी को कुछ लोग रामानन्द का ही शिष्य मानते हैं। एक दूसरा मत उन्हें सूफी-सिद्धान्त के प्रतिपादक शेख तकी का शिष्य मानता है। 'कहु कबीर मैं सो गुरु पाया, जाका नाम विवेक रे' के आधार पर कुछ लोगों का मत है कि कबीरदास जी किसी व्यक्ति के शिष्य नहीं थे। आपने हिन्दू-मुस्लिम एकता, भौतिक एवं आत्मिक परिष्कार, शुद्ध प्रेम, सच्चाई, सादगी आदि पर बल दिया। आपकी मृत्यु सन् १५१८ में मगहर नामक स्थान में हुई।

कबीरदास की रचनाएँ तीन भागों में विभक्त हैं — साखी, सबद और रमैनी जो 'बीजक' नामक ग्रंथ में संकलित हैं। कबीर की भाषा को प्राय: 'खिचड़ी भाषा' या 'सधुक्कड़ी भाषा' कहा जाता है जिसमें ब्रज, अवधी, राजस्थानी, अरबी, फारसी आदि के शब्द पाये जाते हैं। आप के प्रमुख शिष्य धर्मदास जी ने 'बीजक' का संग्रह किया था।

प्रस्तुत दोहों में कबीर ने गुरु-महिमा, शरीर की नश्वरता, परमात्मा की सर्वव्यापकता, भक्तिभावना एवं नीतिपरक उपदेश आदि गुणों पर प्रकाश डाला है।

सद्‌गुरु के परताप तैं मिटि गया सब दु:ख दर्द।
कह कबीर दुविधा मिटी, गुरु मिलिया रामानंद॥ १ ॥

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पायँ।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो बताय ॥ २ ॥

माटी कहै कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय।
इक दिन ऐसो होयगो, मैं रौंदुंगी तोय॥ ३ ॥

निन्दक नियरे राखिये, आँगन कुटी छबाय।
बिन पानी, साबुन बिना निर्मल करै सुभाय॥ ४ ॥

कस्तूरी कुंडलि बसै, मृग ढूँढे बन मांहि।
ऐसे घटि घटि राम हैं, दुनिया देखै नांहि॥ ५ ॥

बहुत दिनन की जोवती, बाट तुम्हारी राम।
जिव तरसै तुझ मिलन कूँ, मनि नाहीं विश्राम॥ ६ ॥

जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप।
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ छिमा तहँ आप॥ ७ ॥

काल करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होयगा, बहुरि करैगा कब्ब॥ ८ ॥

दु:ख में सुमिरन सब करै, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करै, तो दु:ख काहे होय॥ ९ ॥

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान॥ १० ॥

कठिन शब्दार्थ :

परताप = तेज, प्रभुत्व; तें = से; दुविधा = संशय, असमंजस; काके = किसके; बलिहारी = न्योछावर होना, कुरबान होना; दोऊ = दोनों; माटी = मिट्टी; रौंदना = पैरों से कुचलना, दबाना; मोये = मुझे; तोये = तुझे; नियरे = पास में; छबाय = बनाकर; सुभाय = स्वभाव; कुंडली = नाभि; मृग = हिरन; जोवती = राह देखना, इंतजार करना; जिव = प्राण; कूँ = के लिए; काल = मृत्यु; काल = कल; परलय = प्रलय, सर्वनाश; बहुरि = फिर; सुमिरन = स्मरण; काहे = क्यों; ग्यान = ज्ञान; म्यान = तलवार रखने का कोष।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) किसके प्रताप से सब दु:ख दर्द मिटते हैं?
२) कबीर के गुरु कौन थे?
३) कबीर किस पर बलिहारी होते हैं?
४) माटी कुम्हार से क्या कहती है?
५) किसको पास रखना चाहिए ?
६) कस्तूरी कहाँ बसती है?
७) कबीर किसकी राह देखते हैं?
८) क्रोध किसके समान है?
९) दु:ख में मनुष्य क्या करता है?
१०) कबीरदास के अनुसार किसकी जाति नहीं पूछनी चाहिए?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) गुरु की महिमा के बारे में कबीर क्या कहते हैं?
२) जीवन की नश्वरता के बारे में कबीर के क्या विचार हैं?
३) दया और धर्म के महत्व का वर्णन कीजिए।
४) समय के सदुपयोग के बारे में कबीर क्या कहते हैं?
५) कबीर के अनुसार ज्ञान का क्या महत्व है?

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) माटी कहै कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोय।
इक दिन ऐसो होयगो, मैं रौंदुँगी तोय॥

२) कस्तूरी कुंडलि बसै, मृग ढूँढे बन मांहि।
ऐसे घटि घटि राम हैं, दुनिया देखै नांहि॥

* * * * * *

२. तुलसीदास के दोहे

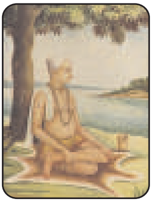

कवि परिचय :

महाकवि तुलसीदासजी का जन्म सन् १५३२ में हुआ था। आप रामभक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ रचनाकार माने जाते हैं। आपके पिता का नाम आत्माराम दुबे और माता का नाम हुलसी था। आपके गुरु 'बाबा नरहरिदास' थे। आपके आराध्य देव श्री रामचन्द्र थे और लोकमंगल भावना आपके काव्य का सिद्धांत रहा। आपने अन्यान्य काव्यशैलियों का प्रयोग करते हुए कई रचनाएँ हिन्दी साहित्य जगत को समर्पित कीं। आपकी मृत्यु सन् १६२३ में हुई। 'रामचरित मानस', 'विनय पत्रिका', 'कवितावली', 'गीतावली', 'जानकी मंगल' और 'दोहावली' आपकी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ मानी जाती हैं। आपका अवधी और ब्रजभाषा पर समान अधिकार था।

प्रस्तुत दोहों में रामभक्ति, नीति, सदाचार, विनय, दान एवं जीवन के समस्त पक्षों पर प्रकाश डाला गया है।

एक भरोसो, एक बल, एक आस, विश्वास।
स्वाति-सलिल रघुनाथ-जस, चातक तुलसीदास॥ १ ॥

जग ते रह छत्तीस है, राम चरन छः तीन।
तुलसी देखु विचार हिय, है यह मतौ प्रबीन॥ २ ॥

तुलसी संत सुअंब तरु, फूलि फलहिं पर-हेत।
इतते ये पाहन हनत, उतते वे फल देत॥ ३ ॥

तुलसी काया खेत है, मनसा भयौ किसान।
पाप पुण्य दोउ बीज हैं, बुवै सौ लुनै निदान॥ ४ ॥

मधुर बचन तें जात मिटै, उत्तम जन अभिमान।
तनक सीत जलसों मिटै, जैसे दूध उफान॥ ५ ॥

तुलसी एहि संसार में, भाँति भाँति के लोग।
सब सों हिल मिल बोलिए, नदी नाव संयोग॥ ६॥

काम, क्रोध, मद, लोभकी, जौ लौं मन में खान।
तौं लौ पंडित मूरखौ, तुलसी एक समान॥ ७॥

आवत ही हर्षे नहीं, नैनन नहीं सनेह।
तुलसी तहाँ न जाइए, कञ्चन बरसे मेह॥ ८॥

तुलसी कबहुँ न त्यागिए, अपने कुल की रीति।
लायक ही सो कीजिए, ब्याह, बैर अरु प्रीति॥ ९॥

बिना तेज के पुरुष की, अवशि अवज्ञा होय।
आगि बुझे ज्यों राखको, आपु छुवै सब कोय॥ १० ॥

कठिन शब्दार्थ :

स्वाति-सलिल = स्वाति वर्षा का जल; प्रबीन = प्रवीन;
पाहन = पत्थर; काया = शरीर; तनक = थोड़ा; धूरि = धूल, गर्द;
कञ्चन = सोना; मेह = मेघ, बादल; अवज्ञा = अनादर, अपमान।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) तुलसीदास किस पर विश्वास करते हैं?
२) तुलसीदास किसको आराध्य देव मानते हैं?
३) संत का स्वभाव कैसा होता है?
४) तुलसीदास काया और मन की उपमा किससे देते हैं?
५) मधुर वचन से क्या मिटता है?
६) पंडित और मूर्ख एक समान कब लगते हैं?
७) तुलसीदास कहाँ जाने के लिए मना करते हैं?
८) बिना तेज के पुरुष की अवस्था कैसी होती है?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) तुलसीदास की रामभक्ति का वर्णन कीजिए।

२) तुलसीदास के अनुसार संत के स्वभाव का वर्णन कीजिए।

३) तुलसीदास ने मधुर वचन न महत्व का कैसे वर्णन किया है?

४) तुलसीदास ने नदी और नाव का प्रयोग किस संदर्भ में किया है?

५) तुलसीदास कुल रीति के पालन करने के सम्बन्ध में क्या कहते हैं?

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) तुलसी काया खेत है, मनसा भयौ किसान।
पाप पुण्य दोउ बीज हैं, बुवै सौ लुनै निदान॥

२) काम, क्रोध, मद, लोभकी, जौ लौं मन में खान।
तौं लौ पंडित मूरखौ, तुलसी एक समान॥

* * * * * *

३. मीराबाई के पद

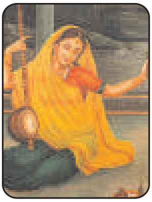

कवयित्री परिचय :

मध्यकालीन कृष्णभक्ति काव्यधारा की श्रेष्ठ कवयित्री मीराबाई का जन्म राजस्थान में मेड़ता के पास कुड़की (चौकड़ी) नामक स्थान में सन् १४९८ में हुआ था। मीराबाई जोधपुर के महाराजा राव रत्नसिंह की पुत्री और उदयपुर के राजकुमार भोजराज की पत्नी थीं। विवाह के थोड़े समय के बाद ही वे विधवा हो गयीं और बचपन की कृष्णभक्ति की प्रवृत्ति पुन: जाग उठी। आपकी मृत्यु सन् १५४६ में हुई। आपकी प्रमुख रचनाएँ 'गीत गोविंद की टीका', 'नरसी जी रो माहेरो', 'राग-गोविंद', 'सोरठ संग्रह', 'मीरा की पदावली', आदि हैं। मीराबाई की काव्य भाषा राजस्थानी, गुजराती और ब्रज मिश्रित है।

प्रस्तुत पदों में मीराबाई जी ने कृष्ण को अपना प्रियतम माना है। दर्द और भावों की अत्यंत तीव्रता मीराबाई के काव्य की विशेषता है। आपने अपने ऊपर होनेवाले अनाचारों का भी परिचय दिया है। मीराबाई की भक्ति दैन्य एवं माधुर्यभाव की है ।

१) म्हारां री गिरधर गोपाल दूसरां न कूयां।
दूसरां न कोवां साधां सकल लोक जूयां।
भाया छांड्या बंधां छांड्या सगां सूयां।
साधां संग बैठ बैठ लोक लाज खूंया।
भगत देख्यां राजी ह्यां जगत देख्यां रूयां।
असवां जल सींच सींच प्रेम बेल बूयां।
राणा विषरो प्याला भेज्यां पीय मगन हूयां।
अब तो बात फैल पड्या जाग्णं सब कूयां।
मीरां री लगन लग्यां होना होजू हूँया।

२) भज मन चरण कंवल अविनासी ॥टेक॥
जेताइ दीसां धरनि गगन मां ते ताईं उठि जासी।
तीरथ बरतां ग्यांन कथन्तां कहा लयां करवत कासी।
या देही रो गरब ना करना माटी मा मिल जासी।
यो संसार चहर री बाजी साँझ पड़्या उठ जासी।
कहा भयां था भगवां पहर्‌या, घर तज लयां संन्यासी।
जोगी होय जुगत ना जाना उलट जनम रां फाँसी।
अरज करूंस अबला स्याम तुम्हारी दासी।
मीरां रे प्रभु गिरधर नागर कांट्या म्हांरी गांसी॥

कठिन शब्दार्थ :

कूयाँ = कोई; जूयां = देख लिया है; भाया = भाई; साधां = साधु; रूयां = रोई; मगन = प्रसन्न; अविनासी = कभी न नाश होनेवाला; जेताई = जितना; दीसाँ = दिखाई देता है; तेताई = उतना ही, सब का सब; उठि जासी = नष्ट हो जायेगा; चहर री बाजी = चिड़ियों का खेल है; जुगत = युक्ति; गांसी = बन्धन।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) मीराबाई ने किसे अपना आराध्य माना?
२) मीराबाई ने किसके लिए सारा जग छोड़ा?
३) मीराबाई ने किसकी संगति में बैठकर लोक-लाज छोड़ा?
४) मीराबाई ने कृष्ण प्रेम को किससे सींचा?
५) विष का प्याला किसने भेजा था?
६) मीराबाई की लगन किसमें लगी है?
७) श्रीकृष्ण के चरणकमल कैसे हैं?
८) किसका घमंड नहीं करना चाहिए?
९) यह संसार किसका खेल है?
१०) मीराबाई किन बन्धनों को नष्ट करने के लिए प्रार्थना करती हैं?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) मीराबाई की कृष्णभक्ति का वर्णन कीजिए।

२) मीराबाई ने जीवन के सार तत्व को कैसे अपना लिया?

३) मीराबाई ने जीवन की नश्वरता के सम्बन्ध में क्या कहा है?

४) मीराबाई सांसारिक बन्धन से क्यों मुक्ति चाहती हैं?

III सुसंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) म्हारां री गिरधर गोपाल दूसरां न कूयां।
दूसरां न कोवां साधां सकल लोक जूयां।
भाया छांड्या बंधां छांड्या सगां सूयां।
साधां संग बैठ बैठ लोक लाज खूंया।
भगत देख्यां राजी ह्यां जगत देख्यां रूयां।

IV योग्यता विस्तार :

मीराबाई की तुलना कन्नड की कवयित्री अक्कमहादेवी के साथ कीजिए।

* * * * * *

४. शरण वचनामृत

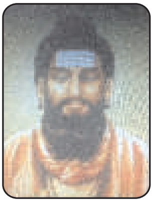 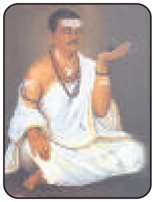

शरणों का परिचय :

बारहवीं शती के वचन साहित्य को कन्नड़ साहित्य के विकास में सुवर्णयुग माना जाता है।

महात्मा बसवेश्वर ने विश्वमानव धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए आध्यात्मिक और दार्शनिक योगी अल्लमप्रभु जी की अध्यक्षता में 'अनुभव मंटप' की स्थापना की। सभी मुमुक्षु, संतों को इस अनुभव मंटप ने आकर्षित किया।

(१) अल्लमप्रभु बारहवीं शती के शिवशरणों में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। आप अनुभव मंडप के प्रथम अध्यक्ष थे। 'हरिहर का प्रभुदेव रगळे' और चामरस का 'प्रभुलिंग लीले' तथा अन्य शिवशरणों के वचनों में आप का जीवन परिचय मिलता है। वैराग्य मूर्ति, अनुभावी अल्लमप्रभु कर्म, भक्ति एवं ज्ञान के प्रतिपादक थे।

(२) महात्मा बसवेश्वर जी का जन्म कर्नाटक के बिजापुर जिले के इंगळेश्वर-बागेवाड़ी अग्रहार में शैवोपासक ब्राह्मण दंपति मादरस, मादलाबिंका के यहाँ हुआ था। आपका जीवनकाल सन् ११०५ से ११६७ तक माना जाता है। 'कायक ही कैलास' (Work is Worship) के द्वारा सामाजिक क्रांति लाकर शारीरिक परिश्रम से जीवन यापन करने की पद्धति को महत्व दिया। ये विचार विश्वज्योति बसवेश्वर जी के सामाजिक सुधार के मूल मंत्र माने जाते हैं।

(३) अक्कमहादेवी जी अनुभव मंडप की महिला शिवशरणियों में सर्वश्रेष्ठ शिवशरणी मानी जाती हैं। आपने शिमोगा जिले के उड़तड़ी

ग्राम में शिवभक्त दम्पति निर्मल शेट्टी और माता सुमती की पुत्री के रूप में जन्म लिया। आपने उड़तड़ी विरक्तमठ के पट्टाध्यक्ष जी से शिवदीक्षा प्राप्त करके श्रीशैल के चन्नमल्लिाकार्जुन देव के कीर्तन-ध्यान में सदा मग्न रहती थीं। आपके वचनों का अंकित नाम श्री चन्नमल्लिकार्जुन देव है।

शरणों के अपने-अपने अनुभव ही 'वचन' के रूप में अभिव्यक्त हुए। उन्होंने जाति, कुल और लिंग के भेद को जड़ से मिटा दिया और ईश्वरार्पण भाव एवं निष्काम कर्म 'कायक' को प्रधानता दी। धार्मिक, सामाजिक, आध्यात्मिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में जो समग्र क्रांति हुई, वह कन्नड़ साहित्य क्षेत्र में अनोखी है। आध्यात्मिक योगी अल्लमप्रभु की माया, महात्मा बसवेश्वर के अनुभाव और शिवशरणी अक्कमहादेवी के लोकानुभव इन वचनों में मिलते हैं।

प्रस्तुत वचनों को बसव समिति, बेंगलूरु द्वारा संपादित पुस्तक से लिया गया है। हिन्दी भाषा के माध्यम से कर्नाटक के शिवशरणों एवं वचनकारों के तत्वों से छात्रों को अवगत कराना इसका प्रमुख उद्देश्य है।

१) कहते हैं कनक माया है, कनक माया नहीं
कहते हैं कामिनी माया है, कामिनी माया नहीं
कहते हैं माटी माया है, माटी माया नहीं
मन के आगे जो चाह है, वही माया है, गुहेश्वर।

आध्यात्मयोगी अल्लमप्रभु

२) ज्ञान से अज्ञान दूर होता है,
ज्योति से तमंध दूर होता है,
सत्य से असत्य दूर होता है,
पारस से लोहत्व दूर होता है,
आपके शरणों के अनुभाव से
मेरा भव छूट गया, कूडलसंगम देवा।

महात्मा बसवेश्वर

३) पर्वत पर बसाकर घर, जंगली जानवरों से क्या डरना?
सागर किनारे बसाकर घर लहरों से क्या डरना?
हाट में बसाकर घर, शोरगुल से क्या डरना?
चन्नमल्लिकार्जुन सुनो,
जगत में जन्म लेने पर, स्तुति-निंदा से क्या डरना?
मन में क्रोध न करके समचित्त रहना चाहिए।

शिवशरणी अक्कमहादेवी

कठिन शब्दार्थ :

माया = भ्रम, अज्ञान; कनक = सोना; कामिनी = स्त्री/सुंदरी; तमंध = अंधकार; पारस = स्पर्श मणि, एक कल्पित पत्थर, जिसका प्रयोग साहित्य में किया जाता है, लोहे से स्पर्श होने पर स्वर्ण में परिवर्तित हो जाता है।; भव = संसार; अनुभाव = शरणों ने इस शब्द का कई अर्थों में प्रयोग किया है :
(१) शिवज्ञानियों और परतत्व-परमात्मा की अनुभूति प्राप्त व्यक्तियों से की जानेवाली चर्चा (२) परमात्मा से साक्षात्कार करना, उसमें एक मेल होना। (३) परमात्मा का ज्ञान, निज तत्व का बोध (४) लिंगांग सामरस्य – शरणसति लिंगपति का मधुर मिलन; हाट = बाजार; समचित्त = वह जिसका मन सब अवस्था में समान रहता हो।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कनक, कामिनी और माटी को लोगों ने क्या कहा?
२) अल्लमप्रभु देव के आराध्य देव कौन थे?
३) बसवेश्वर के अनुसार ज्ञान से क्या दूर होता है?
४) ज्योति से क्या दूर होता है?
५) बसवेश्वर के आराध्य देव का नाम क्या है?
६) सत्य से क्या दूर होता है?
७) पारस से क्या दूर होता है?
८) पर्वत पर बसा कर घर किससे नहीं डरना चाहिए?

९) हाट में बसा कर घर किससे नहीं डरना चाहिए?

१०) जगत में जन्म लेने के बाद किससे नहीं डरना चाहिए ?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) अल्लमप्रभु देव ने माया के सम्बन्ध में क्या कहा है?

२) बसवेश्वर के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

३) अक्कमहादेवी के अनुसार भवसागर में कैसे रहना चाहिए?

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

ज्ञान से अज्ञान दूर होता है,
ज्योति से तमंध दूर होता है,
सत्य से असत्य दूर होता है,
पारस से लोहत्व दूर होता है,
आपके शरणों के अनुभाव से
मेरा भव छूट गया, कूडलसंगम देवा।

IV योग्यता विस्तार :

कन्नड़ के अन्य शिवशरणों के वचनों को समझने का प्रयास कीजिए।

* * * * * *

५. रसखान के सवैये

कवि परिचय :

रसखान का जन्म सन् १५५९ में दिल्ली के प्रतिष्ठित पठान परिवार में हुआ था। आप कृष्णभक्त मुस्लिम कवियों में सर्वोपरि माने जाते हैं। गोस्वामी विठ्ठलनाथ से दीक्षा लेने के कारण आपको वल्लभ संप्रदाय का अनुयायी माना जाता है। २५२ वैष्णवन् की वार्ता में भी आपका उल्लेख बड़े आदर से किया गया है। आपकी मृत्यु सन् १६२८ में हुई।

आपकी दो प्रमुख रचनाएँ उपलब्ध हैं – 'सुजान-रसखान' और 'प्रेमवाटिका'।

प्रस्तुत प्रथम पद में रसखान हर स्थिति में ब्रज में ही जन्म लेना चाहते हैं। आपने अपना सम्बन्ध उन्हीं से जोड़ने की इच्छा प्रकट की है जिनसे कृष्ण का सम्बन्ध रहा है। दूसरे पद में गोपी अपनी सखी से कहती है कि कृष्ण मेरा प्रिय है और उसे प्राप्त करने के लिए तेरे कहने पर सारा स्वाँग भर लूँगी।

मानुष हों, तो वही रसखानि बसौ ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पसु हौं, तो कहा बसु मेरो, चरौ नित नंद की धेनु मँझारन ॥
पाहन हौं, तो वही गिरि कौ, जो धरयौ कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हौं, बसेरो करौं मिलि कालिन्दी-कूल-कदम्ब की डारन ॥१ ॥

मोर-पखा सिर ऊपर राखिहौं, गुंज की माला गरें पहिरौंगी।
ओढ़ि पितम्बर लै लकुटी बन, गोधन ग्वारनि संग फिरौंगी ॥
भावतो वोहि मेरो 'रसखानि', सो तेरे कहें सब स्वांग करौंगी।
या मुरली मुरलीधर की, अधरान-धरी अधरा न धरौंगी ॥२ ॥

कठिन शब्दार्थ :

मानुष = मनुष्य; मँझारन = मध्य में; पाहन = पत्थर; छत्र = छाता; पुरन्दर = इन्द्र; धारन = गर्व नष्ट करने के लिए; कालिन्दी-कूल-कदम्ब = यमुना के तट स्थित कदम्ब वृक्ष; डारन = डालियों में; मोर-पखा = मोर-मुकुट; पितम्बर = पीला वस्त्र; अधरा = ओंठ।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) रसखान मनुष्य रूप में अगला जन्म कहाँ लेना चाहते हैं?
२) रसखान पशु रूप में जन्म लेने पर कहाँ रहना चाहते हैं?
३) रसखान पक्षी रूप में जन्म लेने पर किस डाली पर बसना चाहते हैं?
४) गोपी सिर पर क्या धारण करना चाहती है?
५) गोपी कृष्ण की मुरली कहाँ नहीं रखना चाहती?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) रसखान ब्रजभूमि में क्यों जन्म लेना चाहते हैं?
२) गोपी क्या-क्या स्वांग भरती है?
३) गोपियों का कृष्ण के प्रति अनन्य प्रेम कैसा है?

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

मानुष हों, तो वही रसखानि बसौ ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पसु हौं, तो कहा बसु मेरो, चरौ नित नंद की धेनु मँझारन ।।
पाहन हौं, तो वही गिरि कौ, जो धरयौ कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हौं, बसेरो करौं मिलि कालिन्दी-कूल-कदम्ब की डारन ।।

* * * * * *

आ) आधुनिक कविता

१. कुटिया में राजभवन

मैथिलीशरण गुप्त

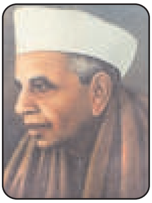

कवि परिचय :

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के प्रख्यात रचनाकार गुप्त जी का जन्म १८८६ ई. में चिरगाँव, झाँसी (उत्तर प्रदेश) में हुआ। आप मूलत: राष्ट्रीय भावना के पोषक कवि माने जाते हैं। आपने अपनी रचनाओं के माध्यम से जनजागरण का प्रयास किया। अतीत की गरिमा तथा वैभव को प्रेरणा के रूप में ग्रहण करते हुए आपने भारतवासियों को वर्तमान दुरावस्था से उभरने के लिए प्रोत्साहित किया। आपकी मृत्यु १९६४ ई. में हुई।

'साकेत' और 'जय भारत', आपके दो प्रसिद्ध महाकाव्य हैं। 'पंचवटी', 'झँकार', 'यशोधरा', 'द्वापर', 'विष्णु-प्रिया', 'भारत-भारती' आदि अन्य रचनाएँ हैं।

प्रस्तुत पद्यभाग 'साकेत' महाकाव्य से लिया गया है जो आधुनिक रामकाव्य परम्परा की अनुपम कड़ी मानी जाती है। खड़ीबोली को काव्यभाषा बनाने तथा उसकी अभिव्यक्ति क्षमता को बढ़ाने में गुप्त जी की उल्लेखनीय भूमिका रही है।

सीताजी वन में राज सुख भोगती हैं। श्री रामचंद्रजी स्वयं आपके साथ-साथ रहते हैं और देवर लक्ष्मण मंत्री के रूप में कार्य कर रहे हैं। यहाँ धन और राज वैभव का कोई मूल्य नहीं।

मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया
सम्राट स्वयं प्राणेश, सचिव देवर हैं,
देते आ कर अशीष हमें मुनिवर हैं,
धन तुच्छ यहाँ, यद्यपि असंख्य आकर हैं।
पानी पीते मृग, सिंह एक तट पर हैं।

सीता रानी को यहाँ लाभ ही लाया।
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया।
औरों के हाथों यहाँ नहीं पलती हूँ,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ,
श्रमवारि-बिन्दु फल स्वास्थ्य-शुक्ति फलती हूँ
अपने अंचल से व्यजन आप झलती हूँ।

तनु-लता-सफलता-स्वादु आज ही आया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया।
किसलय-कर स्वागत हेतु हिला करते हैं
मृदु मनोभाव-सम सुमन खिला करते हैं
डाली-डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं
तृण-तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।

निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया।
कहता है कौन कि भाग्य ठगा है मेरा?
वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा।
कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,
वन में ही तो गार्हस्थ्य जगा है मेरा।

वह वधू जानकी बनी आज यह जाया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया।
फल-फूलों से हैं लदी डालियाँ मेरी,
वे हरी पत्तलें-भरी थालियाँ मेरी,
मुनि बालायें हैं यहाँ आलियाँ मेरी।
तटीनी की लहरें और तालियाँ मेरी।

क्रीडा-सामग्री बनी स्वयं निज छाया।
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया।

कठिन शब्दार्थ :

प्राणेश = पति; सचिव = मंत्री; अशीष = आशीर्वाद; भाया = अच्छा लगा; श्रमवारि बिन्दु = परिश्रम के बल निकला पानी, पसीना; किसलय-कर = कोमल हाथ; मुक्ता = मोती; निधि = खज़ाना; गार्हस्थ्य = गृहस्थ; आलियाँ = सखियाँ।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) सीता जी का मन कहाँ भाया?
२) सीता जी के प्राणेश कौन थे?
३) सीता जी कुटिया को क्या समझती हैं?
४) नवीन फल नित्य कहाँ मिला करते हैं?
५) सीता की गृहस्थी कहाँ जगी ?
६) वधू बनकर कौन आयी है?
७) सीता की सखियाँ कौन हैं?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) सीता जी अपनी कुटिया में कैसे परिश्रम करती थीं?
२) सीता जी प्रकृति-सौंदर्य के बारे में क्या कहती हैं?
३) सीता जी कुटिया में कैसे सुखी हैं?
४) 'कुटिया में राजभवन' कविता का आशय संक्षेप में लिखिए।

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) औरों के हाथों यहाँ नहीं पलती हूँ,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ,
श्रमवारि-बिन्दु फल स्वास्थ्य-शुक्ति फलती हूँ
अपने अंचल से व्यजन आप झलती हूँ।

२) कहता है कौन कि भाग्य ठगा है मेरा?
वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा।
कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,
वन में ही तो गार्हस्थ्य जगा है मेरा।

* * * * * *

२. तोड़ती पत्थर

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

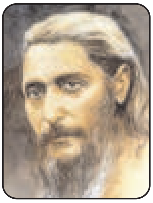

कवि परिचय :

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जी का जन्म १८९६ ई. में मेदिनीपुर, महिषादल नगर में हुआ था। अल्पायु में आपकी माता की मृत्यु हुई। पत्नी तथा पिता के असामयिक निधन, गरीबी एवं तिरस्कार से जूझते हुए 'निराला' का व्यक्तित्व जुझारू तथा संघर्षशील हो गया। आपका निधन १९६१ई. में हुआ।

आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं — 'परिमल', 'गीतिका', 'अनामिका', 'अर्चना', 'आराधना', 'कुकुरमुत्ता', 'राम की शक्तिपूजा', 'तुलसीदास', आदि।

निराला के काव्य में कथ्य और शिल्प की दृष्टि से वैविध्यता दिखाई देती है। आपके काव्य में मानवतावाद, भक्ति, श्रृंगार और प्रकृति से संबंधित भावों का चित्रण हुआ है। 'निराला'जी की भाषा में ओज है, प्रवाह है, कसक है और गरिमा है।

प्रस्तुत कविता में सड़क पर पत्थर तोड़नेवाली एक साधन-हीन और असहाय नारी का अति सजीव चित्र अंकित हुआ है। गर्मियों की तपती दुपहरी में अपने घर से दूर काम करनेवाली उस नारी के प्रति कवि के मन में अपार सहानुभूति है। एक ओर तो धनी वर्ग ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं में विश्राम कर रहा है और दूसरी ओर मध्याह्न के विषम ताप में यह प्रताड़ित युवती परिश्रम-साध्य कार्य में व्यस्त है। अर्थ-वैषम्य की ओर ध्यान आकृष्ट करानेवाली यह प्रगतिवादी रचना निराला के काव्य-संग्रह 'अनामिका' से संकलित की गई है।

वह तोड़ती पत्थर।
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर।

कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय कर्म रत मन।

गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार –
सामने तरु-मालिका अट्टालिका, प्राकार।

चढ़ रही थी धूप
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप।
उठी झुलसाती हुई लू
रुई ज्यों जलती हुई भू
गर्द चिनगी छा गई,
प्राय: हुई दुपहर
वह तोड़ती पत्थर।

देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार।
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोई नहीं।

सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार।
एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा —
'मैं तोड़ती पत्थर।'

कठिन शब्दार्थ :

अट्टालिका = अटारी, महल, पक्की इमारत; भवन = महल; झुलसाती हुई लू = अत्यंत गरम हवा; छिन्न = कटा हुआ; सीकर = पसीना; प्रहार = आघात, वार।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) नारी कहाँ पत्थर तोड़ती थी?
२) पत्थर तोड़ती नारी के तन का रंग कैसा था?
३) नारी बार-बार क्या करती थी?
४) नारी कब पत्थर तोड़ रही थी?
५) नारी के माथे से क्या टपक रहा था?
६) 'तोड़ती पत्थर' कविता के कवि कौन हैं?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़नेवाली स्त्री का चित्रण कीजिए।
२) किन परिस्थितियों में नारी पत्थर तोड़ रही थी?
३) 'तोड़ती पत्थर' कविता का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) चढ़ रही थी धूप
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूप ।
उठी झुलसाती हुई लू

२) देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार।
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोई नहीं।

* * * * * *

३. उल्लास

सुभद्राकुमारी चौहान

कवयित्री परिचय :

सुभद्राकुमारी चौहान का जन्म १९०४ ई. में प्रयाग के वैश्य-क्षत्रिय कुल में हुआ था। आप आधुनिक युग की राष्ट्रीय धारा की कवयित्री हैं। महात्मा गांधी जी के राष्ट्रीय आन्दोलन में आपने सक्रिय रूप से भाग लिया था। आपकी कविताएँ देशभक्ति का सिंहनाद करती चलती हैं। 'झाँसी की रानी' और 'वीरों का कैसा हो वसंत' आपकी बहुचर्चित कविताएँ मानी जाती हैं। आत्मत्याग, आत्मरक्षा, स्वतंत्रता प्राप्ति, आपके काव्य का मुख्य विषय है। १९४८ ई. में मोटर दुर्घटना में आपकी मृत्यु हुई।

आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं – **काव्य :** 'मुकुल', 'त्रिधारा'; **कहानी संग्रह :** 'बिखरे मोती', 'सीधे-साधे चित्र', 'उन्मादिनी'।

प्रस्तुत कविता में कवयित्री जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण रखती हैं। आपकी भाषा सरल एवं प्रचलित खड़ीबोली है। मानव हृदय में उठनेवाले भावों को आपने अपनी सहज भाषा में अभिव्यक्त किया है। जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने का संदेश इस कविता के माध्यम से प्राप्त होता है। आपकी काव्याभिव्यक्ति शैली अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व रखती है।

शैशव के सुन्दर प्रभात का
मैंने नव विकास देखा।
यौवन की मादक लाली में,
यौवन का हुलास देखा।।

जग-झंझा-झकोर में मैंने,
आशा लतिका का विकास देखा।
आकांक्षा, उत्साह प्रेम का
क्रम-क्रम से प्रकाश देखा।।

जीवन में न निराशा मुझको,
कभी रुलाने को आई।
'जग झूठा है' यह विरक्ति भी,
नहीं सिखाने को आई।।

अरि-दल की पहिचान कराने,
नहीं घृणा आने पाई।
नहीं अशान्ति हृदय तक अपनी,
भीषणता लाने पाई।।

मैंने सदा किया है सबसे,
मधुर प्रेम का ही व्यवहार।
विनिमय में पाया सदैव ही,
कोमल अन्स्ततल का प्यार।।

मैं हूँ प्रेममयी, जग दिखता
मुझे प्रेम का पारावार।
भरा प्रेम से मेरा जीवन,
लुटा रहा है निर्मल प्यार।।

मैं न कभी रोई जीवन में
रोता दिखा न यह संसार।
मृदुल प्रेम के ही गिरते हैं,
आँखों से आँसू दो चार।।

कठिन शब्दार्थ :
शैशव = बचपन; प्रभात = प्रात:काल, सवेरा; मादक = नशीला; हुलास = उल्लास; आकांक्षा = चाह, इच्छा; विरक्ति = वैराग; घृणा = नफरत; भीषणता = भयानक; पारावार = समुद्र; मृदुल = कोमल।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कवयित्री ने शैशव प्रभात में क्या देखा?
२) कवयित्री ने यौवन के नशे में क्या देखा?
३) कवयित्री ने किसका विकास देखा?
४) कवयित्री ने किसका प्रकाश देखा?
५) कवयित्री को किसने कभी नहीं रूलाया?
६) कवयित्री ने हमेशा किस प्रकार का व्यवहार किया?
७) कवयित्री को प्रेम का क्या दिखाई देता है?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) 'उल्लास' कविता के आधार पर मानव हृदय में उठनेवाले भावों को अपने शब्दों में लिखिए।
२) कवयित्री ने जीवन के सम्बन्ध में क्या कहा है?
३) 'उल्लास' कविता का आशय संक्षेप में लिखिए।

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) जीवन में न निराशा मुझको,
कभी रुलाने को आई।
'जग झूठा है' यह विरक्ति भी,
नहीं सिखाने को आई॥

२) मैं हूँ प्रेममयी, जग दिखता
मुझे प्रेम का पारावार।
भरा प्रेम से मेरा जीवन,
लुटा रहा है निर्मल प्यार॥

* * * * * *

४. तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए

डॉ. हरिवंशराय 'बच्चन'

कवि परिचय :

हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध गीतकार और हालावाद के प्रवर्तक माने जाने वाले 'बच्चन' जी का जन्म १९०७ ई. में प्रयाग के कटरा मुहल्ले में हुआ था। आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। कुछ वर्ष आपने भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिन्दी भाषा विशेषज्ञ के रूप में काम किया। आप राज्य-सभा सदस्य भी रहे। आपकी मृत्यु २००३ ई. में हुई।

आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं – 'मधुशाला', 'मधुबाला', 'मधु कलश', 'निशा निमंत्रण', 'प्रणय पत्रिका', 'हलाहल', 'बंगाल का अकाल' आदि।

प्रस्तुत कविता में अपूर्व संगीत है। वह संगीत प्राणों के तार-तार को हिला देता है। मधुर स्वप्न और मादक कल्पनाओं के साथ-साथ मोहक शब्दावली का प्रयोग आपकी निजी विशेषता है। समाज के प्रति मनुष्य का दायित्व एवं विश्व के प्रति उदारवादी दृष्टिकोण कवि की जिम्मेदारी के साथ-साथ पाठकों के प्रति कृतज्ञता का भाव इस कविता का केन्द्रीय विषय है। आपकी कविताओं पर उमर खय्याम की रूबाईयों का प्रभाव दिखाई देता है।

तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए।
मेरे वर्ण-वर्ण विशृंखल,
चरण-चरण भरमाये,
गूंज-गूंजकर मिटनेवाले
मैंने गीत बनाये।

कूक हो गयी हूक गगन की
कोकिल के कंठों पर,
तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए।

जब-जब जग ने कर फैलाये
मैंने कोष लुटाया,
रंक हुआ मैं निज निधि खोकर,
जगती ने क्या पाया?

भेंट न जिसमें कुछ खोऊँ
पर तुम सब कुछ पाओ,
तुम ले लो, मेरा दान अमर हो जाए,
तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए।

सुन्दर और असुन्दर जग में
मैंने क्या न सराहा,
इतनी ममतामय दुनिया में
मैं केवल अनचाहा !

देखूँ अब किसकी रुकती है
आ मुझपर अभिलाषा,
तुम रख लो मेरा मान अमर हो जाए,
तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए।

दु:ख से जीवन बीता फिर भी
शेष अभी कुछ रहता,
जीवन की अंतिम घड़ियों में
भी तुम से यह कहता,

सुख की एक साँस पर होता
है अमरत्व निछावर,
तुम छू दो मेरा प्राण अमर हो जाए !
तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए !

कठिन शब्दार्थ :

विश्रृंखल = बन्धनहीन, स्वतंत्र, मुक्त; कूक = लम्बी गहरी आवाज़ कोकिला की आवाज; हूक = दर्द की आवाज़, पीडा; कोष = निधि, खज़ाना; रंक = गरीब; निछावर = समर्पित।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) बच्चन जी ने किस प्रकार के गीत बनाए?
२) कवि बच्चन जी ने क्या लुटाया?
३) कवि बच्चन क्या खोकर रंक हुए?
४) दुनिया कैसी है?
५) कवि बच्चन का जीवन कैसे बीता?
६) सुख की एक साँस पर क्या निछावर है?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) बच्चन जी ने जग में क्या लुटाया और क्यों?
२) बच्चन जी पाठकों को क्या-क्या भेंट देते हैं?
३) बच्चन जी ने संसार और जीवन के संबंध में क्या कहा है?
४) बच्चन जी की कविता का मूल भाव लिखिए ।

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) जब-जब जग ने कर फैलाये
मैंने कोष लुटाया,
रंक हुआ मैं निज निधि खोकर,
जगती ने क्या पाया?

२) दु:ख से जीवन बीता फिर भी
शेष अभी कुछ रहता,
जीवन की अंतिम घड़ियों में
भी तुम से यह कहता।

* * * * * *

५. प्रतिभा का मूल बिन्दु

डॉ. प्रभाकर माचवे

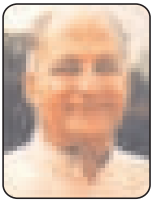

कवि परिचय :

प्रभाकर माचवे जी का जन्म २६ दिसम्बर १९१७ में मध्यप्रदेश के एक मध्य वित्त महाराष्ट्रीयन कुल में हुआ। आप १९३८ ई. में माधव कालेज, उज्जैन में दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक नियुक्त हुए जहाँ १९४८ ई. तक रहे। आपका लेखन बहुत विस्तृत और बहुआयामी है। आपने हिन्दी, मराठी, अंग्रेजी तीनों भाषाओं में लेखनी चलाई। आप कवि के अलावा, शोधकर्ता, अनुवादक, संपादक, कहानीकार, उपन्यासकार, समीक्षक, निबंधकार भी हैं। 'तार सप्तक' के सात कवियों में माचवे भी एक हैं।

आपकी काव्य रचनाएँ हैं – 'स्वप्नभंग', 'अनुक्षण', 'तेल की पकौड़ियाँ', 'मेपल' आदि।

प्रस्तुत कविता में प्रतिभा के मूल की सैद्धांतिक समीक्षा की गयी है जिसमें आत्यंतिक कल्पनाओं का, अनुमान का प्रयोग न करके कवि जीवन के निरंतर संघर्ष पथ को अपनाता है। प्रतिभा सतत प्रयास एवं परिश्रम की जननी मानी जाती है।

''कहाँ जन्म है तेरा?'' मैंने पूछा जब प्रतिभा से,
''महलों में? गुलगुले गलीचों पर? गुलाब की क्यारी में?
वृद्धों की चिंता में? बच्चों की दंतहीन किलकारी में?
बोलो, तुम रहती कहाँ? जानने को हम सब हैं कितने प्यासे!''

कवि बोला — ''वह तो दिवास्वप्न की रानी है,''
शिल्पी ने मिट्टी के लौंदे की ओर सहज संकेत किया;
ओ' चित्रकार ने फलक, वर्ण, तूली को सहज समेट लिया,
गायिका कह गई — ''क्या तूने दिव्य-स्वर की मदिरा पी है?''

क्या निरी कल्पना प्रतिभा है, क्या निरी सूझ की तितिल-परी?
क्या प्रतिभा केवल नवनवीन विस्मय — उपजाऊ ऊहा है?
प्रतिभा क्या है सन्ध्या-भाषा? सिद्धों का पाहुड़-दूहा है?
प्रतिभा अनुभूति-रसायन है? गहरे 'जीवन' की चल-शफरी?

प्रतिभा बोली — ''यातना, निरन्तर कष्ट-सहन की ताकत में
मैं बसती हूँ संघर्ष-निरत साधक में, असिधारा-व्रत में।''

कठिन शब्दार्थ :

दिवास्वप्न = मनोराज्य, आत्यंतिक कल्पना; ऊहा = अनुमान, तर्क-युक्ति; संध्या-भाषा = तांत्रिकों, बौध्दों और सिद्धों के द्वारा प्रयुक्त प्रतीकात्मक भाषा-शैली जिसमें अलौकिक रहस्य और गूढ़ अभिप्राय की मंत्र रूप में अभिव्यक्ति की जाती थी।; जीवन = पानी, जिन्दगी; चल-शफरी = चंचल मछली; असिधारा-व्रत = तलवार की धार पर खड़े होने जैसा कठिन व्रत (कर्म या प्रतिज्ञा)।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कवि प्रतिभा से क्या पूछते हैं?
२) कवि ने दिवास्वप्न की रानी किसे कहा है?
३) शिल्पी ने किसकी ओर संकेत किया है?
४) गायिका क्या कह गयी?
५) प्रतिभा कहाँ बसती है?
६) 'प्रतिभा का मूल बिन्दु' कविता के कवि का नाम लिखिए।

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) कवि प्रतिभा का मूल कहाँ-कहाँ ढूँढ़ते हैं?
२) कवि माचवे जी के अनुसार प्रतिभा के लक्षण लिखिए।
३) 'प्रतिभा का मूल बिन्दु'कविता का भाव संक्षेप में लिखिए।

* * * * * *

६. तुम आओ मन के मुग्ध मीत

डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति

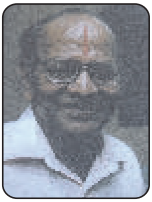

कवि परिचय :

सरल जीवन के परिचायक सरगु कृष्णमूर्ति जी का जन्म कर्नाटक राज्य के बल्लारी नगर में स्थित कौल बाजार में १९३६ ई. में हुआ। आप कन्नड़, तेलगु, हिन्दी तथा अंग्रेजी में समान अधिकार से लिखने की दक्षता रखते थे। आप बेंगलूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में आचार्य तथा विभागाध्यक्ष रहे। आपकी कई पुस्तकों पर कर्नाटक सरकार, उत्तर प्रदेश सरकार तथा भारत सरकार से पुरस्कार मिला। आपका निधन २८ अक्टूबर २०१२ को बेंगलूरू में हुआ।

आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं – 'मधु स्वप्न', 'ज्वाला केतन' (काव्य संकलन), 'श्री कृष्ण-गांधी चरित' (प्रबन्ध काव्य), 'तुलसी रामायण और पंप रामायण' (शोध प्रबंध) आदि।

प्रस्तुत कविता में कवि के अनुसार अपने मधुर मीत के आने से मन की मधुर प्रीति फिर से मुस्कुरायेगी और पाप भी पुण्य हो जायेगा।

आत्मा के सहचर किरण मित्र जीवन मरण के साथी हैं। विरह का पुरस्कार मिलन है। इस कविता में मुग्ध मित्र से बिछुड़कर तड़पती हुई व्याकुल आत्मा की दहकती हुई चाह है, गूँजती हुई आह है और कसकती हुई कराह है। इसमें छायावाद, रहस्यवाद एवं प्रतीकवाद का त्रिवेणी संगम है।

मैं तमस्तों में भीत-भीत-झट आओ मेरे किरणमीत।
जिससे कि टिमटिमाता चिराग-फिर जले सूर्य चंद्रमा रीत।

तुम आओ मन के मधुर मीत-मुसकाये मेरी मधुर प्रीत
जिससे कि दोपहर बने प्रात-चिर पाप बने प्रांजल पुनीत।

जन्मों के जीवन मृत्यु मीत! मेरी हारों की मधुर जीत!
झुक रहा तुम्हारे स्वागत में मन का मन शिर का शिर विनीत।

तुम आओ मम कल्याण राग झन झना उठे मेरा अतीत
किल किला उठे कंटक परीत-अंगार हृदय मंदार गीत।

कितने दिन कितनी संध्याएँ कितने युग यों ही गए बीत
मैं जोह पथ वर्षा कामी-तरु-सा हूँ कब से शीत भीत।

झन झनन झनन झंझा झकोर-से झंकृत यह जीवन निशीथ
सब क्षणिक, वणिक वत् स्वार्थ मग्न तुम एक मात्र निस्वार्थ मीत।

दुख दैन्य अश्रु दारिद्र्य धार-कर गए मुझे ही मनो-नीत
तूफान और इस आँधी में सुनवाने रज का जीव गीत।

टेरता रहा तुमको कब से मैं क्रीत क्रीत और प्रीत प्रीत
तेज गगन धरा पर धरी चरण हे हे अभीत ऐ ऐ सुभीत।

तुम नहीं सोच सकते कंपित-गुंफित है कितनी करुण प्रीत।
हे निराकार साकार सगुन-निर्गुण स्वरूप हे गुण परीत।

तुम देवलोक आनंद गीत-आशा अखण्ड शोभा परीत
मैं स्नेह विकल झंकृत प्रगीत-तुम आओ मन के मुग्ध मीत॥

कठिन शब्दार्थ :

तमस्तों = अंधकार; मीत = मित्र; प्रांजल = सरल, सच्चा, सीधा; अतीत = गत, बीता हुआ; कंटक = विघ्न; परीत =परे; मंदार = आक, स्वर्ग का एक देव वृक्ष; निशीथ = अर्ध रात्रि; वणिका = बनिया, व्यापारी; टेरना = पुकारना; क्रीत = खरीदा हुआ; प्रगीत = गीत।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कवि अपने मित्र से क्या कहता है?

२) कवि अपने मित्र का स्वागत कैसे करता है?

३) कवि किससे बिछुड़कर रह गया है?

४) 'तुम आओ मन के मुग्ध मीत' कविता के कवि कौन हैं?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) अपने मुग्ध मित्र से बिछुड़कर कवि की आत्मा कैसे तड़प रही है?

२) कवि अपने मित्र को किन-किन शब्दों में पुकारता है?

३) कवि अपने मित्र की जुदाई से कैसे व्याकुल हो रहा है?

४) कवि की दु:खी आत्मा का परिचय दीजिए।

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

झन झनन झनन झंझा झकोर-से झंकृत यह जीवन निशीथ
सब क्षणिक, वणिक वत् स्वार्थ मग्न तुम एक मात्र निस्वार्थ मीत।

दुख दैन्य अश्रु दारिद्र्य धार-कर गए मुझे ही मनो-नीत
तूफान और इस आँधी में सुनवाने रज का जीव गीत।

* * * * * *

७. मत घबराना

डॉ. रामनिवास 'मानव'

कवि परिचय :

बहुमुखी प्रतिभा के धनी रामनिवास 'मानव' जी का जन्म २ जुलाई १९५४ ई. को तिगरा जिला महेन्द्रगढ़ (हरियाणा) में हुआ। आपकी शिक्षा एम.ए. (हिन्दी), पीएच.डी. एवं डी.लिट्. तक हुई है। आपको स्नातक तथा स्नातकोत्तर कक्षाओं को पढ़ाने का तीन दशक से अधिक अनुभव है। आपको अनेक प्रतिष्ठित सम्मान, पुरस्कार तथा मानद उपाधियों से सम्मानित किया गया है।

आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं — 'धारा-पथ', 'रश्मी-रथ', 'साँझी है रोशनी', 'बोलो मेरे राम', 'सहमी सहमी आग', 'हम सब हिन्दुस्तानी' आदि।

प्रस्तुत कविता में कवि नवयुवकों को यह संदेश देते हैं कि जीवन के पथ पर सदा आगे बढ़ते रहना चाहिए। साथ कोई हो न हो, प्रकृति माता सदा हमारे साथ रहती है। यहाँ प्रकृति को प्रेरणा के रूप में चित्रित किया गया है।

बाधाओं से मत घबराना।
कदम साधकर बढ़ते जाना।

कोई साथ न रहने पर भी
चन्दा-तारे साथ रहेंगे।
दर्द तुम्हारा बाँटेंगे वे,
तुमसे अपनी बात कहेंगे।
सच्चा साथी जान उन्हें तुम
अपनी सारी व्यथा सुनाना।

वीराने में नदियाँ-निर्झर,
जैसे हरदम हँसते–गाते।
आप अकेले अपने साथी,
सदा अकेले बढ़ते जाते।
सच्चा साथी जान उन्हें तुम
जीवन–पथ पर कदम बढ़ाना।

पथ क्या वह बाधाएँ जिसमें
बार–बार टकराती ना हों।
और तितलियाँ रोक रास्ता
राही को ललचाती ना हों।
पर तुम डरकर या ललचाकर
बीच राह में मत रुक जाना।

मंजिल सदा उसी को मिलती
धीर–वीर जो बढ़ता जाता।
काँटों को भी फूल समझता,
विपदाओं से हाथ मिलाता।
कायर तो घबराते वे ही,
वीर न करते कभी बहाना।

कठिन शब्दार्थ :

बाधाएँ= रुकावट, विघ्न; व्यथा = दर्द, दुःख; ललचाना = लोभग्रस्त होना; विपदा = विपत्ति; कायर = डरपोक, बुज़दिल।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) कवि किस प्रकार आगे बढ़ने के लिए कहते हैं?

२) कवि किसके साथ होने की बात कहते हैं?

३) कवि किसे अपनी व्यथा सुनाने के लिए कहते हैं?

४) पथ पर बार-बार क्या टकराती है?
५) कवि बीच राह में कैसे न रुकने को कहते हैं?
६) वीर काँटों को क्या समझता है?
७) वीर किससे हाथ मिलाता है?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) 'मत घबराना' कविता में प्रकृति को प्रेरणास्रोत क्यों कहा गया है?
२) कवि ने जीवन की किन विशेषताओं का उल्लेख किया है?
३) मंजिल किन्हें मिलती है? अपने शब्दों में लिखिए।
४) 'मत घबराना' कविता का संदेश अपने शब्दों में लिखिए।

III ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

मंजिल सदा उसी को मिलती
धीर–वीर जो बढ़ता जाता।
काँटों को भी फूल समझता,
विपदाओं से हाथ मिलाता।
कायर तो घबराते वे ही,
वीर न करते कभी बहाना।

* * * * * *

८. अभिनंदनीय नारी

डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल

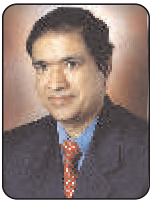

कवि परिचय :

हिन्दी साहित्य के आधुनिक कवि जयन्ती प्रसाद नौटियाल का जन्म उत्तरांचल राज्य के देहरादून में ३ मार्च १९५६ को हुआ। आपने एम.ए. (हिन्दी तथा अंग्रेजी), एलएल.बी., एम.बी.ए., पीएच.डी. (भाषा-विज्ञान) तथा डी.लिट्.की उपाधियाँ प्राप्त की हैं। डॉ.नौटियाल मूलत: तकनीकी साहित्य के लेखक हैं। आपके लेख विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। आप संप्रति भारत सरकार के अग्रणी बैंक कार्पोरेशन बैंक में सहायक महाप्रबंधक पद पर कार्यरत हैं।

प्रस्तुत कविता को 'यथार्थ' काव्य-संग्रह से लिया गया है। इसमें भारतीय नारी की सहनशीलता, कोमलता, शक्ति और सेवा-भाव को चित्रित किया गया है।

इस धरा पर मृदुल रस धार-सी तुम सुख का सार हो नारी
तुम वंदनीय हो, अभिनंदनीय हो, सादर नमन तुम्हें हे नारी... !
धरा सी सहनशील, जल-सी निर्मल, फूलों सी कोमल तुम नारी
जीवन की गति, जीवन की रति, जीवन की मति हो तुम नारी... !

बचपन में चहक, चिरैय्या सी तुम इठलाती
माता-पिता के मन में आनंद हिलोर उठाती।
चलती ठुमक-ठुमक, बजती पैजनियाँ प्यारी
बाबुल के अंगना में तुलसी बिरवा सी न्यारी ।।

शिशु के साथ शिशु बन जाती और प्रिय के संग बनी प्रिया
क्षमा, करुणा तुम में, स्नेह और सेवा से धन्य धरा को किया
किन्तु स्वार्थी जग ने कब किसी के उपकारों को याद किया?
हे नारी! तेरी करुणा, ममता, ऋजुता का क्या प्रतिदान तुम्हें दिया?

नारी अबला नहीं बल्कि यह नारी रणचंडी भी है,
कृत्या है यह दुर्दम, दैत्य नाशिनी दुर्गा माँ भी है।
शक्ति और शिवानी है यह और कात्यायिनी भी है
दैत्यों के शोणित को पीने वाली महाकाली भी है ॥

विविध रूपों से सजी यह नारी सृष्टि का श्रृंगार है।
नारी ही न हो तो फिर किस काम का यह संसार है।
जिस घर में इसका सम्मान है वह आनंद का आगार है।
अगर जीवन में नारी न हो, तो मानव जीवन ही बेकार है ॥

कठिन शब्दार्थ :

धरा = पृथ्वी; मृदुल = कोमल; सार = मूल, आधार, सारांश; वंदनीय = वंदना योग्य; नमन = प्रणाम; रति = प्रेम; मति = बुद्धि; चिरैय्या = चिड़िया; हिलोर = तरंग; पैजनियाँ = पायल; अंगना = आंगन; बिरवा = पौधा; ऋजुता = सीधापन; प्रतिदान = बदले में देना; अबला = बलहीन; कृत्या = विनाशकारी; दुर्दम = जिसे आसानी से दमन न किया जा सके; कात्यायिनी = पार्वती का एक नाम; शोणित = खून; आगार = घर।

I एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) नारी किसके समान सहनशील होती है?
२) नारी बचपन में किसके मन में हिलोरें उठाती है?
३) नारी ने इस धरती को धन्य कैसे किया?
४) स्वार्थी संसार क्या याद नहीं रखता है?
५) नारी अबला नहीं बल्कि क्या है?
६) जिस घर में नारी का सम्मान हो, वहाँ क्या होता है?

II निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) नारी के विभिन्न गुणों का परिचय दीजिए।
२) नारी के बचपन का चित्रण कीजिए।

३) नारी के शक्ति रूपों का वर्णन कीजिए।

४) नारी किस प्रकार से सृष्टि का श्रृंगार है?

III सन्दर्भ भाव स्पष्ट कीजिए :

१) इस धरा पर मृदुल रस धार-सी तुम सुख का सार हो नारी
तुम वंदनीय हो, अभिनंदनीय हो, सादर नमन तुम्हें हे नारी....!
धरा सी सहनशील, जल-सी निर्मल, फूलों सी कोमल तुम नारी
जीवन की गति, जीवन की रति, जीवन की मति हो तुम नारी... !

२) नारी अबला नहीं बल्कि यह नारी रणचंडी भी है,
कृत्या है यह दुर्दम, दैत्य नाशिनी दुर्गा माँ भी है।
शक्ति और शिवानी है यह और कात्यायिनी भी है
दैत्यों के शोणित को पीने वाली महाकाली भी है ॥

* * * * * *

तृतीय सोपान

अपठित भाग

कहानियाँ

१. मधुआ

– जयशंकर प्रसाद

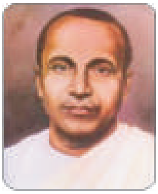

लेखक परिचय :

युग प्रवर्तक साहित्यकार जयशंकर प्रसाद का जन्म १८८९ ई. में सुंघनी साहू नाम से सुविख्यात काशी के एक प्रतिष्ठित परिवार में हुआ। बारह वर्ष की आयु में आपके पिता की मृत्यु के उपरांत, बड़े भाई ने घर पर ही पढ़ने की व्यवस्था कर दी। आपने घर पर ही हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, बंगाली, फारसी आदि भाषाओं का अध्ययन किया। आप पैतृक व्यवसाय और घर की संपूर्ण जिम्मेदारी संभालते हुए साहित्य सृजन में संलग्न रहे। आप बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। साहित्य की प्रत्येक विधा में आपने अपनी लेखनी का जौहर दिखाया। १९३७ ई. में केवल ४८ वर्ष की आयु में आपकी मृत्यु हुई।

आपके **कहानी संग्रह** – 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', 'आँधी', और 'इंद्रजाल'; **उपन्यास** – 'कंकाल', 'तितली' तथा 'इरावती' (अपूर्ण); **नाटक** – 'राज्यश्री', 'अजातशत्रु', 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' आदि। 'कामायनी' आपका सुप्रसिद्ध महाकाव्य है। 'आँसू', 'लहर', 'झरना' आदि आपकी महत्वपूर्ण काव्य कृतियाँ हैं।

प्रस्तुत कहानी एक सामाजिक कहानी है। यह परत दर परत खुलती जाती है। शराबी व्यक्ति के जीवन में बालक मधुआ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। उसके आगमन से शराबी का जीवन सही मायने में रूपायित होता है। वह हर पल बालक मधुआ के बारे में ही सोचने लगता है। बालक के प्रेम में वह अपने जीवन को सार्थक बना लेता है।

बाल मनोदशा से विद्यार्थियों को परिचित कराना तथा बुराई पर अच्छाई की जीत को दर्शाने के उद्देश्य से प्रस्तुत कहानी चयनित है।

आज सात दिन हो गये, पीने को कौन कहे – छुआ तक नहीं! आज सातवाँ दिन है सरकार!

तुम झूठे हो। अभी तो तुम्हारे कपड़े से महँक आ रही है।

वह... वह तो कई दिन हुए। सात दिन से ऊपर-कई दिन हुए-अँधेरे में बोतल उँड़ेलने लगा था। कपड़े पर गिर जाने से नशा भी न आया। और आपको कहने का... क्या कहूँ... सच मानिए। सात दिन – ठीक सात दिन से एक बूँद भी नहीं।

ठाकुर सरदार सिंह हँसने लगे। लखनऊ में लड़का पढ़ता था। ठाकुर साहब भी कभी-कभी वहीं आ जाते। उनको कहानी सुनने का चसका था। खोजने पर यही शराबी मिला। वह रात को, दोपहर में, कभी-कभी सबेरे भी आ जाता। अपनी लच्छेदार कहानी सुनाकर ठाकुर का मनो-विनोद करता।

ठाकुर ने हँसते हुए कहा – ''तो आज पियोगे न?''

''झूठ कैसे कहूँ। आज तो जितना मिलेगा, सब पिऊँगा। सात दिन चने-चबेने पर बिताये हैं, किसलिए।''

''अद्‌भुत! सात दिन पेट काटकर आज अच्छा भोजन न करके तुम्हें पीने की सूझी है! यह भी...।''

''सरकार! मौज-बहार की एक घड़ी, एक लम्बे दुःखपूर्ण जीवन से अच्छी है। उसकी खुमारी में रखे दिन काट लिये जा सकते हैं।''

''अच्छा, आज दिन भर तुमने क्या-क्या किया है?''

''मैंने? अच्छा सुनिये – सबेरे कुहरा पड़ता था, मेरे धुँआ से कम्बल-सा वह भी सूर्य के चारों ओर लिपटा था। हम दोनों मुँह छिपाये पड़े थे।''

ठाकुर साहब ने हँसकर कहा – ''अच्छा तो इस मुँह छिपाने का कोई कारण?''

''सात दिन से एक बूँद भी गले न उतरी थी। भला मैं कैसे मुँह दिखा सकता था ! और जब बारह बजे धूप निकली, तो फिर लाचारी थी ! उठा, हाथ-मुँह धोने में जो दुःख हुआ, सरकार, वह क्या कहने की बात है! पास में पैसे बचे थे। चना चबाने से दाँत भाग रहे थे। कट-कटी लग रही थी। पराठे वाले के यहाँ पहुँचा, धीरे-धीरे खाता रहा और अपने को

सेंकता भी रहा। फिर गोमती किनारे चला गया। घूमते-घूमते अँधेरा हो गया, बूँदे पड़ने लगीं, तब कहीं भाग के आपके पास आ गया।''

''अच्छा, जो उस दिन तुमने गड़रिये वाली कहानी सुनाई थी, जिसमें आसफुद्दौला ने उसकी लड़की का आँचल भुने हुए भुट्टे के दाने के बदले मोतियों से भर दिया था ! वह क्या सच है?''

''सच! अरे, वह गरीब लड़की भूख से उसे चबा कर थू-थू करने लगी।... रोने लगी ! ऐसी निर्दयी दिल्लगी बड़े लोग कर ही बैठते हैं। सुना है श्री रामचन्द्र ने भी हनुमान जी से ऐसा ही...।''

ठाकुर साहब ठठाकर हँसने लगे। पेट पकड़कर हँसते-हँसते लोट गये। साँस बटोरते हुए सम्हल कर बोले – ''और बड़प्पन कहते किसे हैं? कंगाल तो कंगाल! गधी लड़की! भला उसने कभी मोती देखे थे, चबाने लगी होगी। मैं सच कहता हूँ, आज तक तुमने जितनी कहानियाँ सुनाई, सबमें बड़ी टीस थी। शाहजादों के दुखड़े, रंग-महल की अभागिनी बेगमों के निष्फल प्रेम, करूण कथा और पीड़ा से भरी हुई कहानियाँ ही तुम्हें आती हैं; पर ऐसी हँसाने वाली कहानी और सुनाओ, तो मैं अपने सामने ही बढ़िया शराब पिला सकता हूँ।''

''सरकार! बूढों से सुने हुए वे नवाबी के सोने-से दिन, अमीरों की रंग-रेलियाँ, दुखियों की दर्द-भरी आहें, रंगमहलों में घुट-घुटकर मरनेवाली बेगमें, अपने-आप सिर में चक्कर काटती रहती हैं। मैं उनकी पीड़ा से रोने लगता हूँ। अमीर कंगाल हो जाते हैं। बड़े-बड़ों के घमंड चूर होकर धूल में मिल जाते हैं। तब भी दुनिया बड़ी पागल है। मैं उसके पागलपन को भुलाने के लिए शराब पीने लगता हूँ – सरकार! नहीं तो यह बुरी बला कौन अपने गले लगाता !''

ठाकुर साहब ऊँघने लगे थे। अँगीठी में कोयला दहक रहा था। शराबी सरदी से ठिठुरा जा रहा था। वह हाथ सेंकने लगा। सहसा नींद में चौंककर ठाकुर साहब ने कहा – ''अच्छा जाओ, मुझे नींद लग रही है। वह देखो, एक रुपया पड़ा है, उठा लो लल्लू को भेजते जाओ।''

शराबी रुपया उठाकर धीरे से खिसका। लल्लू था ठाकुर साहब का जमादार। उसे खोजते हुए जब वह फाटक पर की बगल वाली कोठरी के पास पहुँचा तो उसे सुकुमार कंठ से सिसकने का शब्द सुनाई पड़ा। वह खड़ा होकर सुनने लगा।

''तो सूअर, रोता क्यों है? कुँवर साहब ने दो ही लातें लगाई हैं! कुछ गोली तो नहीं मार दी?'' कर्कश स्वर से लल्लू बोल रहा था; किन्तु उत्तर में सिसकियों के साथ एकाध हिचकी ही सुनाई पड़ जाती थी। अब और भी कठोरता से लल्लू ने कहा, ''मधुआ! जा सो रह, नखरा न कर, नहीं तो उठूँगा तो खाल उधेड़ दूँगा। समझा न?''

शराबी चुपचाप सुन रहा था। बालक की सिसकी बढ़ने लगी। फिर उसे सुनाई पड़ा – ''ले अब भागता है कि नहीं? क्यों मार खाने पर तुला है?''

भयभीत बालक बाहर चला आ रहा था। शराबी ने उसके छोटे से सुन्दर गोरे मुँह को देखा। आँसू की बूँदें ढुलक रही थीं। बड़े दुलार से उसका मुँह पोंछते हुए उसे लेकर वह फाटक के बाहर चला आया। दस बज रहे थे। कड़ाके की सर्दी थी। दोनों चुपचाप चलने लगे। शराबी की मौन सहानुभूति को उस छोटे-से सरल हृदय ने स्वीकार कर लिया। वह चुप हो गया। अभी वह एक तंग गली पर रुका ही था कि बालक के फिर से सिसकने की उसे आहट लगी। वह झिड़ककर बोल उठा –

''अब क्या रोता है रे छोकरे?''

''मैंने दिन भर से कुछ खाया नहीं।''

''कुछ खाया नहीं; इतने बड़े अमीर के यहाँ रहता है और दिन भर तुझे खाने को नहीं मिला?''

''यही कहने तो मैं गया था जमादार के पास; मार तो रोज ही खाता हूँ। आज तो खाना ही नहीं मिला। कुँवर साहब का ओवरकोट लिये खेल में दिन भर साथ रहा। सात बजे लौटा, तो और भी नौ बजे तक कुछ काम करना पड़ा। आटा रख नहीं सका था रोटी बनती तो कैसे! जमादार से कहने गया था!'' भूख की बात कहते-कहते बालक के ऊपर उसकी दीनता और भूख ने एक साथ ही जैसे आक्रमण कर दिया, वह फिर हिचकियाँ लेने लगा।

शराबी उसका हाथ पकड़कर घसीटता हुआ गली में ले चला। एक गन्दी कोठरी का दरवाजा ढकेलकर बालक को लिये हुए वह भीतर पहुँचा। टटोलते हुए सलाई से मिट्टी की ढिबरी जलाकर वह फटे कंबल के नीचे से कुछ खोजने लगा। एक पराठे का टुकड़ा मिला! शराबी उसे बालक के हाथ में देकर बोला – ''तब तक तू इसे चबा, मैं तेरा गढ़ा भरने

के लिए कुछ और ले आऊँ—सुनता है रे छोकरे! रोना मत, रोएगा तो खूब पीटूँगा। मुझसे रोने से बड़ा बैर है। पाजी कहीं का, मुझे भी रुलाने का...।''

शराबी गली के बाहर भागा। उसके हाथ में एक रुपया था। बारह आने का एक देशी अद्धा और दो आने की चाय... दो आने की पकौड़ी.... नहीं-नहीं आलू-मटर... अच्छा, न सही चारों आने का माँस ही ले लूँगा। पर यह छोकरा! इसका गढ़ा जो भरना होगा। यह कितना खायेगा और क्या खायेगा? ओह! आज तक तो कभी मैंने दूसरों के खाने का सोच-विचार किया ही नहीं। तो क्या ले चलूँ? – पहले एक अद्धा ही ले लूँ! इतना सोचते-सोचते उसकी आँखों पर बिजली के प्रकाश की झलक पड़ी। उसने अपने को मिठाई की दूकान पर खड़ा पाया। वह शराब का अद्धा लेना भूल कर मिठाई-पूरी खरीदने लगा। नमकीन लेना भी न भूला। पूरा एक रुपये का सामान लेकर वह दूकान से हटा। जल्द पहुँचने के लिए एक तरह से दौड़ने लगा। अपनी कोठरी में पहुँचकर उसने दौनों की पाँत बालक के सामने सजा दी। उनकी सुगन्ध से बालक के गले में एक तरावट पहुँची। वह मुस्कराने लगा।

शराबी ने मिट्टी की गगरी से पानी उँड़ेलते हुए कहा – ''नटखट कहीं का, हँसता है, सोंधी बास नाक में पहुँची न? ले खूब ठूँसकर खा ले, और फिर रोया कि पीटा!''

दोनों ने, बहुत दिन पर मिलने वाले दो मित्रों की तरह साथ बैठकर भरपेट खाया। सीली जगह में सोते हुए बालक ने शराबी का पुराना बड़ा कोट ओढ़ लिया था। जब उसे नींद आ गई, तो शराबी भी कम्बल तानकर बड़बड़ाने लगा। सोचा था, आज सात दिन पर भरपेट पीकर सोऊँगा, लेकिन यह छोटा-सा रोना पाजी, न जाने कहाँ से आ धमका?

एक चिन्तापूर्ण आलोक में आज पहले पहल शराबी ने आँख खोल कर कोठरी में बिखरी हुई दारिद्र्य की विभूति को देखा, और देखा उस घुटनों से ठुड्डी लगाये हुए निरीह बालक को। उसने तिलमिलाकर मन- ही-मन प्रश्न किया – किसने ऐसे सुकुमार फूल को कष्ट देने के लिए निर्दयता की सृष्टि की? आह री नियति! तब इसको लेकर मुझे घर-बारी बनना पड़ेगा क्या? दुर्भाग्य! जिसे मैंने कभी सोचा भी न था। मेरी इतनी माया-ममता – जिस पर आज तक केवल बोतल का ही पूरा अधिकार था

— इसका पक्ष क्यों लेने लगी? इस छोटे-से पाजी ने मेरे जीवन के लिए कौन-सा इन्द्रजाल रचने का बीड़ा उठाया है ? तब क्या करूँ? कोई काम करूँ? कैसे दोनों का पेट चलेगा? नहीं, भगा दूँगा इसे — आँख तो खोले!

बालक अँगड़ाई ले रहा था। वह उठ बैठा। शराबी ने कहा — ''ले उठ, कुछ खा ले, अभी रात का बचा हुआ है; और अपनी राह देख! तेरा नाम क्या है रे?''

बालक ने सहज हँसी हँसकर कहा — ''मधुआ! भला हाथ-मुँह भी न धोऊँ। खाने लगूँ! और जाऊँगा कहाँ?''

''आह!'' कहाँ बताऊँ इसे कि चला जाय! कह दूँ कि भाड़ में जा; किन्तु वह आज तक दु:ख की भट्ठी में जलता ही रहा है। तो... वह चुपचाप घर से झल्लाकर सोचता हुआ निकला — ले पाजी, अब यहाँ लौटूँगा ही नहीं। तू ही इस कोठरी में रह! शराबी घर से निकला। गोमती किनारे पहुँचने पर उसे स्मरण हुआ कि वह कितनी ही बातें सोचता आ रहा था, पर कुछ भी सोच न सका। हाथ-मुँह धोने लगा। उजली धूप निकल आई थी। वह चुपचाप गोमती की धारा को देख रहा था। धूप की गरमी से सुखी होकर वह चिन्ता भुलाने का प्रयत्न कर रहा था कि किसी ने पुकारा —

''भले आदमी, रहे कहाँ? सालों पर दिखाई पड़े। तुमको खोजते-खोजते मैं थक गया।''

शराबी ने चौंककर देखा — वह कोई जान-पहचान का तो मालूम होता था; पर कौन है, यह ठीक-ठीक न जान सका।

उसने फिर कहा — ''तुम्हीं से कह रहे हैं। सुनते हो, उठा ले जाओ अपनी सान धरने की कल, नहीं तो सड़क पर फेंक दूँगा। एक ही तो कोठरी, जिसका मैं दो रुपये किराया देता हूँ — उसमें क्या मुझे अपना कुछ रखने के लिए नहीं है?''

''ओहो! रामजी, तुम हो भाई, मैं भूल गया था। तो चलो, आज ही उसे उठा लाता हूँ।'' कहते हुए शराबी ने सोचा — 'अच्छी रही, उसी को बेचकर कुछ दिनों तक काम चलेगा।'

गोमती नहाकर, रामजी पास ही अपने घर पहुँचा। शराबी की कल देते हुए उसने कहा — ''ले जाओ, किसी तरह मेरा इससे पिण्ड छूटे।''

बहुत दिनों पर आज उसको कल ढोना पड़ा। किसी तरह अपनी कोठरी में पहुँचकर उसने देखा कि बालक चुपचाप बैठा है। बड़बड़ाते हुए उसने पूछा – ''क्यों रे, तूने कुछ खा लिया कि नहीं?''

''भरपेट खा चुका हूँ और वह देखो, तुम्हारे लिए भी रख दिया है।'' कहकर उसने अपनी स्वाभाविक मधुर हँसी से उस रूखी कोठरी को तर कर दिया।

शराबी एक क्षण भर चुप रहा। फिर चुपचाप जल-पान करने लगा। मन-ही-मन सोच रहा था – यह भाग्य का संकेत नहीं तो और क्या है? चलूँ फिर सान देने का काम चलता करूँ। दोनों का पेट भरेगा। वही पुराना चरखा फिर सिर पड़ा। नहीं तो, दो बातें, किस्सा-कहानी, इधर-उधर की कहकर अपना काम चला ही लेता था। पर अब तो बिना कुछ किये घर नहीं चलने का। जल पीकर बोला – ''क्यों रे मधुआ, अब तू कहाँ जायेगा?''

''कहीं नहीं।''

''यह लो, तो फिर क्या यहाँ जमा गड़ी है कि मैं खोद-खोदकर तुझे मिठाई खिलाता रहूँगा।''

''तब कोई काम करना चाहिए।''

''करेगा?''

''जो कहो?''

''अच्छा तो आज से मेरे साथ-साथ घूमना पड़ेगा यह कल तेरे लिए लाया हूँ! चल, आज से तुझे सान देना सिखाऊँगा। कहाँ, इसका कुछ ठीक नहीं। पेड़ के नीचे रात बिता सकेगा न?''

''कहीं भी रह सकूँगा; पर उस ठाकुर की नौकरी न कर सकूँगा?''

शराबी ने एक बार स्थिर दृष्टि से उसे देखा। बालक की आँखें दृढ़ निश्चय की सौगन्ध खा रही थीं।

शराबी ने मन-ही-मन कहा – ''बैठे-बैठाये यह हत्या कहाँ से लगी? अब तो शराब न पीने की मुझे भी सौगन्ध लेनी पड़ी।''

वह साथ ले जानेवाली वस्तुओं को बटोरने लगा। एक गट्ठर का और दूसरा कल का, दो बोझ हुए।

शराबी ने पूछा – ''तू किसे उठाएगा?''

“जिसे कहो।”

“अच्छा, तेरा बाप जो मुझको पकड़े तो?”

“कोई नहीं पकड़ेगा, चलो भी। मेरे बाप कभी के मर गये।”

शराबी आश्चर्य से उसका मुँह देखता हुआ कल उठाकर खड़ा हो गया। बालक ने गठरी लादी। दोनों कोठरी छोड़कर चल पड़े।

कठिन शब्दार्थ :

महक = सुगन्ध; लच्छेदार = मजेदार; खुमारी = नशा; कुहरा = ओस, शबनम; लाचार = विवश, मजबूर; टीस = रह-रहकर उठनेवाला दर्द; ऊँघना = झपकी लेना; दहक = धधकना; सिसकना = धीरे-धीरे रोना; उधेड़ना = खाल खींचना; ढुलकना = लुढ़कना; दुलार = लाड़-प्यार; सौगन्ध खाना = प्रण लेना; ढिबरी = मिट्टी के तेल का दीपक; पाजी = शरारती; अद्धा = आधा; सीली = गीली जगह; आलोक = प्रकाश; सान = एक पत्थर जिस पर रगड़कर अस्त्रों की धार तेज की जाती है; पिण्ड छूटना = पीछा छुड़ाना; गड़रिया = भेड़-बकरी पालने वाला।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) बालक का नाम क्या है?

२) ठाकुर सरदार सिंह का लड़का कहाँ पढ़ता था?

३) बड़े-बड़ों के घमंड चूर होकर कहाँ मिल जाते हैं?

४) गन्दी कोठरी में बालक को खाने के लिए क्या मिला?

५) शराबी के हाथ में कितने रुपए थे?

६) सीली जगह में सोते हुए बालक ने क्या ओढ़ लिया?

७) बालक की आँखें किसकी सौगन्ध खा रही थीं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) शराबी ठाकुर सरदारसिंह को कौन-कौन सी कहानियाँ सुनाता था?

२) शराबी को बच्चा कहाँ मिला? वह उसे अपने साथ क्यों लाया?

३) शराबी एक रुपए से क्या खरीदना चाहता था और बाद में क्या खरीद लिया?

४) शराबी के जीवन में मधुआ के आने के बाद क्या परिवर्तन आया?

५) मधुआ पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए।

* * * * * *

२. श्मशान

— मन्नू भंडारी

लेखिका परिचय :

हिन्दी कहानीकार मन्नू भंडारी का जन्म १९३१ ई. में मध्यप्रदेश के भानपुरा नामक गाँव में हुआ। उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश लेकर वहीं से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। नई पीढ़ी की महिला कथाकारों में आपका विशिष्ट स्थान है। आपका विवाह हिन्दी साहित्यकार श्री. राजेन्द्र यादव से हुआ। आपने अपनी कहानियों में नारी जीवन की समस्याओं को मार्मिक ढंग से रेखांकित किया है। आपकी रचना-शैली संयत और प्रवाहपूर्ण है। भाषा सजीव और आंडबरशून्य है।

आपके कहानी संग्रह – 'मैं हार गई', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर', 'यही सच है', 'एक प्लेट सैलाब' आदि हैं।

पहाड़ी मनुष्य का परिचय देते हुए श्मशान से कहता है – 'जीवन की पूर्णता के लिए वह फिर-फिर प्रेम करता है। जीवित रहने की ललक के चलते ही वह हर वियोग झेल लेता है... व्यथा सह लेता है, क्योंकि सब से अधिक प्रेम तो मनुष्य अपने आप से करता है।' प्रस्तुत कहानी में मन्नू भंडारी ने इस सत्य को उजागर किया है।

मनुष्य की स्वार्थपरता, सुख लोलुपता एवं जीवन की वास्तविकता का परिचय कराने हेतु प्रस्तुत व्यंग्य रचना चयनित है।

रात के दस बजे होंगे। श्मशान के एक ओर डोम ने बेफिक्री से खाट बिछाते हुए कबीर के दोहे की ऊँची तान छेड़ दी, 'जेहि घट प्रेम न संचरै, सोई घट जान मसान!'

श्मशान का दिल-भर आया। एक सर्द आह भरकर उसने पहलू में खड़ी पहाड़ी से कहा, 'मैं इंसान को जितना प्यार करता हूँ, उतनी ही घृणा उससे पाता हूँ। सभी मनुष्य यही चाहते हैं कि कभी उन्हें मेरा मुँह न देखना पड़े। पर वास्तव में मैं इतना बुरा नहीं हूँ। संसार में जब मनुष्य को एक दिन के लिए भी स्थान नहीं रह जाता, तब मैं उसे अपनी गोद में स्थान देता हूँ। चाहे कोई अमीर हो या गरीब, वृद्ध हो या बालक, मैं सबको समान दृष्टि से देखता हूँ। पर इससे क्या होता है? मेरे पास वह प्रेम नहीं, जो मनुष्य की सबसे बड़ी निधि है। मेरे दिल में मुहब्बत का वह चिराग रोशन नहीं होता, जिसके बल पर मैं उसके दिल में अपने लिए थोड़ा-सा स्थान बना सकता। नहीं जानता खुदा ने मेरे साथ ऐसी बेइंसाफी का सलूक क्यों किया?'

शहर और श्मशान के बीच खड़ी पहाड़ी मुस्करा दी। उसकी यह व्यंग्यात्मक मुस्कुराहट श्मशान के हृदय में चुभ गई। उसने पूछा, 'क्या तुम्हारी कभी यह इच्छा नहीं होती कि तुम्हारे पास भी इंसान की तरह प्रेम-भरा दिल होता, जिसमें अपने प्रिय के लिए मर मिटने की तमन्ना मचलती रहती है। कभी-कभी दूर-दूर से हवाएँ आती हैं और लैला-मजनूँ और शीरी-फरहाद की प्रेम-कहानियाँ मुझे सुना जाती हैं तो सच मानना, मैं तड़पकर रह जाता हूँ कि काश! मैं भी मजनूँ होता और लैला के वियोग में अपने को कुर्बान कर देता। प्रिय की प्रतीक्षा में, राह में पलकों के पाँवड़े बिछाकर बैठा रहता। सावन की उठी घटाएँ मेरे मन में हूक उठातीं और बसंत की सुरमई साँझें मेरे मन में तड़प बनकर रह जातीं। प्रिय का जीवन ही मेरा जीवन होता और उसकी मौत मेरी मौत। पर क्या करूँ, ईश्वर ने तो मुझे श्मशान बनाया है, जिसके हृदय में प्रेम नहीं, स्निग्धता नहीं, सरसता नहीं, केवल धू-धू करती आग की लपटें हैं।'

एक आँख से श्मशान को और दूसरी आँख से शहर को और उसमें बसे इंसानों को देखने वाली पहाड़ी ने पूछा, 'बड़ी तमन्ना है इंसान बनने की?'

श्मशान ने कहा, 'तमन्ना! मनुष्य के पास जैसा प्रेममय हृदय है,

उसे पाने के लिए मैं अपने जैसे सौ जीवन भी कुर्बान कर सकता हूँ।'

पहाड़ी मुस्करा दी।

इतने में ही किसी के करुण क्रंदन ने श्मशान के शुष्क हृदय को दहला दिया। एक छोटी-सी भीड़ किसी शव को लिए चली आ रही थी। उसमें एक सुंदर नवयुवक फूट-फूटकर रो रहा था, मानो किसी ने उसका सर्वस्व लूट लिया हो। लाश उतारी गई। वह उस नवयुवक की पत्नी थी। युवक का क्रंदन श्मशान के हृदय को बेध गया।

सारा क्रिया-कर्म समाप्त कर जैसे-तैसे उस युवक को सँभालकर वे लोग ले गए और श्मशान सोचता रहा, कितना प्यार करता होगा यह अपनी पत्नी को। काश, मैं भी किसी को इतना प्यार कर सकता!

दूसरे दिन साँझ के धुँधले प्रकाश में श्मशान ने देखा, वही युवक आ रहा है। उसके कल और आज के चेहरे में ज़मीन-आसमान का अंतर था। एक रात में ही जैसे वह बूढ़ा हो गया था। आँखें सूजकर लाल हो गई थीं। वह पागलों की तरह लड़खडाता हुआ आया और अपनी पत्नी की राख बटोरने लगा। कुछ देर तक हिचकियाँ लेता रहा और उसकी आँखों से निरंतर अश्रु बहते रहे। फिर जैसे भावनाओं का बाँध टूट गया, वह सिर फोड़-फोड़कर रोने लगा और चीखने लगा – 'तुम मुझे छोड़कर कहाँ चली गई सुकेशी? याद है, कितनी बार तुमने कसमें खाई थीं कि जिंदगी भर तुम मेरा साथ दोगी पर दो वर्षों में ही तुम तो मुझे अकेला छोड़कर चली गईं। अब मैं तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकता। तुम मुझे अपने पास बुला लो, नहीं तो मुझे ही तुम्हारे पास आने का कोई उपाय करना पड़ेगा। तुम नहीं तो मेरे जीवन का कोई अर्थ नहीं, कोई सार नहीं, कोई रस नहीं। तुम्हीं तो मेरा जीवन थीं, मेरी प्रेरणा थीं। अब मैं जीवित रहकर करूँगा ही क्या? मुझे अपने पास बुला लो, मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकता, नहीं रह सकता, किसी तरह भी नहीं रह सकता। इसी प्रकार वह विलाप करके रोता रहा, सिर फोड़ता रहा और मूक श्मशान अपनी सूखी, पथराई आँखों से इस दृश्य को देखता रहा। इंसान बनने की, प्रेम करने की और अपने प्रिय के वियोग में इस नवयुवक की भाँति मर-मिटने की तमन्ना और अधिक ज़ोर पकड़ती रही। वह यही सोचता रहा, काश! मैं भी किसी को इसी तरह दिलोजान से प्यार कर सकता !

उसके पहलू में खड़ी पहाड़ी मुस्कराती रही।

रो-धोकर वह व्यक्ति तो चला गया, पर श्मशान के हृदय को उसके आँसू गर्म सलाखों की तरह दग्ध करते रहे। उसने पहाड़ी से कहा, 'इस व्यक्ति की व्यथा ने मेरे हृदय को मथ डाला। यों तो यहाँ रोज़ ही ऐसे कितने ही व्यक्ति आते हैं, पर जाने क्यों, इसके दु:ख में, इसकी वेदना में ऐसा क्या था, जो मैं कभी नहीं भूल सकूँगा। तुम देखना, अब यह जीवित नहीं रहेगा। एक दिन में ही अपनी प्रेयसी के वियोग में जिसने अपने शरीर को आधा बना डाला हो, वह भला कितने दिन इस प्रकार जीवित रह सकेगा? वह अवश्य ही रो-रोकर प्राण दे देगा, और मैं भी चाहता हूँ कि वह मेरी गोद में आ जाए और मैं दोनों को हमेशा के लिए मिला दूँ!'

सारे दिन वह युवक के शव की प्रतीक्षा करता रहा, पर शव न आया। हाँ, आसमान में जब साँझ का धुँधलका छाने लगा तो वह युवक आया और वैसे ही पागलों की तरह प्रलाप करता रहा। तीन चार दिन तक यह क्रम बना रहा फिर युवक का आना भी बंद हो गया। पर श्मशान उसे न भूल सका। प्रत्येक शव को वह जाने किस उत्सुकता से देखता, और फिर कुछ खिन्न हो जाता।

एक दिन उसने पहाड़ी से पूछा, 'तुम्हें तो शहर का कोना-कोना दिखाई देता है, बता सकती हो, उस युवक का क्या हाल है?'

पहाड़ी ने मुस्कराते हुए कहा, 'नहीं।'

श्मशान ने कहा, 'मेरा अंत:करण रह-रहकर कह रहा है कि अवश्य ही उसने आत्महत्या कर ली होगी। वह शायद नदी में डूब गया होगा, या किसी ऐसे ही उपाय से उसने अपना अंत कर लिया होगा कि मैं उसकी लाश को भी नहीं पा सका। मेरी कितनी तमन्ना थी कि मैं उसे उसकी प्रिया के पास पहुँचा देता।'

पहाड़ी ने पूछा, 'तुम्हें विश्वास है कि वह मर गया होगा?'

श्मशान खीझ उठा, 'तुम तो बिल्कुल ही पत्थर हो। जिसके हृदय को प्रेम की पीर ने बेध दिया हो, वह कभी जीवित नहीं रह सकता।'

पहाड़ी केवल मुस्करा दी।

दिन आए और चले गए। अपने आँचल में इंसानों को अपने प्रेमियों के वियोग में आँसू बहाते देख श्मशान का मन इंसान के प्रति और अधिक श्रद्धालु होता गया और यह एक क्रम-सा हो गया कि श्मशान इंसान के अलौकिक गुण गाया करता और पहाड़ी मुस्कराया करती।

इसी प्रकार तीन वर्ष बीत गए। तीन वर्ष की लंबी अवधि भी श्मशान के मन से उस सुंदर युवक की व्यथा को न पोंछ सकी। वह अक्सर उसकी बात करता। उसके उन आँसुओं की बात करता, जो उसने अपनी प्रेयसी के वियोग में बहाए थे। उसके उस अनुपम प्रेम की बात करता, जिसने उसे अवश्य ही आत्महत्या के लिए बाध्य कर दिया होगा। उसके उस करुण विलाप की बात करता, जो आज भी उसके हृदय को मथे डाल रहा था।

तभी एक दिन फिर उसका हृदय किसी परिचित स्वर की करुण चीत्कारों से दहल उठा। उसने देखा, वही सुंदर युवक एक छोटी-सी भीड़ के साथ किसी शव को लिए आ रहा है। श्मशान ने सोचा, वह अभी जीवित है। अब इस अभागे पर ईश्वर ने कौन-सा दुख डाला है।

पर वहाँ पर जो बातचीत हो रही थी, उससे यह समझने में देर न लगी कि यह भी उसकी पत्नी ही थी। सब लोग कह रहे थे, 'इसके भाग्य में पत्नी का सुख ही नहीं लिखा है। वर्ना पाँच ही वर्ष में यों दो-दो पत्नियाँ न छोड़ जातीं। अभी बेचारे की उम्र ही क्या है...'

आज भी युवक का क्रंदन अत्यंत करुण था, आज भी उसकी चीत्कारें हृदय को दहला देनेवाली थीं, आज भी उसके आँसू गर्म सलाखों की भाँति हृदय को दहला देने वाले थे। उसके पहले दिन के रूप में और आज के रूप में कोई विशेष अंतर नहीं था। जैसे-तैसे धीरज बँधाकर और पकड़कर लोग उसे ले गए।

श्मशान के मन में वर्षों से मनुष्य के अलौकिक प्रेम की जो धारणा जमी हुई थी, उसको पहली बार हलका-सा धक्का लगा। संध्या समय वह युवक फिर आया और अपनी पत्नी की राख में लोट-लोटकर विलाप करने लगा, 'मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि तुम मुझे इस प्रकार छोड़कर चली जाओगी। यदि मुझे इसी तरह मझधार में छोड़कर जाना था, तो मेरा साथ ही क्यों दिया? अब मैं तुम्हारे बिना कैसे जीवित रहूँगा? तुमने अपनी मधुर मुस्कानों से एक दिन में ही मेरे मन से सुकेशी की व्यथा पोंछ दी थी। मैं मन-प्राण से तुम्हारा हो गया। तुम ही तो मेरा प्राण थीं। अब यह निष्प्राण देह कैसे जीवित रहेगी। कितने दिन जीवित रहेगी? मुझे अपने पास बुला लो, अब मैं इस संसार में नहीं रह सकूँगा। सुकेशी तो मेरी अनुगामिनी थी इसीलिए मुझे उसका अभाव नहीं खटका, पर तुम

तो मेरी सहगामिनी थीं, हम तो दो शरीर एक प्राण थे। जब प्राण ही चले गए तो शरीर का क्या प्रयोजन!'

इसी तरह वह रोज़ आता, घंटों विलाप करता और चला जाता। उसके आँसुओं में कुछ ऐसी शक्ति थी, उसके विलाप में कुछ ऐसी सच्चाई थी कि श्मशान के मन में पहले जो एक हल्की-सी संदेह की रेखा उभर आई थी, वह भी मिट गई।

एक बार फिर श्मशान उसके शव की प्रतीक्षा करने लगा और अधिक दृढ़ विश्वास के साथ कि इस धक्के ने अवश्य ही उसके जीवन का अंत कर दिया होगा। श्मशान बराबर मन में यह साध सँजोए बैठा रहा कि कब वह उस युवक और उसकी पत्नी को अपनी गोद में सदा के लिए मिला दे। ऐसा मिलाप, जिसमें वियोग का भय न हो, बिछुड़ने की आशंका न हो। पर उसका शव न आया। उसके हृदय की लालसा, लालसा बनी रही।

फिर वही ढर्रा चल पड़ा। रोज ही न जाने कितने शव जलते, मनुष्य रोते, श्मशान मनुष्य के अलौकिक प्रेम के गुण गाता और पहाड़ी मुस्कारती। अंतर था तो केवल इतना कि श्मशान के स्वर में कुछ उतार आ गया था और पहाड़ी की मुस्कराहट में व्यंग्य कुछ अधिक स्पष्ट और प्रखर हो गया था।

दो वर्ष भी नहीं बीत पाए होंगे कि श्मशान के कानों में फिर वही परिचित स्वर सुनाई पड़ा और उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब उसने देखा कि वह युवक इस बार अपनी तीसरी पत्नी के शव को जलाने आया है। उसने सोचा, शायद बिना प्रेम के ही उसने मजबूरी में विवाह कर लिया हो। पर उस युवक का विलाप सुना तो वह भ्रम भी जाता रहा। आज भी उसका क्रंदन उतना ही करुण था, आज भी उसकी चीत्कार हृदय को दहला देने वाली थी, आज भी उसके अश्रु गर्म सलाखों की भाँति दग्ध कर देने वाले थे। उसके पहले वाले रूप में और आज के रूप में कोई अंतर न था। उसकी बातें भी वही थीं, केवल इतना अंतर था कि आज उसे अपनी तीसरी पत्नी ही सबसे अधिक गुणी दिखाई दे रही थी। वह दावा कर रहा था कि तीसरी पत्नी से ही उसका सच्चा प्रेम था, पहली दो स्त्रियों का प्रेम बचपना था, नासमझी थी। पहली उसकी अनुगामिनी थी, दूसरी सहगामिनी तो तीसरी अग्रगामिनी थी, उसकी पथ-प्रदर्शिका थी, जिसके

बिना वह एक कदम भी जीवित नहीं रह सकता। वही पुरानी बातें, वही विलाप, वही क्रंदन, मानो इसका भावना के साथ कोई संबंध ही न हो, कंठस्थ पाठ की तरह वह उसे दुहरा रहा हो।

मनुष्य के अलौकिक प्रेम की जिस भावना को श्मशान अपने हृदय में बड़े यत्न से सँजोए बैठा था, उसका वही हृदय इस दृश्य से पत्थर हो गया। वह अवाक्, विमूढ़-सा देखता रहा। उसकी दृष्टि पथराई हुई थी, उसमें एक प्रश्न साकार हो उठा था।

पहाड़ी ने उसकी यह हालत देखी तो तरस खाकर बोली, 'सचमुच तुम मूर्ख हो! इतना भी नहीं समझते कि जो इंसान प्रेम करता है, उसे जीवन भी कम प्यारा नहीं। वह प्रेम की स्मृति, कल्पना और आध्यात्मिक भावना पर ही जिंदा नहीं रहता। जीवन की पूर्णता के लिए वह फिर-फिर प्रेम करता है। जीवित रहने की ललक के चलते ही वह हर वियोग झेल लेता है... व्यथा सह लेता है, क्योंकि सबसे अधिक प्रेम तो मनुष्य अपने आपसे करता है।'

कठिन शब्दार्थ :

हूक = हृदय की पीड़ा, दर्द, वेदना; सुरमई = सुरमें के रंग का; स्निग्धता = शीतलता; तमन्ना = इच्छा; क्रंदन = रोना, विलाप; शुस्क = नीरस, स्नेहरहित; दहलाना = भयभीत करना, डरकर काँपना; दग्ध = पीड़ित, दु:खित; धुँधलका = धुँए के रंग का, अस्पष्ट; अनुगामिनी = आज्ञाकारिणी; सहगामिनी = साथ चलनेवाली; अग्रगामिनी = आगे चलनेवाली; लालसा = चाह, इच्छा; ढर्रा = पथ, मार्ग; अवाक् = निस्तब्ध, मौन; विमूढ़ = अचेत, बेसुध; स्मृति = स्मरण, याद।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) श्मशान मनुष्य से प्यार के बदले क्या पाता है?
२) श्मशान किससे बातें कर रहा है?
३) युवक की पहली पत्नी का नाम लिखिए।
४) श्मशान सारे दिन किसके शव की प्रतीक्षा करता रहा?

५) श्मशान के मन में वर्षों से किसके प्रेम की अलौकिक धारणा जमी हुई थी?
६) पाँच वर्ष में युवक की कितनी पत्नियाँ मर गईं?
७) मनुष्य सबसे अधिक प्रेम किससे करता है?
८) 'श्मशान' कहानी की लेखिका कौन हैं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) श्मशान ने आह भरकर पहाड़ी से क्या कहा?
२) मनुष्य के प्रेम के बारे में श्मशान के विचार प्रकट कीजिए।
३) पहली पत्नी की मृत्यु पर युवक किस प्रकार विलाप करने लगा?
४) युवक अपनी तीसरी पत्नी की मृत्यु के उपरांत उसे सबसे अधिक गुणी क्यों समझता है?
५) अंततः पहाड़ी ने तरस खाकर श्मशान से क्या कहा?

* * * * * *

३. खून का रिश्ता

— भीष्म साहनी

लेखक परिचय :

हिन्दी साहित्याकाश में भीष्म साहनी का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। आपका जन्म ८ अगस्त १९१५ ई. को रावलपिंडी में हुआ। आपके पिता का नाम हरवंशलाल था। आपने मास्को के विदेशी भाषा प्रकाशन गृह में सन् १९५७ से १९६३ तक अनुवादक के रूप में काम किया। आप दिल्ली कालेज में अंग्रेजी के वरिष्ठ प्रवक्ता के पद पर कार्यरत रहे। आपकी विचारदृष्टि राष्ट्रीय और समाजपरक थी। आपने अपनी कहानियों में निम्न मध्यवर्गीय परिवारों की कुण्ठाओं, निराशा, घुटन, असंगतियों का स्वाभाविक तथा प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत किया है। आपकी सामाजिक दृष्टि स्वस्थ तथा स्पष्ट है। आपकी मृत्यु ११ जुलाई २००३ ई. को हुई।

आपकी प्रसिद्ध कहानियों में – 'माता-विमाता', 'बीवर', 'सिर का सदका', 'प्रोफेसर', 'अपने - अपने बच्चे', 'खून का रिश्ता', 'चीफ की दावत' आदि शामिल हैं। 'तमस' आपका बहुचर्चित उपन्यास है।

प्रस्तुत कहानी में भीष्म साहनी ने सगाई की रस्म, रिश्तेदारों की अहमियत, वीरजी का सवा रुपए में ही सगाई पर बल देना, मंगलसेन को अपनी हैसियत पर नाज़ होना, मंगलसेन को अंततः सगाई में ले जाना, उनका आतिथ्य-सत्कार, एक चम्मच का खो जाना, वीरजी का क्रोध प्रकट करना, मंगलसेन के साथ दुर्व्यवहार, प्रभा के भाई द्वारा चम्मच का वापस ला कर देना आदि घटनाओं का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। वर्तमान परिवेश में यह कहानी अत्यंत प्रासंगिक है और कहानी तत्वों पर भी यह खरी उतरती है।

आज के चकाचौंध भरे माहौल में सरल विवाह की महत्ता तथा खून के रिश्तों एवं पारिवारिक रिश्तों को निभाने पर बल देने के उद्देश्य से इस कहानी का चयन किया गया है।

खाट की पाटी पर बैठा चाचा मंगलसेन हाथ में चिलम थामे सपने देख रहा था। उसने देखा कि वह समधियों के घर बैठा है और वीरजी की सगाई हो रही है। उसकी पगड़ी पर केसर के छींटे हैं और हाथ में दूध का गिलास है जिसे वह घूँट-घूँट करके पी रहा है। दूध पीते हुए कभी बादाम की गिरी मुँह में जाती है, कभी पिस्ते की। बाबूजी पास खड़े समधियों से उसका परिचय करा रहे हैं। यह मेरा चचाजाद छोटा भाई है, मंगलसेन ! समधी मंगलसेन के चारों ओर घूम रहे हैं। उनमें से एक झुककर बड़े आग्रह से पूछता है – और दूध लाऊँ, चाचाजी? थोड़ा-सा और? अच्छा, ले आओ, आधा गिलास, मंगलसेन कहता है और तर्जनी से गिलास के तल में से शक्कर निकाल-निकालकर चाटने लगता है....

मंगलसेन ने जीभ का चटखारा लिया और सिर हिलाया। तम्बाकू की कड़वाहट से भरे मुँह में भी मिठास आ गयी, मगर स्वप्न भंग हो गया। हल्की-सी झुरझुरी मंगलसेन के सारे बदन में दौड़ गयी और मन सगाई पर जाने के लिए ललक उठा। यह स्वप्नों की बात नहीं थी, आज सचमुच भतीजे की सगाई का दिन था। बस, थोड़ी देर बाद ही सगे सम्बन्धी घर आने लगेंगे, बाजा बजेगा, फिर आगे-आगे बाबूजी, पीछे-पीछे मंगलसेन और घर के अन्य सम्बन्धी, सभी सड़क पर चलते हुए, समधियों के घर जायेंगे।

मंगलसेन के लिए खाट पर बैठना असम्भव हो गया। बदन में खून तो छटाँक-भर था, मगर ऐसा उछलने लगा था कि बैठने नहीं देता था।

ऐन उसी वक्त कोठरी में सन्तू आ पहुँचा और खाट पर बैठकर मंगलसेन के हाथ में से चिलम लेते हुए बोला, ''तुम्हें सगाई पर नहीं ले जायेंगे, चाचा।''

चाचा मंगलसेन के बदन में सिर से पाँव तक लरजिश हुई। पर यह सोचकर कि सन्तू खिलवाड़ कर रहा है, बोला, ''बड़ों के साथ मज़ाक नहीं किया करते, कई बार कहा। मुझे नहीं ले जायेंगे, तो क्या तुम्हें ले जायेंगे?''

''किसी को भी नहीं ले जायेंगे। वीरजी कहते हैं, सगाई डलवाने सिर्फ बाबूजी जायेंगे और कोई नहीं जायेगा।''

''वीरजी आये हैं?'' चाचा मंगलसेन के बदन में फिर लरजिश

हुई और दिल धक-धक करने लगा। सन्तू घर का पुराना नौकर था, क्या मालूम ठीक ही कहता हो।

''ऊपर चलो, सब लोग खाना खा रहे हैं।'' सन्तू ने चिलम के दो कश लगाये, फिर चिलम को ताक पर रखा और बाहर जाने लगा। दरवाजे के पास पहुँचकर उसने फिर एक बार घूमकर हँसते हुए कहा – ''तुम्हें नहीं ले जायेंगे, चाचा, लगा लो शर्त, दो-दो रुपये की शर्त लगती है?''

''बस, बक-बक नहीं कर, जा अपना काम देख!''

ऊपर रसोईघर में सचमुच बहस चल रही थी। सन्तू ने गलत नहीं कहा था। रसोईघर में एक तरफ, दीवार के साथ पीठ लगाये बाबूजी बैठे खाना खा रहे थे। चौके के ऐन बीच में वीरजी और मनोरमा, भाई-बहन, एक साथ, एक ही थाली में खाना खा रहे थे। माँ जी चूल्हे के सामने बैठी पराठे सेंक रही थी। माँ बेटे को समझा रही थी, ''यही मौके, खुशी के होते हैं, बेटा! कोई पैसे का भूखा नहीं होता। अकेले तुम्हारे पिताजी सगाई डलवाने जायेंगे तो समधी भी इसे अपना अपमान समझेंगे।''

''मैंने कह दिया, माँ मेरी सगाई सवा रुपये में होगी और केवल बाबूजी सगाई डलवाने जायेंगे। जो मंजूर नहीं हो तो अभी से...''

''बस-बस, आगे कुछ मत कहना।'' माँ ने झट से टोकते हुए कहा। फिर क्षुब्ध होकर बोली, ''जो तुम्हारे मन में आये करो। आजकल कौन किसकी सुनता है। छोटा-सा परिवार और इसमें भी कभी कोई काम ढंग से नहीं हुआ। मुझे तो पहले ही मालूम था, तुम अपनी करोगे।''

''अपनी क्यों करेगा, मैं कान खींचकर इसे मनवा लूँगा।'' बाबूजी ने बेटे की ओर देखते हुए बड़े दुलार से कहा।

पर वीरजी खीझ उठे, ''क्या आप खुद नहीं कहा करते थे कि ब्याह-शादियों पर पैसे बर्बाद नहीं करना चाहिए। अब अपने बेटे की सगाई का वक्त आया तो सिद्धान्त ताक पर रख दिये। बस, आप अकेले जाइये और सवा रुपया लेकर सगाई डलवा लाइये।''

''वाह जी, मैं क्यों न जाऊँ? आजकल बहनें भी जाती हैं।'' मनोरमा सिर झटककर बोली, ''वीरजी, तुम इस मामले में चुप रहो।''

''सुनो, बेटा, न तुम्हारी बात, न मेरी'', बाबूजी बोले, ''केवल पाँच या सात सम्बन्धी लेकर जायेंगे। कहोगे तो बाजा भी नहीं होगा।

वहाँ उनसे कुछ माँगेंगे भी नहीं। जो समधी ठीक समझें दे दें, हम कुछ नहीं बोलेंगे।''

इस पर वीरजी तुनककर कुछ कहने जा ही रहे थे, जब सीढ़ियों पर मंगलसेन के कदमों की आवाज आयी।

''अच्छा, अभी मंगलसेन से कोई बात नहीं करना। खाना खा लो, फिर बातें होती रहेंगी।'' माँजी ने कहा।

पचास बरस की उम्र के मंगलसेन के बदन के सभी चूल ढीले पड़ गये थे। जब चलता तो उचक-उचककर हिचकोले खाता हुआ और जब सीढ़ियाँ चढ़ता तो पाँव घसीटकर, बार-बार छड़ी ठकोरता हुआ। जब भी वह सड़क पर जा रहा होता, मोड़ पर का साइकिलवाला दूकानदार हमेशा मंगलसेन से मजाक करके कहता, ''आओ, मंगलसेनजी, पेच कस दें'' और जवाब में मंगलसेन हमेशा उसे छड़ी दिखाकर कहता, ''अपने से बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते। तू अपनी हैसियत तो देख!''

मंगलसेन को अपनी हैसियत पर बड़ा नाज था। किसी जमाने में फौज में रह चुका था, इस कारण अब भी सिर पर खाकी पगड़ी पहनता था। खाकी रंग सरकारी रंग है, पटवारी से लेकर बड़े-बड़े इन्स्पेक्टर तक सभी खाकी पगड़ी पहनते हैं। इस पर ऊँचा खानदान और शहर के धनी-मानी भाई के घर में रहना, ऐंठता नहीं तो क्या करता?

दहलीज पर पहुँचकर मंगलसेन ने अन्दर झाँका। खिचड़ी मूँछें सस्ता तम्बाकू पीते रहने के कारण पीली हो रही थी। घनी भौंहों के नीचे दायीं आँख कुछ ज्यादा खुली हुई और बायीं आँख कुछ ज्यादा सिकुड़ी हुई थी। सामने के तीन दाँत गायब थे।

''भौजाईजी, आप रोटियाँ सेंक रही हैं? नौकरों के होते हुए...''

''आओ मंगलसेनजी, आओ, जरा देखो तो यहाँ कौन बैठा है!''

''नमस्ते, चाचाजी!'' वीरजी ने बैठे-बैठे कहा।

''उठकर चाचाजी को पालागन करो, बेटा, तुम्हें इतनी भी अक्ल नहीं है!'' बाबूजी ने बेटे को झिड़ककर कहा। वीरजी उठ खड़े हुए और झुककर चाचाजी को पालागन किया। चाचाजी झेंप गये।

कोने में बैठा सन्तू, जो नल के पास बर्तन मलने लगा था, कन्धे के पीछे मुँह छिपाये हँसने लगा।

''जीते रहो, बड़ी उम्र हो!'' मंगलसेन ने कहा और वीरजी के सिर

पर इस गम्भीरता से हाथ फेरा कि वीरजी के बाल बिखर गये।

मनोरमा खिलखिलाकर हँसने लगी।

''सगाईवाले दिन वीरजी खुद आ गये हैं। वाह-वाह!''

''बैठ जा, बैठ जा, मंगलसेन, बहुत बातें नहीं करते,'' बाबूजी बोले।

''आप मेरी जगह पर बैठ जाइए, चाचाजी, मैं दूसरी चटाई ले लूँगा।'' वीरजी ने कहा।

''दो मिनट खड़ा रहेगा तो मंगलसेन की टाँगें नहीं टूट जायेंगी।'' बाबूजी बोले, ''यह खुद भी चटाई पकड़ सकता है। जाओ मंगलसेन, जरा टाँगें हिलाओ और अपने लिए चटाई उठा लाओ।''

माँजी ने दाँत तले होंठ दबाया और घूर-घूरकर बाबूजी की ओर देखने लगीं, ''नौकरों के सामने तो मंगलसेन के साथ इस तरह रूखाई से नहीं बोलना चाहिए। आखिर तो खून का रिश्ता है, कुछ लिहाज़ करना चाहिए।''

मंगलसेन छज्जे पर से चटाई उठाने गया। दरवाजे के पास पहुँचकर, नौकर की पीठ के पीछे से गुजरने लगा, तो सन्तू ने हँसकर कहा, ''वहाँ नहीं हैं, चाचाजी, मैं देता हूँ, ठहरो। एक ही बर्तन रह गया है, मलकर उठता हूँ।''

सन्तू निश्चिन्त बैठा, कन्धों के बीच सिर झुकाये बर्तन मलता रहा।

मनोरमा घुटनों के ऊपर अपनी ठुड्डी रखे, दोनों हाथों से अपने पैरों की उँगलियाँ मलती हुई, कोई वार्ता सुनाने लगी, ''दूकानदारों की टाँगें कितनी छोटी होती हैं, भैया, क्या तुमने कभी देखा है?'' अपने भाई की ओर कनखियों से देखकर हँसती हुई बोली, ''जितनी देर वे गद्दी पर बैठे रहे, ठीक लगते हैं, पर जब उठें तो सहसा छोटे हो जाते हैं, इतनी छोटी-छोटी टाँगें। आज मैं एक दूकान पर सूटकेस लेने गयी...''

''उठो, सन्तू चटाई ला दो। हर वक्त का मजाक अच्छा नहीं होता।'' चाचा मंगलसेन सन्तू से आग्रह करने लगा।

''वहाँ खड़े क्या कर रहे हो, मंगलसेन? चलो, इधर आओ! उठ सन्तू, चटाई ले आ, सुनता नहीं तू? इसे कोई बात कहो तो कान में दबा जाता है।'' माँ बोली।

सन्तू की पीठ पर चाबुक पड़ी। उसी वक्त उठा और जाकर चटाई ले आया। माँजी ने चूल्हे के पास दीवार के साथ रखी दो थालियों में से एक थाली उठाकर मंगलसेन के सामने रख दी। मैले रूमाल से हाथ पोंछते हुए मंगलसेन चटाई पर बैठ गया। थाली में आज तीन भाजियाँ रखी थीं, चपातियाँ खूब गरम-गरम थीं।

सहसा बाबूजी ने मंगलसेन से पूछा, ''आज रामदास के पास गये थे? किराया दिया उसने या नहीं?''

मंगलसेन खुशी में था। उसी तरह चहककर बोला, ''बाबूजी, वह अफीमची कभी घर पर मिलता है, कभी नहीं। आज घर पर था ही नहीं।''

''एक थप्पड़ मैं तेरे मुँह पर लगाऊँगा, तुमने क्या मुझे बच्चा समझ रखा है?''

रसोईघर में सहसा सन्नाटा छा गया। माँ ने होंठ भींच लिये। मंगलसेन की पुलकन सिहरन में बदल गयी। उसका दायाँ गाल हिलने-सा लगा, जैसे चपट पड़ने पर सचमुच हिलने लगता है।

''छः महिने का किराया उस पर चढ़ गया है, तू करता क्या रहता है?''

नुक्कड़ में बैठे सन्तू के भी हाथ बर्तनों को मलते-मलते रुक गये। भाई-बहन फर्श की ओर देखने लगे। हाय बेचारा, मनोरमा ने मन-ही-मन कहा और अपने पैरों की उँगलियों की ओर देखने लगी। वीरजी का खून खौल उठा। चाचाजी गरीब हैं, इसीलिए इन्हें इतना दुत्कारा जाता है...

''और पराठा डालूँ, मंगलसेनजी?'' माँ ने पूछा। मंगलसेन का कौर अभी गले में ही अटका हुआ था। दोनों हाथों से थाली को ढँकते हुए हडबड़ाकर बोला, ''नहीं, भौजाई जी, बस जी!''

''जब मेरे यहाँ रहते यह हाल है, तो जब मैं कभी बाहर जाऊँगा तो क्या हाल होगा? मैं चाहता हूँ, तू कुछ सीख जाये और किराये का सारा काम सँभाल ले। मगर छः महीने तुझे यहाँ आये हो गये, तूने कुछ नहीं सीखा।''

इस वाक्य को सुनकर मंगलसेन के सर्द लहू में थोड़ी-सी हरारत आयी।

''मैं आज ही किराया ले आऊँगा, बाबूजी! न देगा तो जायेगा कहाँ? मेरा भी नाम मंगलसेन है !''

''मुझे कभी बाहर जाना पड़ा, तो तुम्हीं को काम सँभालना है। नौकर कभी किसी को कमाकर नहीं खिलाते। जमीन-जायदाद का काम करना हो तो सुस्ती से काम नहीं चलता। कुछ हिम्मत से काम लिया करो।''

मंगलसेन के बदन में झुरझुरी हुई। दिल में ऐसा हुलास उठा कि जी चाहा पगड़ी उतारकर बाबूजी के कदमों पर रख दे। हुमककर बोला, ''चिन्ता न करो जी, मेरे होते यहाँ चिड़ी फड़क जाये तो कहना? डर किस बात का? मैंने लाम देखी है, बाबूजी! बसरे की लड़ाई में कप्तान रस्किन था हमारा। कहने लगा, देखो मंगलसेन, हमारी शराब की बोतल लारी में रह गयी है वह हमें चाहिए। उधर मशीनगन चल रही थी। मैंने कहा, अभी लो, साहब! और अकेले मैं वहाँ से बोतल निकाल लाया। ऐसी क्या बात है...''

मंगलसेन फिर चहकने लगा। मनोरमा मुसकरायी और कनखियों से अपने भाई की ओर देखकर धीमे से बोली, ''चाचाजी की दुम फिर हिलने लगी।''

मंगलसेन खाना खा चुका था। उठते हुए हँसकर बोला, ''तो चार बजे चलेंगे न सगाई डलवाने?''

''तू जा, अपना काम देख, जो जरूरत हुई तो तुम्हें बुला लेंगे।'' बाबूजी बोले।

चाचा मंगलसेन का दिल धक-से रह गया। सन्तू शायद ठीक ही कहता था, मुझे नहीं ले चलेंगे। उसे रुलाई-सी आ गयी, मगर फिर चुपचाप उठ खड़ा हुआ, बाहर जाकर जूते पहने, छड़ी उठायी और झूलता हुआ सीढ़ियों की ओर जाने लगा।

वीरजी का चेहरा क्रोध और लज्जा से तमतमा उठा। मनोरमा को डर लगा कि बात और बिगड़ेगी, वीरजी कहीं बाबूजी से न उलझ बैठें। माँजी को भी बुरा लगा। धीमे से कहने लगीं, ''देखो जी, नौकरों के सामने मंगलसेन की इज्जत-आबरू का कुछ तो ख्याल रखा करो। आखिर तो खून का रिश्ता है। कुछ तो मुँह-मुलाहिजा रखना चाहिए। दिन-भर आपका काम करता है।''

''मैंने उसे क्या कहा है,'' बाबूजी ने हैरान होकर पूछा।

''यों रुखाई के साथ नहीं बोलते। वह क्या सोचता होगा? इस तरह बेआबरूई किसी की नहीं करनी चाहिए।''

''क्या बक रही हो? मैंने उसे क्या कहा है?'' बाबूजी बोले फिर सहसा वीरजी की ओर घूरकर कहने लगे, ''अब तू बोल, भाई, क्या कहता है? कोई भी काम ढंग से करने देगा या नहीं?''

''मैंने कह दिया, पिताजी, आप अकेले जाइए और सवा रुपये लेकर सगाई डलवा लाइए।''

रसोईघर में चुप्पी छा गयी। इस समस्या का कोई हल नजर नहीं आ रहा था। वीरजी टस-से-मस नहीं हो रहे थे।

सहसा बाबूजी ने सिर पर की पगड़ी उतारी और सिर आगे को झुकाकर बोले, ''कुछ तो इन सफेद बालों का ख्याल कर। क्यों हमें रुसवा करता है?''

वीरजी गुस्से में थे। चाचा मंगलसेन गरीब है, इसीलिए उसके साथ ऐसा बुरा व्यवहार किया जाता है। यह बात उसे खल रही थी। मगर जब बाबूजी ने पगड़ी उतारकर अपने सफेद बालों की दुहाई दी तो सहम गया। फिर भी साहस करके बोला, ''यदि आप अकेले नहीं जाना चाहते तो चाचाजी को साथ ले जाइए। बस, दो जने चले जायें।''

''कौन-से चाचा को?'' माँजी ने पूछा।

''चाचा मंगलसेन को।''

कोने में बैठे सन्तू ने भी हैरान होकर सिर उठाया। माँ झट से बोली, ''हाय-हाय बेटा, शुभ-शुभ बोलो! अपने रईस भाइयों को छोड़कर इस मरदूद को साथ ले जायें? सारा शहर थू-थू करेगा!''

''माँजी, अभी तो आप कह रही थी, खून का रिश्ता है। किधर गया खून का रिश्ता? चाचाजी गरीब हैं इसीलिए?''

''मैं कब कहती हूँ, यह न जाये! यह भी जाये, लेकिन और सम्बन्धी भी तो जायें। अपने धनी-मानी सम्बन्धियों को छोड़ दें और इस बहुरूपिये को साथ ले जायें, क्या यह अच्छा लगेगा?''

''तो फिर बाबूजी अकेले जायें।'' वीरजी परेशान हो उठे। ''मैंने जो कहना था कह दिया। अब जो तुम्हारे मन में आये करो, मेरा इससे कोई वास्ता नहीं।'' और उठकर रसोईघर से बाहर चले गये।

बेटे के यों उठ जाने से रसोईघर में चुप्पी छा गयी। माँ और बाप दोनों का मन खिन्न हो उठा। ऐसा शुभ दिन हो, बेटा घर पर आये और यों तकरार होने लगे। माँ का दिल टूक-टूक होने लगा। उधर बाबूजी का क्रोध बढ़ रहा था। उनका जी चाहता था कह दें, जा फिर मैं भी नहीं जाऊँगा। भेज दे जिसको भेजना चाहता है। मगर यह वक्त झगड़े को लम्बा करने का न था।

सबसे पहले माँ ने हार मानी, ''क्या बुरा कहता है ! आजकल के लड़के माँ-बाप के हजारों रुपये लुटा देते हैं। इसके विचार तो कितने ऊँचे हैं! यह तो सवा रुपये में सगाई करना चाहता है। तुम मंगलसेन को ही अपने साथ ले जाओ। अकेले जाने से तो अच्छा है।''

बाबूजी बड़बड़ाये, बहुत बोले, मगर आखिर चुप हो गये। बच्चों के आगे किस माँ-बाप की चलती है? और चुपचाप उठकर अपने कमरे में जाने लगे।

''जा सन्तू, मंगलसेन को कह, तैयार हो जाये।'' माँजी ने कहा।

मनोरमा चहक उठी और भागी हुई वीरजी को बताने चली गयी कि बाबूजी मान गये हैं।

मंगलसेन को जब मालूम हुआ कि अकेला वही बाबूजी के साथ जायेगा, तो कितनी-ही देर तक वह कोठरी में उचकता और चक्कर लगाता रहा। बदन का छटाँक-भर खून फिर उछलने लगा। जी चाहा कि सन्तू से उसी वक्त शर्त के दो रुपये रखवा ले। क्यों न हो, आखिर मुझसे बड़ा सम्बन्धी है भी कौन, मुझे नहीं ले जायेंगे तो किसे ले जायेंगे? मैं और बाबूजी ही इस घर के कर्ता-धर्ता हैं और कौन है? जितना ही अधिक वह इस बात पर सोचता, उतना ही अधिक उसे अपने बड़प्पन पर विश्वास होने लगता। आखिर उसने कोने में रखी ट्रंकी को खोला और कपड़े बदलने लगा।

घण्टा-भर बाद जब मंगलसेन तैयार होकर आँगन में आया, तो माँजी का दिल बैठ गया — यह सूरत लेकर समधियों के घर जायेगा? मंगलसेन के सिर पर खाकी पगड़ी, नीचे मैली कमीज के ऊपर खाकी फौजी कोट, जिसके धागे निकल रहे थे और नीचे धारीदार पाजामा और मोटे-मोटे काले बूट। माँ को रुलाई आ गयी। पर यह अवसर रोने का नहीं था। अपनी रुलाई को दबाती हुई वह आगे बढ़ आयी।

''मनोरमा, जा भाई की आलमारी में से एक धुला पाजामा निकाल ला।'' फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोली, ''सुनते हो जी, अपनी एक पगड़ी इधर भेज देना, मंगलसेन के पास ढंग से पगड़ी नहीं।''

मंगलसेन का कायाकल्प होने लगा। मनोरमा पाजामा ले आयी। सन्तू बूट पालिस करने लगा। आँगन के ऐन बीचोंबीच एक कुरसी पर मंगलसेन को बिठा दिया गया और परिवार के लोग उसके आसपास भाग-दौड़ करने लगे। कहीं से मनोरमा की दो सहेलियाँ भी आ पहुँची थीं। मंगलसेन पहले से भी छोटा लग रहा था। नंगा सिर, दोनों हाथ घुटनों के बीच जोड़े वह आगे की ओर झुककर बैठा था। बार-बार उसे रोमांच हो रहा था...

मंगलसेन का स्वप्न सचमुच साकार हो उठा। समधियों के घर में उसकी वह आवभगत हुई कि देखते बनता था। मंगलसेन आरामकुरसी पर बैठा था और पीछे एक आदमी खड़ा पंखा झल रहा था। समधी आगे-पीछे, हाथ बाँधे घूम रहे थे। एक आदमी ने सचमुच झुककर बड़े आग्रह से कहा, ''और दूध लाऊँ, चाचाजी? थोड़ा-सा और?''

और जवाब में मंगलसेन ने कहा, ''हाँ, आधा गिलास ले आओ।''

समधियों के घर की ऐसी सज-धज कि मंगलसेन दंग रह गया और उसका सिर हवा में तैरने लगा। आवाज ऊँची करके बोला, ''लड़की कुछ पढ़े-लिखी भी है या नहीं? हमारा बेटा तो एम.ए. पास है?''

''जी, आपकी दया से लड़की ने इसी साल बी.ए. पास किया है।''

''घर का काम-धन्धा भी कुछ जानती है या सारा वक्त किताबें ही पढ़ती रहती है?''

''जी, थोडा-बहुत जानती है।''

''थोड़ा-बहुत क्यों?''

आखिर सगाई डलवाने का वक्त आया। समधी बादामों से भरे कितने ही थाल लाकर बाबूजी और मंगलसेन के सामने रखने लगे। बाबूजी ने हाथ बाँध दियें, ''मैं तो केवल एक रुपया और चार आने लूँगा। मेरा इन चीजों में विश्वास नहीं है। हमें अब पुरानी रस्मों को बदलना

चाहिए। आप सलामत रहें, आपका सवा रुपया भी मेरे लिए सवा लाख के बराबर है।''

''आपको किस चीज की कमी है, लालाजी। पर हमारा दिल रखने के लिए ही कुछ स्वीकार कर लीजिए।''

बाबूजी मुस्कराये, ''नहीं महाराज, आप मुझे मजबूर न करें। यह उसूल की बात है। मैं तो सवा रुपया ही लेकर जाऊँगा। आपका सितारा बुलन्द रहे ! आपकी बेटी हमारे घर आयेगी, तो साक्षात् लक्ष्मी विराजेगी !''

मंगलसेन के लिए चुप रहना असम्भव हो रहा था। हुमककर बोला, ''एक बार कह जो दिया जी कि हम सवा रुपया ही लेंगे। आप बार-बार तंग क्यों करते हैं?''

बेटी के पिता हँस दिये और पास खड़े अपने किसी सम्बन्धी के कान में बोले, ''लडके के चाचा हैं, दूर के। घर में टिके हुए हैं। लालाजी ने आसरा दे रखा है।''

आखिर समधी अन्दर से एक थाल ले आये, जिस पर लाल रंग का रेशमी रूमाल बिछा था और बाबूजी के सामने रख दिया। बाबूजी ने रूमाल उठाया, तो नीचे चाँदी के थाल में चाँदी की तीन चमचम करती कटोरियाँ रखी थीं, एक में केसर, दूसरी में रांगला धागा, तीसरी में एक चमकता चाँदी का रुपया और चमकती चवन्नी। इसके अलावा तीन कटोरियों में तीन छोटे-छोटे चाँदी के चम्मच रखे थे।

''आपने आखिर अपनी ही बात की,'' बाबूजी ने हँसकर कहा, ''मैं तो केवल सवा रुपया लेने आया था...'' मगर थाल स्वीकार कर लिया और मन-ही-मन कटोरियों, थाल और चम्मचों का मूल्य आँकने लगे।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ छज्जे पर खड़ी थीं जब दोनों भाई सड़क पर आते दिखायी दिये। मंगलसेन के कन्धे पर थाल था, लाल रंग के रूमाल से ढ़ँका हुआ और आगे-आगे बाबूजी चले आ रहे थे।

वीरजी अब भी अपने कमरे में थे और पलंग पर लेटे किसी नावेल के पन्नों में अपने मन को लगाने का विफल प्रयास कर रहे थे। उनका माथा थका हुआ था, मगर हृदय धूमिल भावनाओं से उद्वेलित होने लगा था। क्या प्रभा मेरे लिए भी कोई सन्देश भेजेगी? सवा रुपये में सगाई डलवाने

के बारे में वह क्या सोचती होगी? मन-ही-मन तो जरूर मेरे आदर्शों को सराहती होगी। मैंने एक गरीब आदमी को अपनी सगाई डलवाने के लिए भेजा। इससे अधिक प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे आदर्शों का क्या हो सकता है?

''लाख-लाख बधाइयाँ, भौजाईजी !'' घर में कदम रखते ही मंगलसेन ने आवाज लगायी।

मनोरमा और उसकी सहेलियाँ भागती हुई जंगले पर आ गयीं। बाबूजी गम्भीर मुद्रा बनाये, आँगन में आये और छड़ी कोने में रखकर अपने कमरे में चले गये।

मनोरमा भागती हुई नीचे गयी और झपटकर थाल चाचा मंगलसेन के हाथ से छीन लिया।

''कैसी पगली है ! दो मिनट इन्तजार नहीं कर सकती।''

''वाह जी, वाह!'' मनोरमा ने हँसकर कहा, ''बाबूजी की पगड़ी पहन ली तो बाबूजी ही बन बैठे हैं ! लाइये, मुझे दीजिए। आपका काम पूरा हो गया।''

माँजी की दोनों बहनें जो इस बीच आ गयी थीं, माँजी से गले मिल-मिलकर बधाई देने लगीं। आवाज सुनकर वीरजी भी जंगले पर आ खड़े हुए और नीचे आँगन का दृश्य देखने लगे। थाल पर रखे लाल रूमाल को देखते ही उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। सहसा ही वह ससुराल की चीजों से गहरा लगाव महसूस करने लगे। इस रूमाल को जरूर प्रभा ने अपने हाथ से छुआ होगा। उनका जी चाहा कि रूमाल को हाथ में लेकर चूम लें। इस भेंट को देखकर उनका मन प्रभा से मिलने के लिए बेताब होने लगा।

माँजी ने थाल पर से रूमाल उठाया। चमकती कटोरियाँ, चमकता थाल, बीच में रखे चम्मच। वीरजी को महसूस हुआ, जैसे प्रभा ने अपने गोरे-गोरे हाथों से इन चीजों को करीने से सजाकर रखा होगा।

''पानी पिलाओ, सन्तू'', चाचा मंगलसेन ने आँगन में कुर्सी पर बैठते हुए, टाँग के ऊपर टाँग रखकर, सन्तू को आवाज लगायी।

इतने में माँजी को याद आयी, ''तीन कटोरियाँ और दो चम्मच? यह क्या हिसाब हुआ? क्या तीन चम्मच नहीं दिये समधियों ने?'' फिर बाबूजी के कमरे की ओर मुँह करके बोली, ''अजी सुनते हो! तुम भी कैसे हो, आज के दिन भी कोई अन्दर जा बैठता है?''

''क्या है?'' बाबूजी ने अन्दर से ही पूछा।

''कुछ बताओ तो सही, समधियों ने क्या कुछ दिया है?''

''बस, थाली में जो कुछ है वही दिया है, तेरे बेटे ने मना जो कर दिया था।''

''क्या तीन कटोरियाँ थीं और दो चम्मच थे?''

''नहीं तो, चम्मच भी तीन थे।''

''चम्मच तो यहाँ सिर्फ दो रखे हैं।''

''नहीं-नहीं, ध्यान से देखो, जरूर तीन होंगे। मंगलसेन से पूछो, वही थाल उठाकर लाया था।''

''मंगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है?''

मंगलसेन सन्तू को सगाई का ब्योरा दे रहा था। ''समधी हमारे सामने हाथ बाँधे यों खड़े थे, जैसे नौकर हों। लड़की बड़ी सुशील है, बड़ी सलीके वाली, बी.ए. पास है, सीना-पिरोना भी जानती है...''

''मंगलसेनजी, तीसरा चम्मच कहाँ है?''

''कौन-सा चम्मच? वहीं थाल में होगा।'' मंगलसेन ने लापरवाही से जवाब दिया।

''थाल में तो नहीं है।''

''तो उन्होंने दो ही चम्मच दिये होंगे। बाबूजी ने थाल लिया था।''

''हमें बेवकूफ बना रहे हो, मंगलसेनजी, तुम्हारे भाई कह रहे हैं तीन चम्मच थे!''

इतने में बाबूजी की गरज सुनायी दी, ''इसीलिए मेरे साथ गये थे कि चम्मच गवाँ आओगे? कुछ नहीं तो पाँच-पाँच रुपये का एक-एक चम्मच होगा।''

मंगलसेन ने उसी लापरवाही से कुरसी पर से उठकर कहा, ''मैं अभी जाकर पूछ आता हूँ। इसमें क्या है? हो सकता है, उन्होंने दो ही चम्मच रखे हों।''

''वहाँ कहाँ जाओगे? बताओ चम्मच कहाँ है? सारा वक्त तो थाल पर रूमाल रखा रहा।''

''बाबूजी, थाल तो आपने लिया था, आपने चम्मच गिने नहीं थे?''

''मेरे साथ चालाकी करता है? बदजात! बता तीसरा चम्मच कहाँ है?''

माँजी चम्मच खो जाने पर विचलित हो उठी थीं। बहनों की ओर घूमकर बोलीं, ''गिनी-चुनी तो समधियों ने चीजें दी हैं, उनमें से भी अगर कुछ खो जाय, तो बुरा तो आखिर लगता ही है!''

''कैसा ढीठ आदमी है, सुन रहा है और कुछ बोलता नहीं!'' बाबूजी ने गरजकर कहा।

चम्मच खो जाने पर अचानक वीरजी को बेहद गुस्सा आ गया। प्रभा ने चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँचा ही नहीं। प्रभा के प्रेम की पहली निशानी ही खो गयी। वीरजी सहसा आवेश में आ गये। वीरजी ने आव देखा न ताव, मंगलसेन के पास जाकर उसे दोनों कन्धों से पकड़कर झिंझोड़ दिया।

''आपको इसीलिए भेजा था कि आप चीजें गँवा आयें?''

सभी चुप हो गये। सकता-सा छा गया। वीरजी खिन्न-से महसूस करने लगे कि मुझसे यह क्या भूल हो गयी और झेंपकर वापस जाने लगे।

''तुम बीच में मत पड़ो, बेटा! अगर चम्मच खो गया है तो तुम्हारी बला से! सबका धर्म अपने-अपने साथ है। एक चम्मच से कोई अमीर नहीं बन जायेगा।''

''जेब तो देखो इसकी।'' बाबूजी ने गरजकर कहा।

मौसियाँ झेंप गयीं और पीछे हट गयीं। पर मनोरमा से न रहा गया। झट आगे बढ़कर वह जेब देखने लगी। रसोईघर की दहलीज पर सन्तू हाथ में पानी का गिलास उठाये रुक गया और मंगलसेन की ओर देखने लगा। चाचा मंगलसेन खड़ा कभी एक का मुँह देख रहा था, कभी दूसरे का। वह कुछ कहना चाहता था, मगर मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था।

एक जेब में से मैला-सा रूमाल निकला, फिर बीड़ियों की गड्डी, माचिस, छोटा-सा पेन्सिल का टुकड़ा।

''इस जेब में तो नहीं है।'' मनोरमा बोली और दूसरी जेब देखने लगी। मनोरमा एक-एक चीज निकालती और अपनी सहेलियों को दिखा-दिखाकर हँसती।

दायीं जेब में कुछ खनका। मनोरमा चिल्ला उठी, ''कुछ खनका है, इसी जेब में है, चोर पकड़ा गया! तुमने सुना, मालती?''

जेब में टूटा हुआ चाकू रखा था, जो चाबियों के गुच्छे से लगकर खनका था।

''छोड़ दो मनोरमा। जाने दो, सबका धर्म अपने-अपने साथ है। आपसे चम्मच अच्छा नहीं है, मंगलसेनजी, लेकिन यह सगाई की चीज थी।''

मंगलसेन की साँस फूलने लगी और टाँगें काँपने लगीं, लेकिन मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था।

''दोनों कान खोलकर सुन ले, मंगलसेन!'' बाबूजी ने गरजकर कहा, ''मैं तेरे से पाँच रुपये चम्मच के ले लूँगा, इसमें मैं कोई लिहाज नहीं करूँगा।''

मंगलसेन खड़े-खड़े गिर पडा।

''बधाई, बहनजी!'' नीचे आँगन में से तीन-चार स्त्रियों की आवाज एक साथ आ गयी।

मंगलसेन गिरा भी अजीब ढंग से। धम्म से जमीन पर जो पड़ा तो उकड़ूँ हो गया, और पगड़ी उतरकर गले में आ गयी। मनोरमा अपनी हँसी रोके न रोक सकी।

''देखो जी, कुछ तो खयाल करो। गली-मुहल्ला सुनता होगा। इतनी रुखाई से भी कोई बोलता है।'' माँजी ने कहा, फिर घबराकर सन्तू से कहने लगी, ''इधर आओ सन्तू, और इन्हें छज्जे पर लिटा आओ।''

वीरजी फिर खिन्न-सा अनुभव करते हुए अपने कमरे में चले गये। मैंने जल्दबाजी की, मुझे बीच में नहीं पड़ना चाहिए था। इन्होंने चम्मच कहाँ चुराया होगा, जरूर कहीं गिर गया होगा।

बाबूजी नीचे अपने कमरे में चले गये। शीघ्र ही घर में ढोलक बजने की आवाज आने लगी। मनोरमा और उसकी सहेलियाँ आँगन में कालीन बिछवाकर बैठ गयीं। ढोलक की आवाज सुनकर पड़ोसिनें घर में बधाई देने आने लगीं।

ऐन उसी वक्त गलीवाले दरवाजे के पास एक लड़का आ खड़ा हुआ। संकोचवश वह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि अन्दर जाये या वहीं खड़ा रहे। मनोरमा ने देखते ही पहचान लिया कि प्रभा का भाई, वीरजी

का साला है। भागी हुई उसके पास जा पहुँची और शरारत से उसके सिर पर हाथ फेरने लगी।

"आओ, बेटाजी, अन्दर आओ, तुम यहाँ पड़ोस में रहते हो न?"

"नहीं, मैं प्रभा का भाई हूँ।"

"मिठाई खाओगे?" मनोरमा ने फिर शरारत से कहा और हँसने लगी।

लड़का सकुचा गया।

"नहीं, मैं तो यह देने आया हूँ," उसने कहा और जाकेट की जेब में से एक चमकता, सफेद चम्मच निकाला और मनोरमा के हाथ में देकर उन्हीं कदमों वापस लौट गया।

"हाय, चम्मच मिल गया! माँजी चम्मच मिल गया !"

पर माँजी सम्बन्धियों से घिरी खड़ी थीं। मनोरमा रुक गयी और माँ से नजरें मिलाने की कोशिश करते हुए, हाथ ऊँचा करके चम्मच हिलाने लगी। चम्मच को कभी नाक पर रखती, कभी हवा में हिलाती, कभी ऊँचा फेंककर हाथ में पकड़ती, मगर माँजी कुछ समझ ही नहीं रही थीं...

छज्जे पर सन्तू ने मंगलसेन को खाट पर लिटाया और मुँह पर पानी का छींटा देते हुए बोला, "तुम शर्त जीत गये। बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपये नकद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा।"

कठिन शब्दार्थ :

खाट = चारपाई; तर्जनी = अँगूठे के पास की उँगली; झुरझुरी = कँपकँपी; लरजिश = काँपना; ताक = आला; तुनकना = रूठना; पालागन = चरण छूना; झेंपना = शरमाना; भींचना = होंठ दबा लेना; नुक्कड़ = मकान, गली आदि का मोड़; दुत्कारना =फटकारना; हुलास = आनंद; रूसवा = रूठना; धूमिल = धुँधलापन; उद्वेलित होना = उत्तेजित होना; जंगला = चौखट; सलीका = अच्छा व्यवहार; विचलित होना = घबरा जाना; झिंझोड़ना = हिलाना; लिहाज़ = इज्ज़त करना।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) चाचा मंगलसेन चिलम थामे क्या देख रहा था?
२) घर का पुराना नौकर कौन था?
३) सन्तू की पीठ पर क्या पड़ी?
४) किसका स्वप्न सचमुच साकार हो उठा?
५) लड़की की पढ़ाई कहाँ तक हुई थी?
६) बाबूजी के सामने कितनी चाँदी की कटोरियाँ रखी हुई थीं?
७) वीरजी की बहन का नाम क्या है?
८) प्रभा की सगाई किनके साथ हुई?
९) एक चम्मच की कीमत कितनी मानी गई?
१०) प्रभा का भाई वीरजी के घर क्या देने आया था?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) वीरजी के परिवार का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
२) मंगलसेन को अपनी हैसियत पर क्यों नाज़ था?
३) संतू का परिचय दीजिए।
४) समधियों के घर मंगलसेन की आवभगत कैसे हुई?
५) बाबूजी सगाई में केवल सवा रुपए ही क्यों लेना चाहते थे?
६) समधी अंदर से थाल में क्या-क्या ले कर आए?
७) चम्मच खो जाने पर वीरजी की क्या प्रतिक्रिया हुई?
८) 'खून का रिश्ता' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।

* * * * * *

४. शीत लहर

– डॉ.जयप्रकाश कर्दम

लेखक परिचय :

हिन्दी साहित्य के वर्तमान कथाकारों में डॉ. जयप्रकाश कर्दम का विशेष स्थान है। आपका जन्म ५ जुलाई १९५८ ई. में ग्राम इंदरगढ़ी, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश में हुआ। आप एक प्रतिभासंपन्न दलित साहित्यकार हैं। आपकी साहित्यिक कृतियाँ बहुचर्चित हैं जिनमें 'तलाश' (कहानी संग्रह), 'करुणा', 'छप्पर' (उपन्यास); 'गूँगा नहीं था मैं', 'तिनका-तिनका आग', 'बस्तियों से बाहर' (काव्य संग्रह) आदि प्रमुख हैं।

प्रस्तुत कहानी में शीतलहर के प्रकोप से त्रस्त आश्रयविहीन लोगों का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। इसमें एक ओर फटेहाल, नंग-अधनंगे स्त्री-पुरुष और बच्चों के शीतलहर में ठिठुरने का सजीव चित्रण है तो वहीं दूसरी ओर ऐसी मानसिकता वाले लोग हैं जो 'जेन्टरी' की बातें कर चन्द्रप्रकाश को अपने ही फ्लैट में बेघर लोगों को आश्रय देने से मना करते हैं। चन्द्रप्रकाश चाहते हुए भी मन मसोस कर रह जाता है। इस कथा में बेरोजगारी जैसी ज्वलंत समस्या पर भी प्रकाश डाला गया है।

गरीबी और फटेहाली से रात-दिन संघर्ष करते हुए लोगों के प्रति चन्द्रप्रकाश की संवेदना और छात्रों में दयापूर्ण भावना को विकसित करने हेतु इस पाठ का चयन किया गया है।

फ्लैट का कब्जा मिलने के बाद से द्वारका जाना चन्द्रप्रकाश की एक नियमित ड्यूटी सी हो गई थी। प्रत्येक माह कम से कम एक बार वह द्वारका अवश्य जाता था। कभी-कभी जरूरी होने पर एक से अधिक बार भी चला जाता था। उसका फ्लैट एक सोसाइटी में है। फ्लैट खरीदने के लिए उसने बैंक से ऋण लिया था, जिसकी भारी किस्त उसको चुकानी पड़ती थी। एक वेतनभोगी सरकारी अधिकारी होने के कारण वेतन का एक बड़ा हिस्सा बैंक ऋण की किस्त चुकाने में खर्च हो जाने के कारण उसका हाथ तंग रहने लगा था। आर्थिक तंगी से उबरने के लिए वह प्राय: सोचता था कि फ्लैट को किराए पर उठा दे, किन्तु कई कारणों से वह फ्लैट को किराए पर नहीं उठा पा रहा था। इसमें सबसे बड़ा कारण था द्वारका टाऊनशिप में बहुत कम लोगों की रिहाइश। हालाँकि बहुत से जरूरतमंद लोग अपने फ्लैटों में आकर रहने लगे थे। कुछ किराएदार भी आकर रह रहे थे। किन्तु फ्लैटों की संख्या की तुलना में लोगों की रिहाइश बहुत कम थी।

चन्द्रप्रकाश का फ्लैट एक ग्रुप हाऊसिंग सोसाइटी में था। सोसाइटी के अधिकांश सदस्य केन्द्र सरकार के अधिकारी और कर्मचारी थे जिनमें से अधिकांश सरकारी आवासों में रह रहे थे। कुछ के अपने मकान थे। सोसाइटी के बहुत से सदस्य ऐसे भी थे जो सेवानिवृत्त हो चुके थे और सेटेल्ड हो चुके अपने बच्चों के साथ रहते थे। जिन सदस्यों के पास अपना कोई मकान या सरकारी आवास नहीं था केवल वे ही सोसाइटी में रहने के लिए अभी तक आए थे। यही वजह थी कि फ्लैटों का कब्जा लिए एक साल से ऊपर बीत जाने के बाद भी बहुत कम लोग ही सोसाइटी में रहने के लिए आए थे। चन्द्रप्रकाश के पास भी लक्ष्मीबाई नगर में चार कमरों का सरकारी आवास था। लक्ष्मीबाई नगर उसके ऑफिस के बहुत पास और दिल्ली के केंद्र में था। अपना फ्लैट हो जाने के उपरान्त भी इस सरकारी आवास को छोड़कर दिल्ली के एक छोर पर द्वारका में रहने के लिए जाने को वह इच्छुक नहीं था। चन्द्रप्रकाश का पूरा मन था कि सेवा-निवृत्त होने तक वह लक्ष्मीबाई नगर के इस मकान में ही रहेगा। इतने सुविधाजनक स्थान को छोड़कर द्वारका के सूनेपन में जाने का उसे कोई औचित्य दिखाई नहीं देता था। कम-से-कम द्वारका से केंद्रीय सचिवालय तक मैट्रो रेल शुरू होने से पहले वह कतई द्वारका जाने के पक्ष

के पक्ष में नहीं था।

सोसाइटी के अधिकांश फ्लैट खाली पड़े थे। लेकिन, चाहे किसी फ्लैट में कोई रहता हो अथवा खाली पड़ा हो, सोसाइटी सभी फ्लैट मालिकों से प्रतिमाह एक हजार रुपए रख-रखाव का खर्चा लेती थी। चन्द्रप्रकाश को भी हर महीने सोसाइटी को रख-रखाव खर्च देने के लिए द्वारका जाना होता था। जब भी वह सोसाइटी जाता, लगे हाथों चौकीदार से इस बात का जायजा लेना नहीं भूलता था कि सोसाइटी में अब कितने लोग आ गए हैं तथा किराए का क्या रेट चल रहा है। इससे उसको यह जोड़-घटा करने में आसानी हो जाती थी कि यदि फ्लैट किराए पर उठ जाए तो उससे कितने रुपए मासिक की आमदनी शुरू हो जाएगी यानी आर्थिक तंगी से कितनी राहत मिल जाएगी। राहत के बारे में सोचना ही अपने आप में काफी राहत देने वाला होता है। इसलिए जब भी वह सोसाइटी जाता था काफी राहत का अनुभव करता था। शायद यह एक प्रमुख कारण रहा हो कि कभी-कभी रख-रखाव खर्च देने के अलावा भी किसी छुट्टी के दिन वह द्वारका जाकर सोसाइटी हो आता था। जब-जब भी वह सोसाइटी जाता फ्लैट का ताला खोलकर उसे अन्दर से अच्छी तरह देखकर जरूर आता था। इससे उसे अपने अन्दर एक सुख और शकुन का अनुभव होता था। कभी-कभी चन्द्रप्रकाश की पत्नी भी उसके साथ चली जाती थी।

जनवरी का पहला रविवार था। चन्द्रप्रकाश अपनी पत्नी के साथ मारुति कार में बैठ द्वारका जा रहा था। बाहर कड़ाके की ठण्ड थी, साथ में शरीर के भीतर से पार हो जाने वाली तेज हवा चल रही थी। कई दिन से सूरज नहीं निकला था। इससे दिन में तापमान पन्द्रह डिग्री सेल्सियस से ऊपर नहीं जा रहा था। रात में पारा चार डिग्री सेल्सियस तक नीचे जा रहा था। कई साल के बाद दिल्ली में इतनी तेज ठण्ड पड़ी थी। समूचा उत्तरी भारत शीत लहर की चपेट में था। बिना समुचित गर्म कपड़ों के घर से बाहर निकलना मौत को दावत देना था। अनेक लोग इस शीत लहर का शिकार हो चुके थे। अकेले दिल्ली में ही दर्जनों लोगों की मौत हो चुकी थी। शीत लहर के प्रकोप का मुकाबला करने के लिए सरकार ने जहाँ फुटपाथ पर सोने वाले या दूसरे बेघर लोगों के लिए जगह-जगह पर अलाव जलाने की व्यवस्था की थी वहीं कुछ धनी लोगों,

स्वयंसेवी संस्थाओं और राजनेताओं द्वारा बेघर-गरीब लोगों को ऊनी वस्त्र और कम्बल बाँटे जा रहे थे। सरकार द्वारा सभी स्कूलों की छुट्टी कर दी गई थी।

लक्ष्मीबाई नगर से द्वारका तक रास्ते में कई जगहों पर रेड लाइटों, चौराहों, पुलों के पास नंगे-अधनंगे स्त्री-पुरुष और बच्चे शीतलहर से काँपते-ठिठुरते दिखाई दिए। लोगों की यह दयनीय हालत देख चन्द्रप्रकाश का मन द्रवित हो उठा। उसने बराबर की सीट पर बैठी अपनी पत्नी से कहा, ' पूनम, देख रही हो इन लोगों को। इतनी कड़ाके की ठण्ड पड़ रही है और इन लोगों के पास न गर्म कपड़े हैं, न इस शीत लहर से बचने के लिए कोई शेल्टर।'

चन्द्रप्रकाश की पत्नी ने बन्द खिड़की के शीशे के पार उन लोगों की ओर देखा और सहानुभूति के स्वर में बोली, 'सरकार ने खोले तो थे कुछ वर्ष पहले रैन बसेरे। क्या हुआ उन रैन बसेरों का? वे रैन बसेरे ऐसे ही बेघर लोगों के लिए तो थे।'

सरकारी व्यवस्थाएँ कैसी होती हैं तुम जानती तो हो। रैन बसेरों में भी वे ही लोग रात गुजार सकते हैं जो वहाँ के संचालकों को सुविधा शुल्क देने में समर्थ होते हैं। इन लोगों के पास न खाने को है न पहनने को, कहाँ से देंगे ये लोग सुविधा शुल्क। इन लोगों के लिए नहीं हैं ये रैन बसेरे।' कहने के साथ वह एक क्षण रुका और फिर धीरे से बुदबुदाया, 'क्या जिन्दगी है इन लोगों की... ।'

'अपनी ऐसी जिन्दगी के लिए ये लोग खुद भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। यदि ये लोग मेहनत से कमाएँ तो इस तरह यहाँ फुटपाथ पर भूखे-नंगे क्यों पड़े रहें।' उसकी पत्नी ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। लेकिन वह अपनी पत्नी के तर्क से सहमत नहीं हुआ। उसने अपनी राय दी, 'बात तो तुम्हारी ठीक है, पर इन लोगों को काम मिलेगा कहाँ? एक तो वैसे ही आजकल कहीं काम नहीं है। बेरोजगारी सुरसा के मुँह की तरह बढ़ती जा रही है। यदि कहीं पर काम मिलता भी है तो जान-पहचान से ही। इनको कौन जानता-पहचानता है। ये किसी भी बाजार में किसी भी चौराहे पर जाकर खड़े हो जाएँ, किसी भी फैक्टरी-कारखाने में चले जाएँ, इन्हें कोई काम नहीं देगा। सब दुत्कार कर भगा देंगे।'

चन्द्रप्रकाश की पत्नी ने इस बार भी अपने पूर्व कथन का ही

समर्थन किया, 'ये लोग खुद भी कहाँ कमाना चाहते हैं। बिना कमाए इनका पेट भर जाता है तो फिर ये क्यों कमाएँ।'

लेकिन चन्द्रप्रकाश ने प्रतिकार किया। उसने कहा, 'तुम्हारा सोचना ठीक नहीं है पूनम! प्रत्येक व्यक्ति सम्मान के साथ जीना चाहता है। भीख माँगना किसी भी व्यक्ति के लिए अपमानजनक होता है। एक रुपया-आठ आने के लिए एक व्यक्ति दूसरे के सामने कितना गिड़गिड़ाता है और कितनी घृणा और दुत्कार सहता है। ज़िल्लत का यह काम विवशता में ही करना पड़ता है इन लोगों को। यदि इनको काम मिल जाए तो ये भीख बिल्कुल नहीं माँगेंगे और तब ये लोग इतनी भयंकर शीतलहर में बिना छत और कपड़ों के इस तरह फुटपाथ पर नहीं पड़े रहेंगे।'

सोसाइटी का गेट आ गया था। गाड़ी के साथ-साथ चन्द्रप्रकाश और उसकी पत्नी के बीच चल रहे संवाद में भी ब्रेक लग गया था। बेसमेन्ट में बने पार्किंग में अपने लिए निर्धारित स्थान पर गाड़ी खड़ी कर वे लोग दूसरी मंजिल पर स्थित अपने फ्लैट में गए। फ्लैट का दरवाजा एक बड़े कमरे में खुलता था जो ड्राईंग-कम-डाइनिंग-रूम के रूप में इस्तेमाल के लिए था। बाईं ओर एक छोटा-सा सर्वेन्ट रूम था और उसके साथ जुड़े लेट्रिन-बाथरुम। सर्वेन्ट रूम के ठीक साथ में स्टोर रूम था। ड्राईंग रूम पार करने के बाद आगे तीन बड़े-बड़े कमरे थे। सब कमरों के साथ अलग-अलग लेट्रिन-बाथरूम थे। साथ में एक अच्छी बड़ी रसोई थी। पूरी तरह धूप और हवादार प्रत्येक कमरे के साथ एक छोटी बालकोनी थी। खिड़की, दरवाजे, पुताई, पेन्ट, वुडवर्क सब काम हो चुका था। बिजली-पानी के कनेक्शन भी लगे हुए थे। फ्लैट पूरी तरह से रहने के लिए तैयार था, लेकिन खाली पड़ा रहने के कारण खिड़की-दरवाजों पर धूल की हल्की पर्त-सी जम गई थी। चारों ओर से बन्द रहने की वजह से फ्लैट में गन्दी हवा फैली हुई थी जो घुटन पैदा कर रही थी। चन्द्रप्रकाश ने गन्दी हवा बाहर निकालने के लिए सारे खिड़की-दरवाजे खोल दिए। गन्दी हवा के साथ-साथ एक कमरे में से दो कबूतर भी अपने पंख फड़फड़ाते हुए बाहर निकले।

फ्लैट का पूरी तरह एक मुआइना करने के बाद चन्द्रप्रकाश ने 'खिड़की-दरवाजों पर कितनी धूल जमी है' यह जानने के लिए अपनी एक

अँगुली एक खिड़की पर रगड़ी। ढेर सारी धूल उसकी अँगुली पर चिपक गई। अँगुली पर जमी धूल को अपनी पत्नी को दिखाते हुए वह बोला, 'देखो कितनी गन्दगी है। न रहने से मकान कितना बेतरतीब और गन्दा हो जाता है।'

उसकी पत्नी ने सहमति में सिर हिलाते हुए धीरे-से कहा, 'हाँ, सो तो है।' और फिर जैसे कुछ याद आया हो, क्षण भर विराम के बाद बोली, 'कहा तो है तुमसे कितनी ही बार कि इसे किराए पर उठा दो। दो पैसे की आमदनी भी होगी और फ्लैट भी साफ-शुद्ध रहेगा।'

'बात तो तुम्हारी ठीक है, पर दें किसको? कई लोगों को बोल चुका हूँ। सोसाइटी के सेक्रेटरी और चौकीदार से भी कहा है कि कोई किराएदार टकराए तो बताना, पर कोई किराएदार मिलता ही नहीं। अभी यहाँ अधिक डेवलप नहीं हुआ है न, इसलिए लोग अभी इधर आने में हिचक रहे हैं।' चन्द्रप्रकाश ने वस्तुस्थिति समझायी।

उसकी पत्नी खामोश हो गई थी। बराबर वाले ब्लॉक में एक फ्लैट में काम चल रहा था, वह बालकोनी में आकर उधर देखने लगी। चन्द्रप्रकाश भी बालकोनी में चला आया और वह भी उस ओर देखने लगा था। लेकिन सर्द हवा के प्रहारों ने अधिक समय तक उन्हें बालकोनी में खड़े नहीं रहने दिया और 'चलो पूनम, अन्दर चलो, बहुत खतरनाक हवा है' कहते हुए वह अपनी पत्नी के साथ बालकोनी छोड़कर कमरे के अन्दर आ गया और हवा से बचने के लिए दरवाजा बन्द कर दिया।

थोड़ी देर फ्लैट में बिताने के बाद वे लोग फ्लैट से बाहर आ गए। दरवाजा लॉक करते समय चन्द्रप्रकाश ने देखा कबूतरों का वह जोड़ा जो फ्लैट के अन्दर से उड़कर बाहर आ गया था, इस समय दरवाजे के ऊपर बनी छोटी-सी एक्जहॉस्ट खिड़की पर बैठा फ्लैट के अन्दर घुसने का प्रयास कर रहा था। उसने अपनी पत्नी का ध्यान उस ओर आकृष्ट किया, 'देखो, आदमियों के रहने के लिए घर नहीं हैं, और यहाँ इतने बड़े फ्लैट में कबूतर राज कर रहे हैं।'

उसकी पत्नी ने कबूतरों की ओर देखा और धीरे से 'हूँ...ऊँ...' कहकर सहमति में अपना सिर हिलाया।

बेघर लोगों का ध्यान आते ही चन्द्रप्रकाश का ध्यान अपनी सोसाइटी के पास खुले आसमान के नीचे रह रहे लोगों की ओर चला

गया। वह सोचने लगा, 'इतने सारे फ्लैट खाली पड़े हैं और इन लोगों के पास इस भयंकर शीत लहर में भी सिर छिपाने के लिए कोई ठिकाना नहीं है। यदि इनको भी सिर छिपाने के लिए कोई ठौर मिल जाए तो...।' उसका मन करुणा से भर उठा और उसके मन में यह विचार उभरा, 'ठण्ड से मरने वाले लोग ये ही तो होते होंगे जिनके पास इस ठण्ड से बचने का कोई उपाय नहीं है। यदि कुछ दिन के लिए लोग अपने फ्लैट इन लोगों को रहने के लिए दे दें तो क्या हो जाएगा? इससे कुछ लोग जरूर ठण्ड से मरने से बच सकेंगे। इस समय इन फ्लैटों में कबूतर रहते हैं, आदमी रह लेंगे तो क्या बुरा है?'

मस्तिष्क में इस विचार के आते ही वह अपनी पत्नी की ओर मुँह करके बोला, 'पूनम!'

'हूँ।' उसकी पत्नी ने उसकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

'हमारा फ्लैट खाली पड़ा है। इसमें कबूतर हगते-मूतते हैं और उधर सामने देखो।' कहते हुए उसने हाथ के संकेत से उसका ध्यान सोसाइटी से कुछ दूर सड़क के किनारे रह रहे लोगों की ओर आकृष्ट किया। 'ये बेघर लोग ठण्ड से मरे जा रहे हैं। यदि कुछ दिन के लिए हम अपने फ्लैट में इन लोगों को रहने दें तो क्या बुरा है।' उसने अपने मन की बात कही।

उसकी पत्नी ने विस्मय से उसकी ओर देखा और बेरुखे से स्वर में बोली, 'दे दो इन लोगों को रहने के लिए, लेकिन फिर भूल जाना इस फ्लैट को।'

'क्या मतलब?' वह अपनी पत्नी के शब्दों का आशय नहीं समझ पाया।

उसकी पत्नी ने खोलकर समझाया, 'एक बार फ्लैट में आने के बाद तुम इनको बाहर नहीं निकाल पाओगे। किराए पर भी किसी जान-पहचान वाले व्यक्ति को या उसके माध्यम से ही क्यों देना चाहते हो, इसीलिए न कि उससे फ्लैट खाली कराने में दिक्कत नहीं होगी। अनजान आदमी का क्या भरोसा है कि वह कैसा निकल जाए। जबरदस्ती तो किसी को निकालने से रहे।... और यदि निकल भी जाए तो फ्लैट का ऐसा सत्यानाश कर देंगे कि इसे रहने लायक नहीं छोड़ेंगे।'

चन्द्रप्रकाश अपनी पत्नी की बात से सहमत नहीं हुआ। उसने

अपना तर्क दिया, 'तुम जिनकी बात कर रही हो वे दूसरे लोग होते हैं। ये लोग इस तरह के नहीं हैं। इन बेचारों की क्या हैसियत है कि किसी का मकान खाली नहीं करें। बल्कि ये लोग तो इतना अहसान मानेंगे तुम्हारा कि तुम्हारे लिए कुछ भी करने को तैयार रहेंगे।'

'तुमको विश्वास है इन पर?' उसकी पत्नी ने उसकी आँखों में अपनी आँखें गड़ाते हुए पूछा।

'हाँ, मुझे विश्वास है।' शब्द ही नहीं उसकी बॉडी लेंग्वेज भी बता रही थी कि चन्द्रप्रकाश इस बात के प्रति पूरी तरह आश्वस्त था कि वे लोग ऐसा काम नहीं कर सकते।

उसकी पत्नी ने ज्यादा तर्क करना उचित नहीं समझा और यह कहकर अपनी बात को विराम दे दिया, 'तो फिर दे दो इनको रहने के लिए। लेकिन पहले सोसाइटी के पदाधिकारियों से पूछ लो, क्या वे लोग इसके लिए अॅलाऊ करेंगे।... ये लोग इतनी गन्दगी फैलाएँगे कि सारी सोसाइटी को गन्दा करके रख देंगे। सोसाइटी बिल्कुल अॅलाऊ नहीं करेगी इनको रहने के लिए।'

उसकी पत्नी की बात सही निकली। सोसाइटी के सेक्रेटरी से चन्द्रप्रकाश ने इस बारे में पूछा तो उसने यह कहकर स्पष्ट मना कर दिया, 'आप अच्छी तरह जानते हैं कि सोसाइटी के सदस्य एक खास जेन्टरी के लोग हैं। इन सड़क के लोगों की क्या जेन्टरी है? सोसाइटी का कोई सदस्य इनको बर्दाश्त नहीं करेगा। आपकी भावनाओं की हम कद्र करते हैं लेकिन हमें केवल आपकी नहीं, सोसाइटी के सारे सदस्यों की भावनाओं को देखना है। इसलिए इन लोगों को सोसाइटी के अन्दर रहने की इजाज़त नहीं दी जा सकती।'

सेक्रेटरी का यह जवाब चन्द्रप्रकाश को बहुत अमानवीय लगा था। उसके मन में आया कि सेक्रेटरी से यह कहे, 'मैं अपने फ्लैट में खुद रहूँ चाहे जिसको रहने को दूँ, तुम्हें क्या?' किन्तु वह जानता था कि सोसाइटी वाले अपने ढंग से ही चलेंगे और उसकी बात को तवज्जो नहीं देंगे। इसलिए उसने बहस करना उचित नहीं समझा और चुप लगा गया।

जिस समय घर लौटने के लिए चन्द्रप्रकाश सोसाइटी के गेट से बाहर निकला दिन के दो बज गए थे। लेकिन घनी धुन्ध छाई रहने के कारण सुबह से सूर्य के दर्शन नहीं हुए थे। इसने वातावरण को और सर्द

बना दिया था। वह सोसाइटी से फर्लांग भर आगे निकला होगा कि उसकी नजर रेड लाईट के पास सड़क के किनारे बैठे पाँच-छः बच्चों पर गई। बिना गर्म कपड़े पहने लगभग चार से दस साल तक की उम्र के ये सारे बच्चे एक फटी-पुरानी साड़ी ओढ़े बैठे थे। साड़ी को उन्होंने चारों ओर से ढाँपा हुआ था लेकिन उनकी टाँगें साड़ी के अन्दर नहीं समा पा रही थीं। वे बार-बार अपनी नंगी टाँगों को साड़ी के अन्दर समेटने की कोशिश कर रहे थे लेकिन सफल नहीं हो पा रहे थे।

संयोग से लाल बत्ती होने पर कार रुकी तो उसने देखा बच्चों की उदास आँखें आशा और उत्सुकता से उनकी ओर देख रही थीं। हरी बत्ती होने में अभी समय था, वह भी बच्चों की ओर देखने लगा। इन बच्चों को देखते-देखते उसे अपने दो वर्षीय बेटे का ख्याल आया और वह सोचने लगा, 'ठण्ड से बचने के लिए कितने सारे कपड़े पहनाते हैं हम उसे लेकिन फिर भी उसे कभी जुकाम, कभी खाँसी, कुछ न कुछ लगा रहता है, जबकि इन बच्चों के पास तो...। इतनी भयंकर सर्दी का मुकाबला कैसे करेंगे ये बच्चे?' उसे लगा बच्चे उससे मदद माँग रहे हैं। उसका मन हुआ कि इन बच्चों की कुछ मदद करे। उसने बच्चों को सौ रुपये देने चाहे और पर्स निकालने के लिए हाथ कोट की जेब में डाला लेकिन फिर यह सोचकर रुक गया 'सौ रुपये देने से भी इनका क्या भला होगा। सौ रुपए इनको सर्दी से नहीं बचा सकते। फिर इनकी मदद करूँ तो कैसे?'

उसे अपनी विवशता पर क्षोभ हुआ। अपना क्षोभ उसने सोसाइटी के पदाधिकारियों पर उतारा 'यदि सोसाइटी वाले अॅलाऊ कर दें तो इसमें क्या हर्ज है। कम से कम शीत लहर के कुछ दिन तो ये लोग वहाँ बिता सकते हैं।'

बत्ती हरी हो गई थी। चन्द्रप्रकाश ने अपनी गाड़ी स्टार्ट की और एक्सिलेटर पर पैर रखते हुए बच्चों की ओर देखा। उम्मीद में चमकती उनकी आँखें अभी भी उसकी ओर टिकी थीं। गाड़ी आगे बढ़ाते हुए उसने खिड़की का शीशा नीचा कर बच्चों की ओर हाथ उठाकर धीरे-से बॉय-बॉय किया। बच्चों ने उत्साह और उमंग से एक-दूसरे की ओर देखा। उनकी आँखों में खुशी की रेखाएँ चमक उठी थीं। उसने गौर से बच्चों की ओर देखा और सोचा, 'केवल एक बॉय-बॉय करने से कैसे इन बच्चों के चेहरे खुशी से खिल उठते हैं। एक बार फिर उसने हाथ के साथ सिर हिलाकर उनको बॉय-बॉय किया और एक्सिलेटर पर पैर का दबाव बढ़ा

दिया। गाड़ी रेड लाइट पार करके आगे निकल आई थी लेकिन चन्द्रप्रकाश ने शीशे में से देखा, शीत लहर के कारण बच्चे अपने हाथ साड़ी में से बाहर नहीं निकाल रहे थे लेकिन उनकी आँखें अभी भी उनका पीछा कर रही थीं। शीत लहर से बचने के उपक्रम में वे एक-दूसरे के भीतर को घुसे जा रहे थे। उसे भी अपने अन्दर से शीत लहर गुजरती महसूस हुई।

कठिन शब्दार्थ :

आवास = निवास; राहत = सुख, आनंद; अलाव = जाड़े में तापने के लिए लगाई हुई आग; विवशता = लाचारी, मजबूरी; ज़िल्लत = अनादर, अपमान; तवज्जो देना = ध्यान देना; क्षोभ = दु:ख; सुरसा = एक राक्षसी का नाम।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) चंद्रप्रकाश का फ्लैट कहाँ था?

२) सोसाइटी सभी फ्लैट मालिकों से प्रतिमाह रख-रखाव का कितना खर्च लेती थी?

३) लक्ष्मीबाई नगर से द्वारका तक के रास्ते में लेखक किन्हें देखते हैं?

४) चंद्रप्रकाश की पत्नी का नाम क्या है?

५) चंद्रप्रकाश के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति कैसे जीना चाहता है?

६) भीख माँगना किसी भी व्यक्ति के लिए क्या है?

७) दरवाजा लॉक करते समय चन्द्रप्रकाश ने किसका जोड़ा देखा?

८) चंद्रप्रकाश की ओर बच्चे किस नज़र से देख रहे थे?

९) चंद्रप्रकाश ने बच्चों को कितने रुपये देने चाहे?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) चंद्रप्रकाश सोसाइटी के फ्लैट में क्यों नहीं रहते थे?

२) दिल्ली में शीत लहर के प्रकोप का वर्णन कीजिए।

३) 'क्या जिन्दगी है इन लोगों की...।' चंद्रप्रकाश के इस उद्‌गार पर टिप्पणी कीजिए।

४) चंद्रप्रकाश अपने फ्लैट में बेघर लोगों को क्यों नहीं रख पाया?

५) चंद्रप्रकाश का चरित्र-चित्रण कीजिए।

६) चंद्रप्रकाश को अपनी विवशता पर क्यों क्षोभ हुआ?

* * * * * *

५. सिलिया

— डॉ.सुशीला टाकभौरे

लेखिका परिचय :

सुशीला टाकभौरे जी का जन्म ४ मार्च १९५४ ई. में गाँव बानापुर, होशंगाबाद, मध्यप्रदेश में हुआ। आपकी माता पन्नाबाई तथा पिता रामप्रसाद घावरी थे। आपने माता की प्रेरणा तथा अपने अथक परिश्रम के बल पर नए कीर्तिमान स्थापित किए। आपकी कहानियाँ यथार्थ परक हैं। 'टूटता वहम', 'अनुभूति के घेरे', 'संघर्ष' (कहानी संग्रह), 'स्वाती बूँद और खारे मोती', 'यह तुम भी जानो', 'तुमने उसे कब पहचाना', 'हमारे हिस्से का सूरज' (काव्य संग्रह), तथा 'रंग और व्यंग्य', 'नंगा सत्य' (नाटक) हैं। अनेक विश्वविद्यालयों में आपके साहित्य पर शोधकार्य चल रहा है। आपको अनेक संस्थाओं से सम्मानित किया गया है। वर्तमान में आप सेठ केसरीमल पोरवाल कॉलेज, कामठी (नागपुर), महाराष्ट्र में सेवारत हैं।

''जहाँ चाह होती है, वहाँ राह खुद बनने लगती है।'' इसको चरितार्थ करते हुए कहानी की प्रमुख पात्र सिलिया समाज में अपने लिए न सिर्फ स्थान बनाती है बल्कि सम्मान की अधिकारिणी भी बनती है। वह अपने साथ घटी हुई घटनाओं को ध्यान में रख, 'झाड़ू' के स्थान पर 'कलम' को महत्व देकर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर अपनी जाति के लिए ही नहीं अपितु पूरे समाज के लिए प्रेरणास्त्रोत बन जाती है।

स्त्री शिक्षा के महत्व को प्रतिपादित करने तथा अपने दृढ़ संकल्प को साकार करने की प्रेरणा लेने हेतु इस कहानी का चयन किया गया है।

नानी उसे प्यार से सिलिया ही कहती थी। बड़े भैया ने अपनी शिक्षा प्राप्त सूझ-बूझ के साथ उसका नाम शैलजा रखा था। माँ-पिताजी की वह सिल्लो रानी थी।

सन् १९७० की बात है। सिलिया ग्यारहवीं कक्षा में पढ़ रही थी। साँवली-सलौनी, मासूम-भोली, सरल व गंभीर स्वभाव वाली सिलिया। स्वस्थ देह के कारण वह अपनी उम्र से कुछ ज्यादा ही लगती थी। लोग उसकी शादी के विषय में चर्चा करने लगे थे। उसी साल हिन्दी अखबार 'नई दुनिया' में एक विज्ञापन छपा – 'शूद्रवर्ण की वधू चाहिए।' मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल के जाने माने युवा नेता सेठीजी, एक अछूत कन्या के साथ विवाह करके, समाज के सामने एक आदर्श रखना चाहते थे। उनकी केवल एक ही शर्त थी कि लड़की कम से कम मैट्रिक हो।

गाँव के बहुत से पढ़े लिखों ने, ब्राह्मणों, बनियों ने सिलिया की माँ को सलाह दी – ''सिलिया की माँ, तुम्हारी सिलिया मैट्रिक पढ़ रही है, बहुत होशियार है, समझदार भी है। तुम उसका फोटो, परिचय, नाम, पता लिखकर भेज दो। तुम्हारी बेटी के भाग्य खुल जायेंगे – राज करेगी। सेठी जी बहुत बड़े आदमी हैं। तुम्हारी बेटी की किस्मत अच्छी है...''

सिलिया की माँ अधिक जिरह में न पड़कर केवल इतना कहती – ''हाँ भैय्या जी'', ''हाँ दादाजी, सोच विचार करेंगे।''

सिलिया के साथ पढ़ने वाली सहेलियाँ उसे छेड़ती, हँसती। मगर सिलिया इस बात का कोई सिर-पैर नहीं समझ पाती। उसे बड़ा अजीब लगता – ''क्या कभी ऐसा भी हो सकता है...?''

इस विषय में घर में भी चर्चा होती। रिश्तेदार और पड़ोसी यही कहते – ''फोटो भिजवा दो, नाम पता लिखकर भेज दो।'' तब सिलिया की माँ अपने वालों को अच्छी तरह समझा कर कहती – ''नहीं भैय्या, यह सब बड़े लोगों के चोचले हैं। आज समाज को और सबको दिखाने के लिये हमारी बेटी से शादी कर लेंगे और कल छोड़ दिया तो...?'' हम गरीब लोग उनका क्या कर लेंगे। अपनी इज़्ज़त अपने समाज में रहकर भी हो सकती है। उनकी दिखावे की चार दिन की इज़्ज़त हमें नहीं चाहिए। हमारी बेटी उनके परिवार और समाज में वैसा मान-सम्मान नहीं पा सकेगी। न ही फिर हमारे घर की ही रह जायेगी। न इधर की न उधर की।

हम से भी दूर कर दी जायेगी। हम तो नहीं देंगे अपनी बेटी को। हमीं उसको खूब पढ़ायेंगे-लिखायेंगे। उसकी किस्मत में होगा तो इससे ज्यादा मान-सम्मान वह खुद पा लेगी... अपनी किस्मत वह खुद बना लेगी...।''

माँ की बातों को सुन सिलिया के मन में आत्मविश्वास जाग उठा। सिलिया को वह दिन आज भी याद है जब – बारह साल की सिलिया डरी सहमी सी एक कोने में खड़ी थी। मामी अपनी बेटी मालती को बाल पकड़कर मार रही थी, साथ ही जोर-जोर से चिल्लाकर कह रही थी। ''...क्यों री, तुझे नहीं मालूम, अपन वा कुएँ से पानी भर सके हैं? क्यों चढ़ी तू कुएँ पर, क्यों रस्सी बाल्टी को हाथ लगाई...'' और वाक्य पूरा होने के साथ ही दो-चार झापड़ घूँसे और बरस पड़ते मालती पर। बेचारी मालती दोनों बाहों में अपना मुँह छुपाये चीख-चीख कर रो रही थी, साथ ही कहती जाती थी – ''... ओ बाई, ओ माँ, माफ कर दे, अब ऐसा कभी नहीं करूँगी...''

मामी का गुस्सा और मालती का रोना देखकर सिलिया स्वयं को अपराधी महसूस कर रही थी। वह अपनी सफ़ाई में बहुत कुछ कहना चाहती थी मगर इस घमासान प्रकरण में उसकी आवाज़ धीमी पड़ जाती थी। मामी को थोड़ा शांत होता देख सिलिया ने साहस बटोरा – ''मामी, मैंने तो मालती को मना किया था मगर वह मानी ही नहीं। कहने लगी – जीजी प्यास लगी है, पानी पियेंगे। मैंने कहा कोई देख लेगा, तो कहने लगी अरे, गरमी की भरी दोपहरी में कौन देखने आयेगा। बाजार से यहाँ तक दौड़ते आये हैं, प्यास के मारे दम निकल रहा है ...''

मामी बिफर कर बोली – ''घर कितना दूर था, मर तो न जाती। मर ही जाती तो अच्छा रहता। इसके कारण उसने कितनी बातें सुनाई..'' मामी सिर पर हाथ रख कर बैठ गयी और बहुत देर तक मालती को कोसती रही।

सिलिया अपने पैरों के पास की ज़मीन देखने लगी। सच बात थी, गाडरी मुहल्ला के जिस कुएँ से मालती ने पानी निकालकर पिया था, वहाँ से बीस-पच्चीस कदम पर ही मामा-मामी का घर है। जिसकी रस्सी बाल्टी और कुएँ को छू कर मालती ने अपवित्र कर दिया था – वह औरत बकरियों के रेवड़ पालती है। गाडरी मुहल्ले के अधिकांश घरों में भेड़ों,

बकरियों के पालने-बेचने का व्यवसाय किया जाता है। गाडरी मुहल्ले से लगकर ही आठ-दस घर भंगी जाति के हैं। सिलिया के मामा-मामी यहीं रहते हैं।

मालती सिलिया की हम उम्र है मगर हौंसला और निडरता उसमें बहुत ज्यादा है। जिस काम को नहीं करने की नसीहत उसे दी जाये, उसी काम को करके वह खतरे का सामना करना चाहती। सिलिया गंभीर और सीधे सरल स्वभाव की आज्ञाकारी लड़की है।

मालती को रोते देख उसे खराब जरूर लगा, मगर वह इस बात को समझ रही थी कि इसमें मालती की ही गलती है – ''जब हमें पता है कि हम अछूत दूसरों के कुएँ से पानी नहीं भर सकते तो फिर वहाँ जाना ही क्यों?''

वह बकरी वाली, कैसी चिल्ला रही थी – ''अरी बाई, दौड़ो री ... जा मोड़ी को समझाओ, देखो तो, मना करने के बाद भी कुएँ से पानी भर रही है ... हमारी रस्सी बाल्टी खराब कर दई जाने ...''

और मामी को डाँटते हुए उसने कितनी बातें सुनाई थी – ''क्यों बाई, जई सिखाओ हो तुम अपने बच्चों को? एक दिन हमारे मूँड पर मूतने की कह देना ... तुम्हारे नजदीक रहते हैं तो क्या हमारा धरम नहीं है? ... का मरजी है तुम्हारी? साफ साफ कह दो...''

मामी गिड़गिड़ा रही थी – ''बाई, माफ कर दो,इतनी बड़ी हो गयी है मगर अकल नहीं आई उसको। कितना तो मारूँ हूँ फिर भी नहीं समझे...'' और मामी वहीं से मालती को मारती हुई घर लायी थी।

''बेचारी मालती'' सिलिया सोच रही थी – ''भगवान उसे जल्दी ही अकल दे देंगे तब वह ऐसे काम नहीं किया करेगी।''

इसके एक साल पहले की बात है। पाँचवी कक्षा के टूर्नामिन्ट हो रहे थे। खेल कूद की स्पर्धाओं में सिलिया ने भी भाग लिया था। अपने सहपाठियों और कक्षा शिक्षक के साथ वह भी तहसील के स्कूल में गयी थी। आसपास अनेक गाँवों के विद्यार्थी टूर्नामिन्ट में भाग लेने आये थे। दूसरे दिन सिलिया की स्पर्धाएँ आरम्भ में ही होने से जल्दी खत्म हो गयीं। वह लम्बी दौड़ और कुर्सीदौड़ स्पर्धाओं में प्रथम आई थी। वह अपनी खो-खो टीम की कॅप्टन थी और उनकी खो-खो टीम भी उसी के कारण जीती थी। खेलकूद के शिक्षक गोकुलप्रसाद ठाकुर जी ने सबके सामने

उसकी बहुत तारीफ की थी, साथ ही उससे पूछा था –

''यहाँ तहसील में तुम्हारे रिश्तेदार रहते होंगे – तुम वहाँ जाना चाहती हो? हमें पता बता दो, हम तुम्हें वहाँ पहुँचा देंगे।''

सिलिया मामा-मामी के घर का पता जानती थी मगर शिक्षकों के समक्ष उनका पता बताने में उसे संकोच हो रहा था, शर्म के कारण वह कुछ नहीं बता पायी। उसने संकोच के साथ कहा – ''मुझे यहाँ किसी का भी पता मालूम नहीं है।'' तब सर ने उसकी सहेली हेमलता से कहा था – ''हेमलता, तुम इसे भी अपनी बहन के घर ले जाओ। शाम को सभी एक साथ गाँव लौटेंगे, तब तक वहाँ आराम कर लेगी।''

हेमलता ठाकुर सिलिया के साथ ही पाँचवी कक्षा में पढ़ती थी। उसकी बहन की ससुराल तहसील में थी। उनका घर तहसील के स्कूल के पास ही था। हेमलता सिलिया को लेकर अपनी बड़ी बहन के घर आई। बहन की सास ने हँसकर बातें की, हेमलता को पानी का गिलास दिया। दूसरा गिलास हाथ में लेकर सिलिया के बारे में पूछने लगी ''कौन है...? किसकी बेटी है...? कौन ठाकुर है....?''

सिलिया कुछ कह न सकी। हेमलता ने कहा – ''मौसीजी मेरी सहेली है, हमारे साथ ही आई है।'' बहन की सास उसे गौर से देखते हुए विचार करती रही।

हेमलता ने बताया – ''इसके मामा-मामी यहाँ रहते हैं मगर इसे उनका पता मालूम नहीं है।''

मौसीजी ने हेमलता से सिलिया की जाति पूछी। हेमलता ने धीरे से बता दिया। जाति का नाम सुनकर मौसीजी चौंक गई। फिर स्वयं को संयत करके सिलिया से पूछा ''गाडरी मुहल्ला के पास रहते हैं...?''

तब मौसीजी ने अतिरिक्त प्रेम जताते हुए कहा – ''कोई बात नहीं बेटी, हमारा भैया तुम्हें साइकिल पे बिठाके वहाँ छोड़ आयेगा।'' ऐसा कहते हुए मौसीजी पानी का गिलास लेकर अंदर चली गईं।

मौसी जानती थी कि उसे प्यास लगी है फिर भी जाति का नाम सुनकर वह पानी का गिलास वापस ले गई। सिलिया को प्यास लगी थी। मगर वह मौसीजी से पानी माँगने की हिम्मत नहीं कर सकी। पानी माँगने पर क्या वह देने से इंकार कर देती? सिलिया को यह प्रश्न साल रहा था।

मौसीजी के बेटे ने उसे गाडरी मुहल्ले के पास छोड़ दिया था।

सिलिया रास्ते भर कुढ़ती आ रही थी। ''आखिर उसे प्यास लगी थी तो उसने मौसीजी से पानी माँग कर क्यों नहीं पिया।'' तभी उसे याद आया – ''मौसी उसकी जाति के नाम से कैसी चौंक गई थी।'' मौसी के चेहरे का भाव उसके आँखों में तैर गया।

''कितने मुखौटे चढ़ाकर रखते हैं लोग?''

सिलिया को देखकर मामा-मामी, मालती और सभी लोग बहुत खुश हुए थे। उससे बड़े उल्लास के साथ मिले थे मगर सिलिया हेमलता की मौसीजी से मिली उमस को भूल नहीं पा रही थी। शाम के समय मामा ने उसे स्कूल पहुँचा दिया था।

बरसों पुरानी घटनाएँ मन मस्तिष्क में बार-बार कौंधकर उथल-पुथल मचा देती हैं। सिलिया का स्वभाव चिन्तनशील बनता जा रहा था। परम्परा से अलग, नये-नये विचार उसके मन में आने लगे थे। वह सोचती – ''आखिर मालती ने ऐसा कौनसा जुर्म किया था? प्यास लगी, पानी निकालकर पी लिया।''

फिर वह सोचती – ''हेमलता की मौसी से वह पानी क्यों नहीं ले सकी थी?''

और अब यह विज्ञापन-उच्च वर्ण का नवयुवक, सामाजिक कार्यकर्ता, जनता का नेता जातिभेद मिटाने के लिए शूद्रवर्ण की अछूत कन्या से विवाह ... समाज के सामने एक आदर्श रखने की बात ...। यह सेठी जी महाशय का ढोंग-आडम्बर है या सचमुच वे समाज की परम्परा को बदलनेवाले, सामाजिक बदलाव की क्रांति लानेवाले महापुरुष हैं?

उसके मन में यह विचार भी आया – ''अगर उसे अपने जीवन में ऐसे किसी महापुरुष का साथ मिला तो वह अपने जाति समुदाय के लिए बहुत कुछ कर सकेगी।''

लेकिन, ''क्या कभी ऐसा हो सकता है?'' यह प्रश्न उसके मन से हटता नहीं था। साथ ही माँ के यथार्थपूर्ण अनुभवी कथन पर भी उसे विश्वास था। मध्यप्रदेश की ज़मीन में सन् १९७० तक ऐसी फसल नहीं उगी थी जो एक छोटे गाँव की अछूत मानी जानेवाली भोली-भाली लड़की के मन में अपना ऐसा विश्वास जगा सके।

और फिर दूसरों की दया पर सम्मान...? अपने निजत्व को खोकर दूसरों की शतरंज का मोहरा बनकर रह जाना ... बैसाखियों पर

चलते हुए जीना ...? नहीं, कभी नहीं...। हम क्या इतने भी लाचार हैं, आत्मसम्मान रहित हैं? हमारा अपना भी तो कुछ अहंभाव है। उन्हें हमारी जरूरत है, हमको उनकी जरूरत नहीं। हम उनके भरोसे क्यों रहें ... अपना सम्मान हम खुद बढ़ायेंगे...।

सिलिया ने मन ही मन दृढ़ संकल्प किया – ''मैं बहुत आगे तक पढूँगी, पढ़ती रहूँगी। उन सभी परम्पराओं के मूल कारणों का पता लगाऊँगी, जिन्होंने हमें समाज में अछूत बना दिया है। मैं विद्या, बुद्धि और विवेक से अपने आपको ऊँचा साबित करके रहूँगी। किसी के सामने झुकूँगी नहीं। न ही कभी अपना अपमान सहन करूँगी।''

सिलिया मन ही मन इन बातों का चिंतन मनन करने लगी। एक दिन अपनी माँ और नानी के सामने उसने बड़े दृढ़ निश्चय के साथ कहा – ''मैं शादी नहीं करूँगी। मुझे बहुत आगे तक पढ़ना है।''

माँ और नानी अपनी बेटी को ध्यान से देखती रह गयी। नानी खुश होकर बोली – ''शादी हो या न हो, मगर तू खूब पढ़ाई कर और इतनी बड़ी बन जा कि – बड़ी जात के बड़े लोगों के बराबर सब तेरा सम्मान करने लगें।'' माँ मन ही मन मुस्करा रही थी। सोच रही थी – ''मेरी सिल्लो रानी को मैं खूब पढ़ाऊँगी ...।''

'अछूत कन्या के साथ विवाह' के विज्ञापन के साथ सिलिया की आँखों में वह घटना बार-बार तैर जाती थी, जब प्यास से उसका कंठ सूख रहा था और उसकी ओर बढ़ता हुआ पानी का गिलास एकाएक केवल इसलिये वापिस हो गया कि वह अछूत है। हिन्दू होते हुए भी हिन्दू नहीं है। प्यास ने उसे उतना विचलित नहीं किया था जितना इस अपमान जनक व्यवहार ने – ''कौन जात है?'' पूछा गया यह सवाल उसके कानों में निरंतर हथौड़े मारता रहता।

कुत्ता-बिल्ली उस घर में बेरोकटोक आ जा रहे थे पर उसे दहलीज पर ही हाथ के इशारे से रोक दिया गया था। इस व्यवस्था को मिटाने के लिए क्या कुछ भी नहीं हो सकता? क्या जीवन भर ऐसे ही जातिगत भेदभाव की प्रताड़ना के दुख भोगने पडेंगे? कदम-कदम पर अपमान के घूँट पीने पडेंगे? यह सब सोचकर उसके मस्तिष्क की नसें फड़कने लगती थीं।

सिलिया सोचने लगी थी – ''कैसे बदला जा सकता है इस

हालात को? कैसे हम अपनी इज्ज़त और बराबरी का दर्जा पा सकते हैं? और 'झाड़ू'? ... कम्बख्त यह तो जानवरों से बदतर जीवन कायम रखने का हमारे लिये दुष्चक्र है। किसने थमा दी हमारी जाति के हाथों में ये झाड़ू? इस समाज में पैदा होना - नहीं होना तो हमारे हाथ में नहीं था परन्तु इस अपमानजनक गुलामी के चिन्ह को छोड़ना तो हमारे हाथ में है। यह हम कर सकते हैं...''

वह दृढ़ता से सोचने लगी - ''हाँ, यह हम जरूर कर सकते हैं।''

उसकी आँखों में अब एक चमक थी। हीनता और दीनता के भाव तो न जाने कबके जा चुके थे? वह मन ही मन सोच रही थी ''झाड़ू नहीं कलम। हाँ, कलम ही उसके समाज का भाग्य बदलेगी।'' उसने सोचा – ''वह खूब पढ़ेगी। सम्मान के उच्च शिखर पर पहुँचेगी। वह एक चिनगारी है जो मशाल बनकर अपने समाज की प्रगति के मार्ग को प्रकाशित करेगी।''

सिलिया ने तय किया, वह जीवनभर कोशिश करेगी कि समाज इन सब बातों को समझे, उनके मर्म को जाने। सम्मान और अपमान के भेद को समझे और सही रूप में सम्मान का हकदार बने।

जहाँ चाह होती है, वहाँ राह खुद बनने लगती है। यदि मन में दृढ़ निश्चय हो तो कठिन से कठिन रास्ता भी पार किया जा सकता है। समय बदलता रहता है, लोग उसकी रफ्तार को समझ नहीं पाते हैं। जो इस बात को समझ लेता है वह समय के साथ चलते हुए अपनी मंजिल पा लेता है। सिलिया समय के साथ कदम से कदम मिला कर चलने लगी। उसने अपनी मंजिल को जान लिया। वह देश के कोने-कोने में जाकर सामाजिक जागृति का कार्य करने लगी।

जब हम सिर्फ अपने लिए सोचते हैं तब अपने दायरे तक ही सीमित रहते हैं। जिनका सोच बड़ा होता है वे जात-बिरादरी, समाज और देश की सीमा से भी ऊपर उठ जाते हैं। सिलिया अपनी बिरादरी के साथ उन सबके लिए सोचने लगी थी जो सामाजिक विषमता, छुआछूत भेदभाव, अन्याय, अत्याचार और शोषण से पीड़ित हैं, जो अधिकारों से वंचित हैं, ज्ञान से वंचित हैं, जो अपने इतिहास, अपने वर्तमान और अपने भविष्य से अनजान हैं।

लगभग बीस वर्ष के बाद... देश की राजधानी के सबसे प्रख्यात

सभागृह में एक प्रतिष्ठित साहित्य संस्था द्वारा एक महिला को सम्मानित किया जा रहा है। दलित मुक्ति आन्दोलन की सक्रिय कार्यकर्ता, विदुषी ... समाजसेवी ... कवयित्री ... साहित्य जगत की प्रसिद्ध लेखिका आदि अनेक विशेषणों का प्रयोग उसके लिए किया जा रहा है...

मंत्री महोदय ने शाल, सम्मानपत्र, सम्मान स्मृति चिन्ह और पुष्पमाला से उस महिला का, तालियों की गड़गड़ाहट के बीच स्वागत किया। स्वागत के उत्तर में महिला ने अपना भाषण आरंभ किया...

सुंदर सवर्ण एक युवती तत्परता के साथ उसके पीछे तश्तरी में शीतल जल का गिलास आदरभाव से लिये खड़ी है। भाषण देते हुए बीच में दो घूँट पानी पीकर महिला पुरानी स्मृतियों में क्षणभर के लिए खो गयी। फिर उसने गर्व के साथ अपने आसपास देखा, सामने बैठे विशाल जनसमूह को देखा और परिवर्तनवादी विचारों से परिपूर्ण अपना भाषण जारी रखा...

वह महिला कोई और नहीं सिलिया थी।

कठिन शब्दार्थ :

जिरह = प्रश्न; चोचले = नखरे; रेवड़ = भेड़ -बकरी का झुंड; मोड़ी = लड़की; जई = यही; मूँड = सिर; सालना = खटकना, दुख पहुँचना; मुखौटे = नकाब, नकली चेहरा; कौंधना = चमकना; ढोंग = पाखंड; बैसाखी = लंगड़ों की लाठी।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) नानी शैलजा को किस नाम से पुकारती थी?

२) सन् १९७० में सिलिया कौन-सी कक्षा में पढ़ रही थी?

३) किनकी बातों को सुनकर सिलिया के मन में आत्मविश्वास जाग उठा?

४) मालती ने किस मुहल्ले के कुएँ से पानी निकालकर पिया था?

५) सिलिया किस दौड़ में प्रथम आयी थी?

६) हेमलता ठाकुर सिलिया के साथ किस कक्षा में पढ़ती थी?
७) जहाँ चाह होती है वहाँ क्या बनने लगती है?
८) प्रतिष्ठित साहित्य संस्था ने किसको सम्मानित किया?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) हिन्दी अखबार 'नई दुनिया' में छपे विज्ञापन के बारे में लिखिए।
२) सिलिया की माँ ने गाँव वालों की सलाह को क्यों नहीं माना?
३) सिलिया के स्वभाव का परिचय दीजिए।
४) हेमलता की मौसी ने सिलिया के साथ कैसा बर्ताव किया?
५) सिलिया ने मन ही मन क्या दृढ़ संकल्प किया?
६) सिलिया ने अपने संकल्प को किस प्रकार साकार किया?

* * * * * *

६. दोपहर का भोजन

— अमरकांत

लेखक परिचय :

हिन्दी के प्रख्यात कथा-शिल्पी अमरकांत का जन्म १९२५ ई. में बलिया (उ.प्र.) में हुआ। प्रबुद्ध और सुलझे हुए कहानीकारों में आपका नाम शीर्ष स्थान पर है। आपने 'मनोरमा' पाक्षिक पत्रिका का संपादन करते हुए अपनी सूझ-बूझ और कथा-चेतना का परिचय दिया। आपको २००९ ई. में ज्ञानपीठ पुरस्कार से विभूषित किया गया। आप किसी वाद या फार्मूले के तहत अपनी कहानी गढ़ते नहीं। आपकी अधिकांश कहानियाँ सही अर्थ में 'रचना' हैं।

आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं — 'जिन्दगी और जोंक', 'देश के लोग', 'मौत का नगर', 'सूखा पत्ता', 'दीवार' और 'आँगन' आदि।

एक निर्धन परिवार के रहन-सहन का यथार्थ प्रस्तुतीकरण इस कहानी का मूल स्वर है। घर का खर्च चलाना और भोजन तक का नसीब न हो पाना ही प्रस्तुत कहानी के रूप को प्रस्तुत करता है। अमरकांत ने प्रतीकात्मकता का प्रयोग करते हुए निर्धनता के उस पक्ष को उकेरा है जो इस देश की लगभग ८० प्रतिशत जनता के घर-घर में व्याप्त है। बातों-बातों में बहुत सी बातें ऐसी भी यहाँ हो गई हैं कि मन भर भर जाता है। कहानी का अंत बहुत ही मार्मिक है।

मध्यवर्गीय परिवार के संघर्षमय जीवन से साक्षात्कार कराने के उद्देश्य से प्रस्तुत कहानी चयनित है।

सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चूल्हे को बुझा दिया और दोनों घुटनों के बीच सिर रखकर शायद पैर की उँगलियाँ या जमीन पर चलते चींटे-चींटियों को देखने लगी। अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर से उसे प्यास लगी है। वह मतवाले की तरह उठी और गगरे से लोटा-भर पानी लेकर गट-गट चढ़ा गई। खाली पानी उसके कलेजे में लग गया और वह 'हाय राम' कहकर वहीं जमीन पर लेट गई।

आधे घंटे तक वहीं उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में जी आया। वह बैठ गई, आँखों को मल-मलकर इधर-उधर देखा और फिर उसकी दृष्टि ओसारे में अध-टूटे खटोले पर सोए अपने छह वर्षीय लड़के प्रमोद पर जम गई। लड़का नंग-धड़ंग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ साफ दिखाई देती थीं। उसके हाथ-पैर बासी ककड़ियों की तरह सूखे तथा बेजान पड़े थे और उसका पेट हंडिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुख खुला हुआ था और उस पर अनगिनत मक्खियाँ उड़ रही थीं।

वह उठी, बच्चे के मुँह पर अपना एक फटा, गंदा ब्लाउज डाल दिया और एक-आध मिनट सुन्न खड़ी रहने के बाद बाहर दरवाजे पर जाकर किवाड़ की आड़ से गली निहारने लगी। बारह बज चुके थे। धूप अत्यंत तेज थी और कभी एक-दो व्यक्ति सिर पर तौलिया या गमछा रखे हुए या मजबूती से छाता ताने हुए, फुर्ती के साथ लपकते हुए-से गुजर जाते।

दस-पंद्रह मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फैल गई और उसने आसमान तथा कड़ी धूप की ओर चिंता से देखा। एक-दो क्षण बाद उसने सिर को किवाड़ से काफी आगे बढ़ाकर गली के छोर की तरफ निहारा, तो उसका बड़ा लड़का रामचंद्र धीरे-धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसारे की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जाकर खाने के स्थान को जल्दी-जल्दी पानी से लीपने-पोतने लगी। वहाँ पीढ़ा रखकर उसने सिर को दरवाजे की ओर घुमाया ही था कि रामचंद्र ने अंदर कदम रखा।

रामचंद्र आकर धम-से चौकी पर बैठ गया और फिर वहीं बेजान-सा लेट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था, उसके बाल अस्त-

व्यस्त थे और उसके फटे-पुराने जूतों पर गर्द जमी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसके पास आए और वहीं से वह भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका-घुमाकर बेटे को व्यग्रता से निहारती रही। किंतु, लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात भी जब रामचंद्र नहीं उठा, तो वह घबरा गई। पास जाकर पुकारा – 'बड़कू, बड़कू!' लेकिन उसके कुछ उत्तर न देने पर डर गई और लड़के की नाक के पास हाथ रख दिया। साँस ठीक से चल रही थी। फिर सिर पर हाथ रखकर देखा, बुखार नहीं था। हाथ के स्पर्श से रामचंद्र ने आँखें खोलीं। पहले उसने माँ की ओर सुस्त नजरों से देखा, फिर झट-से उठ बैठा। जूते निकालने और नीचे रखे लोटे के जल से हाथ-पैर धोने के बाद वह यंत्र की तरह चौकी पर आकर बैठ गया।

सिद्धेश्वरी ने डरते-डरते पूछा, ''खाना तैयार है। यहीं लगाऊँ क्या?''

रामचंद्र ने उठते हुए प्रश्न किया, ''बाबू जी खा चुके?''

सिद्धेश्वरी ने चौके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, ''आते ही होंगे।''

रामचंद्र पीढ़े पर बैठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष की थी। लंबा, दुबला-पतला, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें तथा होंठों पर झुर्रियाँ।

वह एक स्थानीय दैनिक समाचार पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से प्रूफरीडरी का काम सीखता था। पिछले साल ही उसने इंटर पास किया था।

सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली सामने लाकर रख दी और पास ही बैठकर पंखा करने लगी। रामचंद्र ने खाने की ओर दार्शनिक की भाँति देखा। कुल दो रोटियाँ, भर-कटोरा पनियाई दाल और चने की तली तरकारी।

रामचंद्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा, ''मोहन कहाँ है? बड़ी कड़ी धूप हो रही है।''

मोहन सिद्धेश्वरी का मँझला लड़का था। उम्र अट्ठारह वर्ष थी और वह इस साल हाईस्कूल का प्राइवेट इम्तहान देने की तैयारी कर रहा था। वह न मालूम कब से घर से गायब था और सिद्धेश्वरी को स्वयं पता

नहीं था कि वह कहाँ गया है।

किंतु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और झूठ-मूठ उसने कहा, ''किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है, आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज है और उसकी तबीयत चौबीस घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है। हमेशा उसी की बात करता रहता है।''

रामचंद्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह में रखकर भरा गिलास पानी पी लिया गया, फिर खाने लग गया। वह काफी छोटे-छोटे टुकड़े तोड़कर उन्हें धीरे-धीरे चबा रहा था।

सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटक निहार रही थी। कुछ क्षण बीतने के बाद डरते-डरते उसने पूछा, ''वहाँ कुछ हुआ क्या?''

रामचंद्र ने अपनी बड़ी-बड़ी भावहीन आँखों से अपनी माँ को देखा, फिर नीचा सिर करके कुछ रुखाई से बोला, ''समय आने पर सब ठीक हो जाएगा।''

सिद्धेश्वरी चुप रही। धूप और तेज होती जा रही थी। छोटे आँगन के ऊपर आसमान में बादल में एक-दो टुकड़े पाल की नावों की तरह तैर रहे थे। बाहर की गली से गुजरते हुए एक खड़खड़िया इक्के की आवाज आ रही थी। और खटोले पर सोए बालक की साँस का खर-खर शब्द सुनाई दे रहा था।

रामचंद्र ने अचानक चुप्पी को भंग करते हुए पूछा, ''प्रमोद खा चुका?''

सिद्धेश्वरी ने प्रमोद की ओर देखते हुए उदास स्वर में उत्तर दिया, ''हाँ, खा चुका।''

''रोया तो नहीं था ?''

सिद्धेश्वरी फिर झूठ बोल गई, ''आज तो सचमुच नहीं रोया। वह बड़ा ही होशियार हो गया है। कहता था, बड़का भैया के यहाँ जाऊँगा। ऐसा लड़का...''

पर वह आगे कुछ न बोल सकी, जैसे उसके गले में कुछ अटक गया। कल प्रमोद ने रेवड़ी खाने की जिद पकड़ ली थी और उसके लिए डेढ़ घंटे तक रोने के बाद सोया था।

रामचंद्र ने कुछ आश्चर्य के साथ अपनी माँ की ओर देखा और

फिर सिर नीचा करके कुछ तेजी से खाने लगा।

थाली में जब रोटी का केवल एक टुकड़ा शेष रह गया, तो सिद्धेश्वरी ने उठने का उपक्रम करते हुए प्रश्न किया, ''एक रोटी और लाती हूँ?''

रामचंद्र हाथ से मना करते हुए हड़बड़ाकर बोल पड़ा, ''नहीं-नहीं, जरा भी नहीं। मेरा पेट पहले ही भर चुका है। मैं तो यह भी छोड़नेवाला हूँ। बस, अब नहीं।''

सिद्धेश्वरी ने जिद की, ''अच्छा आधी ही सही।''

रामचंद्र बिगड़ उठा, ''अधिक खिलाकर बीमार डालने की तबीयत है क्या? तुम लोग जरा भी नहीं सोचती हो। बस, अपनी जिद। भूख रहती तो क्या ले नहीं लेता?''

सिद्धेश्वरी जहाँ-की-तहाँ बैठी ही रह गई। रामचंद्र ने थाली में बचे टुकड़े से हाथ खींच लिया और लोटे की ओर देखते हुए कहा, ''पानी लाओ।''

सिद्धेश्वरी लोटा लेकर पानी लेने चली गई। रामचंद्र ने कटोरे को उँगलियों से बजाया, फिर हाथ को थाली में रख दिया। एक-दो क्षण बाद रोटी के टुकड़े को धीरे-से हाथ से उठाकर आँख से निहारा और अंत में इधर-उधर देखने के बाद टुकड़े को मुँह में इस सरलता से रख लिया, जैसे वह भोजन का ग्रास न होकर पान का बीड़ा हो।

मँझला लड़का मोहन आते ही हाथ-पैर धोकर पीढ़े पर बैठ गया। वह कुछ साँवला था और उसकी आँखें छोटी थीं। उसके चेहरे पर चेचक के दाग थे। वह अपने भाई ही की तरह दुबला-पतला था, किंतु उतना लंबा न था। वह उम्र की अपेक्षा कहीं अधिक गंभीर और उदास दिखाई पड़ रहा था।

सिद्धेश्वरी ने उसके सामने थाली रखते हुए प्रश्न किया, ''कहाँ रह गए थे बेटा? भैया पूछ रहा था।''

मोहन ने रोटी के एक बड़े ग्रास को निगलने की कोशिश करते हुए अस्वाभाविक मोटे स्वर में जवाब दिया, ''कहीं तो नहीं गया था। यहीं पर था।''

सिद्धेश्वरी वहीं बैठकर पंखा डुलाती हुई इस तरह बोली, जैसे स्वप्न में बड़बड़ा रही हो, ''बड़का तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रहा था। कह

रहा था, मोहन बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीसों घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।'' यह कहकर उसने अपने मँझले लड़के की ओर इस तरह देखा, जैसे उसने कोई चोरी की हो।

मोहन अपनी माँ की ओर देखकर फीकी हँसी हँस पड़ा और फिर खाने में जुट गया। वह परोसी गई दो रोटियों में से एक रोटी कटोरे की तीन-चौथाई दाल तथा अधिकांश तरकारी साफ कर चुका था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इन दोनों लड़कों से उसे बहुत डर लगता था। अचानक उसकी आँखे भर आईं। वह दूसरी ओर देखने लगी।

थोड़ी देर बाद उसने मोहन की ओर मुँह फेरा, तो लड़का लगभग खाना समाप्त कर चुका था।

सिद्धेश्वरी ने चौंकते हुए पूछा, ''एक रोटी देती हूँ?''

मोहन ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा, फिर सुस्त स्वर में बोला, ''नहीं।''

सिद्धेश्वरी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, ''नहीं बेटा, मेरी कसम, थोड़ी ही ले लो। तुम्हारे भैया ने एक रोटी ली थी।''

मोहन ने अपनी माँ को गौर से देखा, फिर धीरे-धीरे इस तरह उत्तर दिया, जैसे कोई शिक्षक अपने शिष्य को समझाता है, ''नहीं रे, बस, अव्वल तो अब भूख नहीं। फिर रोटियाँ तूने ऐसी बनाई हैं कि खाई नहीं जातीं। न मालूम कैसी लग रही हैं। खैर, अगर तू चाहती ही है, तो कटोरे में थोड़ी दाल दे दे। दाल बड़ी अच्छी बनी है।''

सिद्धेश्वरी से कुछ कहते न बना और उसने कटोरे को दाल से भर दिया।

मोहन कटोरे को मुँह से लगाकर सुड़-सुड़ पी रहा था कि मुंशी चंद्रिका प्रसाद जूतों को खस-खस घसीटते हुए आए और राम का नाम लेकर चौकी पर बैठ गए। सिद्धेश्वरी ने माथे पर साड़ी को कुछ नीचे खिसका लिया और मोहन दाल को एक साँस में पीकर तथा पानी के लोटे को हाथ में लेकर तेजी से बाहर चला गया।

दो रोटियाँ, कटोरा-भर दाल, चने की तली तरकारी। मुंशी चंद्रिका प्रसाद पीढ़े पर पालथी मारकर बैठे, रोटी के एक-एक ग्रास को इस तरह चुभला-चबा रहे थे, जैसे बूढ़ी गाय जुगाली करती है। उनकी उम्र

पैंतालीस वर्ष के लगभग थी, किंतु पचास-पचपन के लगते थे। शरीर का चमड़ा झूलने लगा था, गंजी खोपड़ी आईने की भाँति चमक रही थी। गंदी धोती के ऊपर अपेक्षाकृत कुछ साफ बनियान तार-तार लटक रही थी।

मुंशी जी ने कटोरे को हाथ में लेकर दाल को थोड़ा सुड़कते हुए पूछा, ''बड़का दिखाई नहीं दे रहा?''

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है – जैसे कुछ काट रहा हो। पंखे को जरा और जोर से घुमाती हुई बोली, ''अभी-अभी खाकर काम पर गया है। कह रहा था, कुछ दिनों में नौकरी लग जाएगी। हमेशा, 'बाबू जी, बाबू जी' किए रहता है। बोला, बाबू जी देवता के समान हैं।''

मुंशी जी के चेहरे पर कुछ चमक आई। शरमाते हुए पूछा, ''ऐं, क्या कहता था कि बाबू जी देवता के समान हैं? बड़ा पागल है।''

सिद्धेश्वरी पर जैसे नशा चढ़ गया था। उन्माद की रोगिणी की भाँति बड़बड़ाने लगी, ''पागल नहीं है, बड़ा होशियार है। उस जमाने का कोई महात्मा है। मोहन तो उसकी बड़ी इज्जत करता है। आज कह रहा था कि भैया की शहर में बड़ी इज्जत होती है, पढ़ने-लिखनेवालों में बड़ा आदर होता है और बड़का तो छोटे भाइयों पर जान देता है। दुनिया में वह सुबकुछ सह सकता है, पर यह नहीं देख सकता कि उसके प्रमोद को कुछ हो जाए।''

मुंशी जी दाल लगे हाथ को चाट रहे थे। उन्होंने सामने की ताक की ओर देखते हुए हँसकर कहा, ''बड़का का दिमाग तो खैर काफी तेज है, वैसे लड़कपन में नटखट भी था। हमेशा खेल-कूद में लगा रहता था, लेकिन यह भी बात थी कि जो सबक मैं उसे याद करने को देता था, उसे बर्राक रखता था। असल तो यह कि तीनों लड़के काफी होशियार हैं। प्रमोद को कम समझती हो?'' यह कहकर वह अचानक जोर से हँस पड़े।

मुंशी जी डेढ़ रोटी खा चुकने के बाद एक ग्रास से युद्ध कर रहे थे। कठिनाई होने पर एक गिलास पानी चढ़ा गए। फिर खर-खर खाँसकर खाने लगे।

फिर चुप्पी छा गई। दूर से किसी आटे की चक्की की पुक-पुक आवाज सुनाई दे रही थी और पास की नीम के पेड़ पर बैठा कोई पंडूक लगातार बोल रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह चाहती थी कि सभी चीजें ठीक से पूछ ले। सभी चीजें ठीक से जान ले और दुनिया की हर चीज पर पहले की तरह धड़ल्ले से बात करे। पर उसकी हिम्मत नहीं होती थी। उसके दिल में जाने कैसा भय समाया हुआ था।

अब मुंशी जी इस तरह चुपचाप दुबके हुए खा रहे थे, जैसे पिछले दो दिनों से मौन-व्रत धारण कर रखा हो और उसको कहीं जाकर आज शाम को तोड़नेवाले हों।

सिद्धेश्वरी से जैसे नहीं रहा गया। बोली, ''मालूम होता है, अब बारिश नहीं होगी।''

मुंशी जी ने एक क्षण के लिए इधर-उधर देखा, फिर निर्विकार स्वर में राय दी, ''मक्खियाँ बहुत हो गई हैं।''

सिद्धेश्वरी ने उत्सुकता प्रकट की, ''फूफा जी बीमार हैं, कोई समाचार नहीं आया।''

मुंशी जी ने चने के दानों की ओर इस दिलचस्पी से दृष्टिपात किया, जैसे उनसे बातचीत करनेवाले हों। फिर सूचना दी, ''गंगाशरण बाबू की लड़की की शादी तय हो गई। लड़का एम.ए. पास है।''

सिद्धेश्वरी हठात चुप हो गई। मुंशी जी भी आगे कुछ नहीं बोले। उनका खाना समाप्त हो गया था और वे थाली में बचे-खुचे दानों को बंदर की तरह बीन रहे थे।

सिद्धेश्वरी ने पूछा, ''बड़का की कसम, एक रोटी देती हूँ। अभी बहुत-सी हैं।''

मुंशी जी ने पत्नी की ओर अपराधी के समान तथा रसोई की ओर कनखी से देखा, तत्पश्चात किसी छँटे उस्ताद की भाँति बोले, ''रोटी? रहने दो, पेट काफी भर चुका है। अन्न और नमकीन चीजों से तबीयत ऊब भी गई है। तुमने व्यर्थ में कसम धरा दी। खैर, कसम रखने के लिए ले रहा हूँ। गुड़ होगा क्या?''

सिद्धेश्वरी ने बताया कि हँडिया में थोड़ा-सा गुड़ है।

मुंशी जी ने उत्साह के साथ कहा, ''तो थोड़े गुड़ का ठंडा रस बनाओ, पीऊँगा। तुम्हारी कसम भी रह जाएगी, जायका भी बदल जाएगा, साथ-ही-साथ हाजमा भी दुरुस्त होगा। हाँ, रोटी खाते-खाते नाक में दम आ गया है।'' यह कहकर वे ठहाका मारकर हँस पड़े।

मुंशी जी के निबटने के पश्चात सिद्धेश्वरी उनकी जूठी थाली लेकर चौके की जमीन पर बैठ गई। बटलोई की दाल को कटोरे में उँड़ेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं। छिपुली में थोड़ी-सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खींच लिया। रोटियों की थाली को भी उसने पास खींच लिया। उसमें केवल एक रोटी बची थी। मोटी-भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोए प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लड़के को कुछ देर तक एकटक देखा, फिर रोटी को दो बराबर टुकड़ों में विभाजित कर दिया। एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी थाली में रख लिया। तदुपरांत एक लोटा पानी लेकर खाने बैठ गई। उसने पहला ग्रास मुँह में रखा और तब न मालूम कहाँ से उसकी आँखों से टप-टप आँसू चूने लगे।

सारा घर मक्खियों से भन-भन कर रहा था। आँगन की अलगनी पर एक गंदी साड़ी टँगी थी, जिसमें पैबंद लगे हुए थे। दोनों बड़े लड़कों का कहीं पता नहीं था। बाहर की कोठरी में मुंशी जी औंधे मुँह होकर निश्चिंतता के साथ सो रहे थे, जैसे डेढ़ महीने पूर्व मकान-किराया-नियंत्रण विभाग की क्लर्की से उनकी छँटनी न हुई हो और शाम को उनको काम की तलाश में कहीं जाना न हो...।

कठिन शब्दार्थ :

गगरा = घड़ा; ओसारा = बरामदा; खटोला = खटिया, चारपाई; गर्द = धूल; पीढ़ा = लकड़ी का छोटा आसन; पनियाई = पानी जैसी; चेचक = शीतला रोग; जुगाली = पशुओं का निगले हुए चारे को गले से थोड़ा-थोड़ा निकालकर दाँत से चबाने की क्रिया; अव्वल = प्रथमतः; उन्माद = पागल; बर्राक = पूर्णतः अभ्यस्त; बीनना = चुनना; कनखी = तिरछी नज़र; छटा = धूर्त; छिपुली = छोटी थाली; अलगनी = कपड़े टाँगने की रस्सी।

I) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए :

१) रामचंद्र कितने वर्ष का था?
२) प्रूफरीडरी का काम कौन सीख रहा था?
३) सिद्धेश्वरी के मँझले लड़के का नाम लिखिए।
४) सिद्धेश्वरी के छोटे लड़के की उम्र कितनी थी?
५) मुंशी चंद्रिका प्रसाद कितने साल के लगते थे?
६) किसकी शादी तय हो गई थी?
७) मुंशी जी की तबीयत किससे ऊब गई थी?
८) मुंशी जी की छँटनी किस विभाग से हो गई थी?
९) 'दोपहर का भोजन' कहानी के लेखक कौन हैं?

II) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :

१) सिद्धेश्वरी के परिवार का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
२) बीमार प्रमोद की हालत कैसी थी?
३) रामचंद्र का परिचय दीजिए।
४) मँझले लड़के मोहन के रूप-रंग और स्वभाव के बारे में लिखिए।
५) सिद्धेश्वरी की आँखों से आँसू क्यों टपकने लगे?
६) मुंशी चंद्रिका प्रसाद की लाचारी का वर्णन कीजिए।

* * * * * *

प्रश्न पत्र का ढाँचा

प्रश्न I और II	:	गद्य भाग से	:	25 अंक
प्रश्न III	:	पद्य भाग से	:	20 अंक
प्रश्न IV	:	अपठित भाग से	:	15 अंक
प्रश्न V	:	व्याकरण से	:	25 अंक
प्रश्न VI	:	रचना से	:	15 अंक
			कुल	**100 अंक**

I (अ) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए : (छः प्रश्न) — 6X1=6

(आ) किन्हीं **तीन** प्रश्नों के उत्तर लिखिए (पाँच में से तीन) — 3X3=9

II (अ) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे (चार प्रश्न) — 4X1=4

(आ) ससन्दर्भ स्पष्टीकरण कीजिए (चार में से दो) — 2X3=6

III (अ) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए (छः प्रश्न) (मध्ययुगीन काव्य में से दो तथा आधुनिक कविता में से चार) — 6X1=6

(आ) किन्हीं **दो** प्रश्नों के उत्तर लिखिए (चार में से दो) (मध्ययुगीन काव्य में से एक तथा आधुनिक कविता में से तीन) — 2X3=6

(इ) ससन्दर्भ भाव स्पष्ट कीजिए : — 2X4=8
(मध्ययुगीन काव्य – दो में से एक
आधुनिक कविता – दो में से एक)

IV (अ) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए : (छः प्रश्न) — 6X1=6

(आ) किन्हीं **तीन** प्रश्नों के उत्तर लिखिए (छः में से तीन) — 3X3=9

V	(अ)	वाक्य शुद्ध कीजिए (पाँच वाक्य)	5X1=5
	(आ)	रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए (कारक चिन्ह या उचित शब्द)	5X1=5
	(इ)	मुहावरों को अर्थ के साथ जोड़कर लिखिए :	4X1=4
	(ई)	सूचनानुसार काल बदलिए (तीन वाक्य)	3X1=3
	(उ)	अन्य लिंग रूप लिखिए (दो शब्द)	2X1=2
	(ऊ)	अन्य वचन रूप लिखिए (दो शब्द)	2X1=2
	(ए)	समानार्थक / पर्यायवाची शब्द लिखिए (दो शब्द)	2X1=2
	(ऐ)	विपरीतार्थक / विलोम शब्द लिखिए (दो शब्द)	2X1=2
VI	(अ)	अपठित गद्यांश / अवतरण	5X1=5
	(आ)	पत्रलेखन (दो में से एक)	1X5=5
	(इ)	अनुवाद (कन्नड़/अंग्रेज़ी से हिन्दी में)(पाँच वाक्य)	5X1=5

नमूने का प्रश्न-पत्र

समय : ३ घंटे १५ मिनट | कुल अंक : १००

सूचना : १) सभी प्रश्नों के उत्तर हिन्दी भाषा तथा देवनागरी लिपि में लिखना आवश्यक है।
२) प्रश्नों की क्रमसंख्या लिखना अनिवार्य है।

I) (अ) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए : 6X1=6

१) ठाकुर साहब के बड़े बेटे का नाम क्या था?
२) कुछ लोग आदतन क्या बोलते हैं?
३) महादेवी वर्मा को किसकी पत्तियाँ चुभ रही थीं?
४) पुलिस की कितनी गाडियाँ आयी थीं?
५) 'मूगा टेस्ट' किसे कहते हैं?
६) किसकी कोख में अमूल्य निधियाँ भरी हैं?

(आ) निम्नलिखित प्रश्नों में से किन्हीं **तीन** प्रश्नों के उत्तर लिखिए : 3X3=9

७) त्याग और सेवा के बारे में स्वामी विवेकानंद जी के क्या विचार हैं?
८) अंबेडकर जी के बाल्य जीवन का परिचय दीजिए।
९) निंदा की महिमा का वर्णन कीजिए।
१०) दौड़कर आते हुए उम्मीदवार ने क्या कहा?
११) रमेश ने बेहोशी का अभिनय क्यों किया?

II) (अ) निम्नलिखित वाक्य किसने किससे कहे? 4X1=4

१२) जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है।
१३) वह रही मेरी अम्मा।
१४) 'कहिए, दिल जम गया या बच गया।'
१५) तुम भी खा लेना, गाय को भी खिला देना।

(आ) निम्नलिखित में से किन्हीं **दो** का ससंदर्भ स्पष्टीकरण कीजिए : 2X3=6

१६) ...पंडिताइन चाची के न्यायविधान में न क्षमा का स्थान था न अपील का अधिकार।

१७) पर तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है?

१८) वह आकर्षण है सरल भक्ति का, प्रकृति के वैभव का।

१९) संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है।

III)(अ) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए : 6X1=6

२०) मधुर वचन से क्या मिटता है?

२१) जगत में जन्म लेने के बाद किससे नहीं डरना चाहिए?

२२) सीता की सखियाँ कौन हैं?

२३) कवि बच्चन का जीवन कैसे बीता?

२४) वीर किससे हाथ मिलाता है?

२५) प्रतिभा कहाँ बसती है?

(आ) निम्नलिखित प्रश्नों में से किन्ही **दो** प्रश्नों के उत्तर लिखिए : 2X3=6

२६) मीराबाई की कृष्णभक्ति का वर्णन कीजिए।

२७) इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़नेवाली स्त्री का चित्रण कीजिए।

२८) बच्चन जी ने जग में क्या लुटाया और क्यों?

२९) नारी किस प्रकार से सृष्टि का श्रृंगार है?

(इ) ससंदर्भ भाव स्पष्ट कीजिए : 2X4=8

३०) जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप।
जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ छिमा तहँ आप ॥

अथवा

मानुष हो, तो वही रसखानि बसौ ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पसु हौं, तो कहा बसु मेरो, चरौ नित नंद की धेनु मंझारन॥
पाहन हौं, तो वही गिरि कौ, जो धरयौ कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हौं, बसेरो करौं मिलि कालिंदी-कूल-कदम्ब की डारन॥

३१) मैं न कभी रोई जीवन में
रोता दिखा न यह संसार।
मृदुल प्रेम के ही गिरते हैं,
आँखों से आँसू दो चार॥

अथवा

जन्मों के जीवन मृत्यु मीत! मेरी हारों की मधुर जीत।
झुक रहा तुम्हारे स्वागत में मन का मन शिर का शिर विनीत।

IV) (अ) एक शब्द या वाक्यांश या वाक्य में उत्तर लिखिए : 6X1=6

३२) शराबी के हाथ में कितने रुपये थे?
३३) पाँच वर्ष में युवक की कितनी पत्नियाँ मर गईं?
३४) प्रभा की सगाई किनके साथ हुई?
३५) चन्द्रप्रकाश का फ्लैट कहाँ था?
३६) प्रतिष्ठित साहित्य संस्था ने किसको सम्मानित किया?
३७) 'दोपहर का भोजन' कहानी के लेखक कौन हैं?

(आ) निम्नलिखित प्रश्नों में से किन्हीं **तीन** प्रश्नों के उत्तर लिखिए : 3X3=9

३८) शराबी के जीवन में मधुआ के आने के बाद क्या परिवर्तन आया?
३९) पहली पत्नी की मृत्यु पर युवक किस प्रकार विलाप करने लगा?
४०) 'खून का रिश्ता' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
४१) चन्द्रप्रकाश का चरित्र-चित्रण कीज़िए।
४२) सिलिया ने मन ही मन क्या दृढ़-संकल्प किया?
४३) सिद्धेश्वरी के परिवार का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

V) (अ) वाक्य शुद्ध कीजिए : 5X1=5

४४) क) निंदा का ऐसी ही महिमा है।

ख) आपके बारे में मुझसे कोई भी बुरी नहीं कहता।

ग) सूरदास ने इसीलिए 'निंदा सबद रसाल' कही है।

घ) रोहन ने रोटी खाया।

ङ) कई महाविद्यालय खुला।

(आ) कोष्ठक में दिये गये उचित कारक चिन्हों से रिक्त स्थान भरिए :

(का, में, के, पर, की) 5X1=5

४५) क) उसके सीने .... दर्द उठने लगता है।

ख) इसके साथ ही जोरों ...... पसीना छूटने लगता है।

ग) मितली ...... शिकायत भी हो सकती है।

घ) पास .... डॉक्टर को बुला भेजें।

ङ) किताब को मेज़ .... रख दो।

(इ) निम्नलिखित मुहावरों को अर्थ के साथ जोड़कर लिखिए :

4X1=4

४६)

१. दाँत पीसना	(a) कठोर होना
२. नौ दो ग्यारह होना	(b) भीख माँगना
३. आँचल पसारना	(c) क्रोध करना
४. दिल न पिघलना	(d) भाग जाना

(ई) निम्नलिखित वाक्यों को सूचनानुसार बदलिए : 3X1=3

४७) क) हम प्रतिदिन सबेरे तीन बजे उठते थे।

(वर्तमान काल में बदलिए)

ख) श्याम काम करता है। (भूतकाल में बदलिए)

ग) नेताजी ने भाषण दिया। (भविष्यत्‌काल में बदलिए)

(उ) अन्य लिंग रूप लिखिए : 2X1=2

४८) सम्राट, अध्यापिका

(ऊ) अन्य वचन रूप लिखिए : 2X1=2

४९) आँख, नदी

(ए) समानार्थक शब्द लिखिए : 2X1=2

५०) उल्लास, वृक्ष

(ऐ) विलोम शब्द लिखिए : 2X1=2

५१) वीर, अंधकार

VI)(अ) निम्नलिखित अनुच्छेद पढ़कर उस पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखिए : 5X1=5

५२) १७ वर्ष की आयु में भीमराव का विद्यार्थी जीवन में ही ९ वर्ष की रमाबाई के साथ विवाह हो गया। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भीमराव बंबई के एलफिंस्टन कालेज में दाखिल हो गए। उस समय एक अछूत के लिए यह बहुत अनोखी बात थी। मगर रामजी सूबेदार भीमराव को और पढ़ाने में कठिनाई महसूस करने लगे, तो केलुस्कर गुरुजी भीमराव को बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड जी के पास ले गए। भीमराव ने अपनी विद्वत्ता एवं बुद्धिमत्ता से महाराजा का दिल जीत लिया। महाराजा ने भीमराव की उच्च शिक्षा के लिए रु.२५/- मासिक छात्रवृत्ति स्वीकृत कर दी। समाज की क्रूर जाति-व्यवस्था उन्हें पग-पग पर पीड़ा पहुँचाती रही। वे संस्कृत पढ़ना चाहते थे, मगर अछूत होने के कारण उन्हें संस्कृत भाषा नहीं पढ़ने दी गई। दृढ़ इच्छाशक्ति के धनी भीमराव ने १९१२ में अंग्रेजी और पारसी विषयों के साथ बंबई विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा पास की थी। वे बी.ए. की परीक्षा पास करने वाले पहले महार थे।

प्रश्न :

१) भीमराव का विवाह किसके साथ हुआ?

२) भीमराव बंबई के किस कालेज में दाखिल हो गए?

३) केलुस्कर गुरुजी भीमराव को किस महाराजा के पास ले गये?

४) महाराजा ने भीमराव की उच्च शिक्षा के लिए कितने रुपयों की छात्रवृत्ति स्वीकृत कर दी?

५) भीमराव जी ने बी.ए. की परीक्षा किस वर्ष पास की?

(आ)

५३) शैक्षणिक यात्रा का वर्णन करते हुए अपने मित्र को पत्र लिखिए। 1 X 5 = 5

अथवा

चार दिन का अवकाश माँगते हुए अपने प्रधानाचार्य को एक प्रार्थना पत्र लिखिए।

(इ) हिन्दी में अनुवाद कीजिए : 5 X 1 = 5

५४) क) ಭಾರತವು ಶ್ರೀಮಂತ ಸಂಸ್ಕೃತಿಯ ದೇಶವಾಗಿದೆ.
India is a rich cultured country.

ख) ವಿದ್ಯಾರ್ಥಿಗಳು ತಮ್ಮ ಗುರುಗಳಿಗೆ ವಿಧೇಯರಾಗಿರಬೇಕು.
Students should be obedient to their teachers.

ग) ಸುಮಿತ್ರಾನಂದನ್ ಪಂತ್‌ರವರು ಪ್ರಕೃತಿಪ್ರೇಮಿಗಳಾಗಿದ್ದರು.
Sumitranandan Pant was a lover of nature.

घ) ಕನ್ನಡವು ನಮ್ಮ ರಾಜ್ಯ ಭಾಷೆಯಾಗಿದೆ.
Kannada is our State language.

ङ) ಕಳೆದು ಹೋದ ಸಮಯವು ಎಂದೂ ಮರಳಿ ಬರುವುದಿಲ್ಲ.
Time lost is never regained.

* * * * * *

BLUE PRINT OF MODEL QUESTION PAPER

SUBJECT : HINDI (हिन्दी) | **BLUE PRINT OF MODEL QUESTION PAPER** | **DURATION : 3 HRS. 15 MINS.**

TEACHING HOURS : 120 | **YEAR : I P.U.C** | **MAX. MARKS : 100**

COURSE / SUB. CODE : 03

OBJECTIVES →		NO.OF HOURS ALLOTTED	MARKS ALLOTTED	KNOWLEDGE			COMPREHENSION			EXPRESSION			APPRECIATION			TOTAL			Time required to answer the Questions
QUESTION CARRYING MARKS →				VSA	SA	ET	VSA	SA	ET	VSA	SA	ET	VSA	SA	ET	VSA	SA	ET	
UNITS/SUB UNITS ↓				1	3	4/5	1	3	4/5	1	3	4/5	1	3	4/5	1	3	4/5	
	गद्य भाग																		प्रश्न – पत्र पढ़ने के लिए– 15 मिनट गद्य भाग– 55 मिनट
1	बड़े घर की बेटी	5	5	1			1				1					2	1		
2	युवाओं से	4	3					1									1		
3	निन्दा रस	4	4	1				1*								1			
4	बिन्दा	4	5	1			1				1*					2			
5	बाबासाहेब डॉ.अंबेडकर	3	3					1									1		
6	दिल का दौरा और एनजाइना	4	1	1												1			
7	मेरी बद्रीनाथ यात्रा	4	4				1				1					1	1		
8	नालायक	4	4	1				1*								1			
9	राष्ट्र का स्वरूप	4	4	1							1*					1			
10	रिहर्सल	4	4				1	1								1	1		
	पद्य भाग																		पद्य भाग– 40 मिनट
11	कबीरदास के दोहे	3	4									1						1	
12	तुलसीदास के दोहे	3	1	1												1			
13	मीराबाई के पद	2	3					1									1		
14	शरण वचनामृत	3	1	1												1			
15	रसखान के सवैये	2	4									1*							
16	कुटिया में राजभवन	2	1	1												1			
17	तोड़ती पत्थर	2	3					1									1		
18	उल्लास	2	4									1						1	
19	तुम गा दो, मेरा गान अमर हो जाए	2	4	1				1*								1			
20	प्रतिभा का मूल बिन्दु	3	1	1												1			
21	तुम आओ मन के मुग्ध मीत	2	4									1*							
22	मत घबराना	2	1	1												1			
23	अभिनंदनीय नारी	2	3					1*											

	अपठित भाग (कहानियाँ)																		
24	मधुआ	3	4	1				1								1	1		अपठित भाग – 30 मिनट
25	श्मशान	3	4	1				1								1	1		
26	खून का रिश्ता	4	4	1				1*								1			
27	शीत लहर	3	4	1				1*								1			
28	सिलिया	3	4	1				1								1	1		
29	दोपहर का भोजन	4	4	1				1*								1			
	व्याकरण तथा रचना																		व्याकरण तथा रचना–45 मिनट
30	वाक्य शुद्धि	3	5							5						5			
31	रिक्त स्थान की पूर्ति	3	5				5									5			
32	मुहावरे	3	4	4												4			
33	काल परिवर्तन	3	3							3						3			
34	लिंग	2	2	2												2			
35	वचन	2	2	2												2			
36	समानार्थक शब्द	2	2	2												2			
37	विलोम शब्द	2	2	2												2			
38	अपठित गद्यांश	3	5				5									5			
39	पत्र लेखन	3	10									2(1)						1	पुनरावर्तन 10 मिनट
40	अनुवाद	4	5										5			5			
				30			14	24		08	06	13	05			57	30	13	
		120	140	30			38			27			05			100	MARKS		

TOTAL | Hrs. | MARKS

KNOWLEDGE = 30%
COMPREHENSION = 38%
EXPRESSION = 27%
APPRECIATION = 5%

WEIGHTAGE TO DIFFICULTY LEVEL
EASY = 33%
AVERAGE = 38%
DIFFICULT = 29%